ISSN:0975-4431
RNI:MPHIN/2009/29572

नवीन सामाजिक शोध

नवीन सामाजिक शोध

अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

NAVEEN SAMAJIK SHODH

International Monthly Research Journal

वर्ष-8 अंक-6 (कुल अंक-90) अगस्त 2016

मूल्य - 100 रूपये

International Research Journal
Research Journal Useful for
Social Development

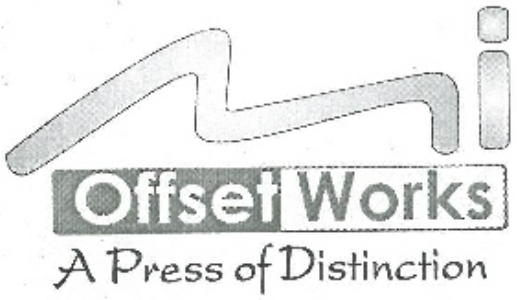

9893086017
9993673675
8085556284

Offset Works

A Press of Distinction

एम. आई. आफसेट वर्क्स

सभी प्रकार के मल्टीकलर पोस्टर, पम्पलेट,
ब्रोशर, बैनर, दैनिक/साप्ताहिक समाचार
पत्रों एवं मासिक पत्रिकाओं
की आफसेट मशीन द्वारा
छपाई उचित दामों पर की जाती है।

एक बार अवश्य पधारें

कार्यालय 105, बजाज काम्पलेक्स, चिकलोद रोड, जहांगीराबाद, भोपाल

प्रधान कार्यालय : 91, रशीदिया स्कूल के पास, बरखेड़ी, भोपाल

mioffset@yahoo.com, mioffset@gmail.com

अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

नवीन सामाजिक शोध

वर्ष-8 अंक-6 (कुल अंक 90) अगस्त 2016
R.N.I. M.P.HIN/2009/29572 ISSN-0975-4431
संपादकीय कार्यालय : 25, रूपनगर कालोनी, जे.के. रोड,
भोपाल-462041 (म.प्र.) दूरभाष : 09300279796, 09425704990
Email : naveensamajikshodh@yahoo.com
Website : www.naveensamajikshodh.com

संस्थापक प्रधान सम्पादक
स्व.डॉ.जी.सी. सक्सेना

प्रधान सम्पादक
राजेन्द्र सक्सेना

प्रबंध संपादक
अभिजीत सक्सेना

संपादक
श्रीमती सविता सक्सेना

उपसंपादक
डॉ.संजय अग्रवाल (चिकित्सक)
डॉ. संतोष धुर्वे (समाजशास्त्री)
डॉ. विजय दुबे (वाणिज्य)ग्वा.

वरिष्ठ शोध अधिकारी
डॉ. कुसुमा भारद्वाज

शोध अधिकारी
डॉ. ममता दुबे ग्वालियर
श्रीमती रितू मेहरा

ग्राफिक्स
तनवीर कुरेशी

सलाहकार संपादक
राजेश सक्सेना

विदेशों में क्षेत्रीय कार्यालय : (विदेशी विषय विशेषज्ञ संपादक)

1. डॉ. राम भारद्वाज चिकित्सक
पो.बॉ. नं. 361, पोस्टल कोड नं. 319, सहम सुलतानेट ऑफ ओमान

2. प्रो. डॉ. सुधाकर कोटा (अर्थशास्त्री)
प्रोफेसर इकोनॉमिक्स एण्ड मार्केटिंग, स्काईलाईन, युनिवर्सिटी शारजाह यूएई

3. कविता शुक्ला असिस्टेंट प्रोफेसर,
111, शेख रसीद बिल्डिंग, शेख जायद रोड, यू.ए.ई. दुबई

4. डॉ. नमिता चौहान समाजशास्त्री,
आस्ट्रेलिया

5. डॉ. प्रिन्स डेविड दंत चिकित्सक
11, ओलब्रेस्ट एवेन्यू, माउंट रास्किल, ओकलैण्ड 1041, न्यूजीलैण्ड

6. श्री सजग चतुर्वेदी, स्टेनफोर्ड, यूनिवर्सिटी थाईलैण्ड

7. श्रीमती ऋति चतुर्वेदी, कनाडा

8. श्रीमती प्रतिभा, कनाडा

9. डॉ. उमेश रस्तोगी, लंदन

सहयोग राशि : देश में : साधारण अंक 100/-वार्षिक : 1000/-
आजीवन सदस्यता: 10000/
विदेशों में : साधारण अंक : 18 डॉलर, वार्षिक : 180 डॉलर
सारे भुगतान (मनीआर्डर/चैक/ड्रॉफ्ट) नवीन सामाजिक शोध के नाम से किए जावेंगे। चैक से भुगतान करने पर रू.30-अतिरिक्त भेजें।

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक-राजेन्द्र सक्सेना द्वारा एम.आई आफसेट वर्क्स, 91, रशीदिया स्कूल के पास, बरखेड़ी, भोपाल-8 द्वारा मुद्रित एवं 25, रूपनगर कालोनी, जे.के. रोड, भोपाल-462023 (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक-श्रीमती सविता सक्सेना

सभी लेखों में लेखकों के अपने मौलिक विचार है। संपादक अथवा संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। हमारा संपादक मंडल पूर्णत अवैतनिक एवं अव्यावसायिक है। विवाद की स्थिति में सभी विवादों का न्यायक्षेत्र भोपाल रहेगा।

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

नवीन सामाजिक शोध

इस अंक में

1. सुभाष चन्द्र बोस का व्यक्तित्व एवं विचार.....सुरेश कुमार विमल - 6
2. नगरीय पंचायत और ग्राम पंचायत के अधिकार.....अजय कौशिक - 15
3. पंचायती राज व्यवस्था एवं ग्राम प्रशासन एक अध्ययन.....अजय कौशिक - 21
4. मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित.....डॉ. मो. मतीन खान - 30
5. आदिवासी कविता के विविध परिदृश्य.....ललिता कु. मीणा - 38
6. महिला साक्षरता एवं विकास आज की आवश्यकता.....कविता रायकवार - 45
7. रूपये के गिरते मूल्य का भारत पर प्रभाव.....डॉ. पापिया चतुर्वेदी - 53
8. कृषि में उर्वरकों की भूमिका : एक अध्ययन.....डॉ. भेरूलाल चौरडिया - 62
9. म.प्र. राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम का बीज .....श्रीमती मीना कीर - 68
10. पंचायती राज व्यवस्था एक अध्ययन.....डी एन यादव - 74
11. Subhas Chandra Bose.....Suresh Kumar Vimal - 80
12. Organic Compounds an its structural.....Ashok Soni - 98
13. Discovery of an atom and Concepts of atopic.....Ashok Soni - 103
14. Islamic Studies s an at Jamia Millia Islamia.....Javed Akhatar - 109
15. गांधीजी के विचार दर्शन का आधार.....डॉ क्रांति जैन - 119

सलाहकार मंडल

- **प्रो. डॉ. आई.एस. चौहान,** पूर्व कुलपति, बरकतुल्लाह एवं भोज विश्वविद्यालय, भोपाल–म.प्र.। फोन : 0755–2424777
- **प्रो. डॉ. विनोद पी. सक्सेना,** पूर्व कुलपति, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर म.प्र.। फोन : 0755–2628055
- **प्रो. डॉ. संतोष कुमार श्रीवास्तव,** पूर्व कुलपति, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर–म.प्र.।
- **प्रो. डॉ. राजपाल सिंह,** सदस्य, सलाहकार यूजीसी (उच्च शिक्षा) भारत सरकार। मो. 9425028689
- **डॉ. के. के. तिवारी** शिक्षाविद्, राज्यपाल अधिकृत ई.सी.सदस्य डीएवीवी इंदौर मो. **9893014415**
- **वरिष्ठ वकील श्री खलीलउल्लाह खान,** पूर्व चेयरमेन, मध्यप्रदेश मानव अधिकार आयोग भोपाल–म.प्र.। मो. 9826225266
- **श्री आई.बी. सिंह,** पूर्व निदेशक, ग्रामोद्योग विश्वविद्यालय, चित्रकूट–म.प्र.। मो. 9329138005
- **डॉ. ललित श्रीवास्तव, नेत्र विशेषज्ञ,** अध्यक्ष, मध्यप्रदेश डॉक्टर्स एसोसिएशन, भोपाल–म.प्र.। मो. 9827007500

संपादक मंडल

- **प्रो. संजय एस. अग्रवाल,** विभागाध्यक्ष, पीपुल्स मेडीकल कालेज
- **प्रो. अलका डेविड,** विभागाध्यक्ष,गृह विज्ञान, शा.सरोजनी नायडू कालेज,
- **प्रो. अरविंद चौहान,** बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल।
- **प्रो.आर.शंकर,** विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र, भारतीदर्शन विश्वविद्यालय, तिरूचरापल्ली–तमिलनाडु (620024)।
- **प्रो.परवेज अहमद अब्बासी,** विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, वी.एन.एस.जी. विश्वविद्यालय सूरत गुजरात,।
- **डॉ0 कुमारी चित्रा शर्मा** संत हिरदाराम कन्या महाविद्यालय, भोपाल
- **प्रो.डॉ. कामिनी जैन,** प्राचार्य शास. स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, पिपरिया
- **प्रो. आभा चौहान,** विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग, जे.एण्ड के.।
- **डॉ. वंदना बक्शी,** सहायक प्राध्यापक, अंग्रेजी विभाग एक्सीलेंस कालेज, कोलार रोड, भोपाल।
- **डॉ. दिनेश परमार,** अनुवांशिकी विभाग, ब.वि., भोपाल।
- **डॉ. सुमंगला पटेरिया,** सहायक प्राध्यापक अंग्रेजी विभाग। एक्सीलेंस कालेज, कोलार रोड, भोपाल
- **डॉ. आरती श्रीवास्वत,** सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग शासकीय कॉलेज नसरूल्लागंज।
- **डॉ.जितेन्द्र कुमार,** एसोसिएट प्रोफेसर, फैकल्टी आफ कामर्स एंड मैनेजमेंट, जी.जी.डी. एस.डी. (पीजी) कालेज, पलवल।
- **डॉ. कुसुमा भारद्वाज,** स.प्रा.,एक्सीलेंस कालेज, कोलार रोड, भोपाल।
- **डॉ. विपिन व्यास,** व्याख्याता, लिमनोलॉजी, ब.वि., भोपाल।
- **श्री अजय बिसारिया,**व्याख्याता, हिंदी विभाग, अ.मु.वि.,अलीगढ़–उ.प्र.।
- **डॉ. संदीप कुमार मल्होत्रा,** विभागाध्यक्ष गणित शा. संजय गांधी स्मृति स्नाकोत्तर, महाविद्यालय, गंजबासोदा म.प्र.
- **डॉ. विश्वनाथ मिश्रा,** पूर्व प्राचार्य (समाजशास्त्र) कालीचरन पी.जी. कालेज, लखनऊ
- **इंजि. रोहन गुप्ता,** एम–2/5, बी.डी.ए. कालोनी, लालघाटी, भोपाल
- **डॉ. अमित कुल्हार,** जिला पंचायत भोपाल

सम्पादकीय

अरुणाचल पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला भाजपा और मोदी सरकार के लिए एक बड़ा झटका है। चूंकि इसके पहले उत्तराखंड में राष्ट्रपति शासन लगाने के केंद्र के फैसले को भी खारिज किया जा चुका है इसलिए कांग्रेस और अन्य विपक्षी दलों की ओर से मोदी सरकार की घेरेबंदी किया जाना स्वाभाविक है, लेकिन इस सबके बावजूद इसमें संदेह है कि इस फैसले से उन स्थितियों का निराकरण हो सकेगा जिनके चलते उत्तराखंड और अरुणाचल की सरकारें अस्थिरता की चपेट में आईं। अरुणाचल में कांग्रेस के नेतृत्व वाली नबाम तुकी सरकार इसलिए संकट में आई थी, क्योंकि कांग्रेसी विधायकों ने ही उनके खिलाफ बगावत कर दी थी। चूंकि विधानसभा अध्यक्ष मुख्यमंत्री के भाई ही थे इसलिए उन्होंने खास तौर पर सत्तापक्ष को राहत देने वाले फैसले लिए। सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्णय में अरुणाचल के राज्यपाल के फैसलों को जिस तरह उनके अधिकार क्षेत्र से बाहर और असंवैधानिक करार दिया उससे अन्य राज्यपालों को सचेत हो जाना चाहिए। उन्हें सचेत करने का काम केंद्र सरकार को भी करना चाहिए, क्योंकि यह एक संवैधानिक पद है और इस पद की गरिमा पर बार-बार आंच आना ठीक नहीं। केंद्र सरकार को यह भी देखना होगा कि अरुणाचल के राज्यपाल के फैसलों पर आगे बढ़ने के पहले उनकी सही तरह समीक्षा क्यों नहीं की जा सकी? इसमें दो राय नहीं हो सकती कि सुप्रीम कोर्ट का फैसला इस दृष्टि से ऐतिहासिक है कि पहली बार सत्ता से बाहर हो चुकी सरकार को फिर से बहाल किया गया, लेकिन अगर नबाम तुकी बहुमत साबित नहीं कर सके तो? यह वह सवाल है जिसका जवाब ही सुप्रीम कोर्ट के फैसले की वास्तविक महत्ता रेखांकित करेगा। एक तरह से अरुणाचल का फैसला अभी शेष है।। सुप्रीम कोर्ट ने यह पाया कि अरुणाचल के राज्यपाल ने अनावश्यक सक्रियता दिखाई, लेकिन उसने विधानसभा अध्यक्ष के बारे में केवल इतना कहा कि उन्हें निष्पक्ष रहना चाहिए। इसमें संदेह है कि इस तरह की नसीहत से विधानसभा अध्यक्ष निष्पक्षता का परिचय देने लगेंगे। आम तौर पर विधानसभा अध्यक्ष वही करते जो सत्तारूढ़ दल चाहते हैं और यही कारण है कि सत्तापक्ष के असंतुष्ट विधायक उनकी मनमानी का शिकार होते हैं। जब तक विधानसभा अध्यक्ष के अधिकारों को सही तरह से परिभाषित नहीं किया जाता, वैसी परिस्थितियों से बचना मुश्किल है जैसी उत्तराखंड और अरुणाचल प्रदेश में उत्पन्न हुई। सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद कांग्रेस का उत्साहित होना स्वाभाविक है, लेकिन वह इसकी अनदेखी नहीं कर सकती कि नबाम तुकी के लिए बहुमत साबित करना आसान नहीं। अगर वह बहुमत में होते तो उन्हें सत्ता से बाहर ही नहीं होना पड़ता। हैरत नहीं कि अरुणाचल में शक्ति परीक्षण के पहले विधायकों की खरीद-फरोख्त का सिलसिला चल निकले। यदि ऐसा होता है तो इससे और चाहे जो कुछ हो, लोकतंत्र की जीत तो नहीं ही होने वाली। अच्छा होता कि सुप्रीम कोर्ट विधानसभा अध्यक्ष के अधिकारों और फैसलों की भी गहन समीक्षा करता, क्योंकि बहुमत खो चुकी सरकार की फिर से बहाली आदर्श स्थिति नहीं। अरुणाचल में शक्ति परीक्षण के बाद जो भी स्थिति बने, यह भी ठीक नहीं कि अनुच्छेद 356 का इस्तेमाल बार-बार विवाद का विषय बन रहा है। ऐसा तब हो रहा है जब इस अनुच्छेद के इस्तेमाल पर सुप्रीम कोर्ट को कई बार समीक्षा करनी पड़ी है। क्या यह बेहतर नहीं होगा कि इस अनुच्छेद को दुरुस्त करने के साथ ही उन उपायों पर भी विचार किया जाए जिससे राज्य सरकारें अस्थिरता से बची रहें?

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

सुभाष चन्द्र बोस का व्यक्तित्व एवं विचार

सुरेश कुमार विमल
प्राचार्य शासकीय महाविद्यालय
भैसदेही बैतूल

देश की आजादी में अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाले अनेक महापुरुष हुए हैं। ऐसी ही महान विभूतियों में से एक थे सुभाष चन्द्र बोस, महात्मा गाँधी ने नेताजी को देशभक्तों का देशभक्त कहा था।

सुभाषचन्द्र बोस का जन्म 23 जनवरी, 1897 को उड़ीसा के कटक शहर में हुआ था। सुभाष का ताल्लुक एक कुलीन परिवार से था, उनके पिता का नाम जानकीनाथ बोस और माँ का नाम प्रभावती था। जानकीनाथ बोस कटक शहर के मशहूर वकील थे।

स्वामी विवेकानंद को अपना आर्दश मानने वाले सुभाष चन्द्र बोस जब भारत आए तो रविन्द्रनाथ टैगोर के कहने पर सबसे पहले गाँधी जी से मिले थे । गाँधी जी से पहली मुलाकात मुम्बई में 20 जुलाई 1921 को हुई थी। गाँधी जी की सलाह पर सुभाष कोलकता में दासबाबू के साथ मिलकर आजादी के लिये प्रयास करने लगे। जब दासबाबू कोलकता के महापौर थे, तब उन्होने सुभाष चन्द्र बोस को महापालिका का प्रमुख कार्यकारी अधिकारी बनाया था। अपने कार्यकाल के दौरान सुभाष बाबु ने कोलकता के रास्तों का अंग्रेजी नाम बदलकर भारतीय नाम कर दिया था ।

संभ्रात परिवार के होने के बावजूद भी उनका झुकाव सांसारिक धन, वैभव या पदवी की ओर नही था। मित्रगणं उन्हे सन्यासी पुकारते थे। सुभाष चन्द्र बोस को उनके घर वाले विलायत पढने के लिये इस आशा से भेज था कि सुभाष आई. सी. एस. की उच्च परिक्षा पास करके बडी सरकारी नौकरी करेंगे और परिवार की समृद्धि एवं यश की रक्षा करेंगे किन्तु जिस समय वे विलायत में थे, उसी समय अंग्रेजी सरकार के अन्यायपूर्ण नियमों के विरुद्ध गाँधी जी ने सत्याग्रह संग्राम छेड हुआ था। सरकार के साथ असहयोग करके उसका संचालन कठिन बनाना, इस संग्राम की अपील थी। गाँधी जी से प्रभावित होकर सुभाष अपनी प्रतिष्ठित नौकरी छोडकर असहयोग आंदोलन में शामिल हो गये। आई. सी. एस. की परिक्षा पास करके भी सरकारी नौकरी छोड देने वाले सबसे पहले व्यक्ति

सुभाष चन्द्र बोस थे। अनेक इष्ट-मित्रों ने और स्वयं ब्रिटिश सरकार के भारत मंत्री ने उनको ऐसा न करने के लिये बहुत समझाया , किन्तु कलेक्टर और कमिश्नर बनने के बजाय सुभाष चन्द्र बोस को मातृ भूमि का सेवक बनना ज्यादा श्रेष्ठ लगा।

बंगाल के श्रेष्ठ नेता चितरंजन दास गाँधी जी के आह्वान पर अपनी लाखों की बैरस्टरी का मातृ भूमि के लिये त्याग कर चुके थे। सुभाष बाबु के त्याग को सुनकर उन्हे बहुत खुशी हुई। चितरंजन दास देशबन्धु के त्याग से सुभाष भी बहुत प्रभावित हुए थे। सुभाष बाबु देशबन्धु को अपना राजनीतिक गुरू मानते थे और उनके प्रति अत्यंत आदर और श्रद्धा का भाव रखते थे।

सुभाष चन्द्र बोस के ओजस्वी भाषणों से हजारों विद्यार्थी, वकील, सरकारी नौकर गाँधी जी के आंदोलन में शामिल हो गये । सुभाष बाबु के तेज प्रवाह से डर कर अंग्रेज सरकार ने चितरंजन दास और सुभाष को 6 महिने कैद की सजा सुनाई।

सुभाष, भारत माँ की आजादी के साथ ही अनेक सामाजिक कार्यों में दिल से जुडे थे। बंगाल की भयंकर बांढ में घिरे लोगों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाना, उनके लिये भोजन वस्त्र आदि का प्रबंध स्वयं करते थे। उनके परिश्रम को देखकर सरकारी अधिकारी भी प्रशंसा किये बिना न रह सके। समाज-सेवा का कार्य नियमित रूप से चलता रहे इसलिये उन्होने युवक-दल की स्थापना की थी। कुछ समय पश्चात युवक दल ने किसानों के हित में कार्य आरंभ किया जिसका लक्ष्य, किसानो को उनका हक दिलाना था।

सुभाष बाबु के प्रभाव से अंग्रेजी सरकार भयभीत हो गई । अंग्रेजों ने उन पर आरोप लगाया कि वे बम और पिस्तौल बनाने वाले क्रांतिकारियों के साथ हैं। उन्हे कुछ दिन कोलकता की जेल में रखने के बाद मांडले(वर्मा) की जेल में भेज दिया गया, जहाँ लगभग 16, 17 वर्ष पहले लाला लाजपत को एवं लोकमान्य बाल गंगाधर को रखा गया। अपने सार्वजनिक जीवन में सुभाष बाबू को कुल ग्यारह बार कारावास हुआ था। राजनीतिक प्रेरणास्रोत देशबन्धु चितरंजन दास के निधन का समाचार, सुभाष बाबु को मांडले जेल मे मिला, ये उनके लिये बहुत ही दुख:दायी समाचार था। 11 महिने की कारावास में उनको इतनी तकलीफ नही हुई थी, जितनी इस खबर से हुई। देशबंधु चितरंजन दास की कही बात बंगाल के जल, बंगाल की मिट्टी, में एक चितरंजन सत्य निहित है। से सुभाष चन्द्र बोस को कोलकता से दूरी का एहसास होने लगा था। फिर भी जेल में रहने का उनको दु:ख नही था, उनका मानना था कि भारत माता के लिये कष्ट सहना गौरव की बात है। मांडले जेल में अधिक बीमार हो जाने के कारण सरकार ने उनको छोडने का हुक्म दे दिया।.

कोलकता में वापस भारत की आजादी के लिये कार्य करने लगे। इसी दौरान क्रांतिकारी नेता यतींद्रनाथ ने लाहौर जेल में 63 दिन के भूख हडताल करके प्राण त्याग दिये । शहीद यतींद्रनाथ की शव यात्रा को पूरे जोश के साथ निकाला गया । इस अवसर पर सुभाष बाबु अंग्रेजों को खिलाफ बहुत ही जोशिला भांषण दिया , जिस वजह से

उनको पुन: गिरफ्तार कर लिया गया।

इस प्रकार जब कई बार जेल भेज कर सरकार थक गई तो उनको नजरबंद कर दिया गया। इस हालत में सुभाष बाबु का स्वास्थ पुन: खराब हो गया। जेल से रिहा करने के बजाय उनको इलाज के लिये स्वीट्जरलैंड भेज दिया गया। विदेश में रह कर भी देश की स्वाधीनता के लिये कार्य करते रहे।

पिता की बिमारी की खबर मिलने पर सरकार के मना करने पर भी भारत आये लेकिन जहाज से उतरते ही उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया और इस शर्त पर छोडे गये कि जब तक भारत में रहेंगे किसी राजनीतिक गतिविधी में भाग नही लेंगे। पिता के अंतिम क्रियाकर्मों के बाद उन्हे विदेश वापस जाना पडा।

दो वर्ष बाद वापस भारत आये किन्तु पुन: पकड लिये गये और जब सभी प्रान्तों में कांग्रेसी सरकार बन गई तब जेल से रिहा हो पाये। 1938 में कांग्रेस के सभापति बनाये गये। रविन्द्रनाथ टैगोर, प्रफुलचन्द्र राय, मेधनाद साह जैसे वैज्ञानिक भी सुभाष की कार्यशैली के साथ थे। 1938 में गाँधी जी ने कांग्रेस अध्यक्षपद के लिए सुभाष को चुना तो था, मगर गाँधी जी को सुभाष बाबू की कार्यपद्धती पसंद नहीं आयी। इसी दौरान युरोप में द्वितीय विश्वयुद्ध के बादल छा गए। सुभाष बाबू चाहते थे कि इंग्लैंड की इस कठिनाई का लाभ उठाकर, भारत का स्वतंत्रता संग्राम अधिक तेज कर दिया जाए। उन्होने अपने अध्यक्षपद के कार्यकाल में इस तरफ कदम उठाना भी शुरू कर दिया था। गाँधी जी इस विचारधारा से सहमत नहीं थे।भगत सिहं को फासी से न बचा पाने पर भी सुभाष, गाँधी जी एवं कांग्रेस से नाखुश थे। इन मतभेदों के कारण आखिरकार सुभाष चन्द्र बोस ने कांग्रेस पार्टी छोड दी ।

1940 में रामगढ कांग्रेस के अधिवेशन के अवसर पर सुभाष बाबू ने समझौता विरोधी कॉनफ्रेस का आयोजन किया और उसमें बहुत जोशीला भांषण दिया । ब्लैक-हॉल स्मारक को देश के लिये अपमानजनक बतला कर उसके विरुद्ध आन्दोलन छेड दिये। इससे अंग्रेज सरकार ने उन्हे गिरफ्तार कर जेल भेज दिया। जहाँ उन्होने भूख हडताल कर दी आखिर अंग्रेजों को उन्हे छोडना पडा और उनकी माँग के आगे झुकना पडा, जिससे ब्लैक-हॉल स्मारक को हटाना स्वीकार किया गया।

सन् 1941 में जब कोलकता की अदालत में मुकदमा पेश होना था, तो पता चला कि वह घर छोडकर कहीं चले गये हैं । दरअसल सुभाष बाबु वेष बदल कर पहरेदारों के सामने से ही निकल गये थे। भारत छोडकर वह सबसे पहले काबुल गये तद्पश्चात जर्मनी में हिटलर से मिले। उन्होने जर्मनी में भारतीय स्वतंत्रता संगठन और आजाद हिंद रेडिओ की स्थापना की थी। जर्मनी से गोताखोर नाव द्वारा जापान पहुँचे। । अंग्रेज़ों के खिलाफ लड़ने के लिये, उन्होंने जापान के सहयोग से आज़ाद हिन्द फौज का गठन किया और युवाओं का आह्वान करते हुए कहा तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हे आजादी दुंगा।

आज़ाद हिन्द फ़ौज में औरतो के लिए झाँसी की रानी रेजिमेंट भी बनायी गयी। अपनी फौज को प्रेरित करने के

लिए नेताजी ने चलो दिल्ली का नारा दिया। सैनिकों का हौसला बुलंद करने के लिये, उनके द्वारा दिया गया जय हिन्द का नारा, भारत का राष्ट्रीय नारा बन गया ।

दोनो फौजो ने अंग्रेजों से अंडमान और निकोबार द्वीप जीत लिए। यह द्वीप आर्जी-हुकुमत-ए-आजाद-हिंद के अनुशासन में रहें। नेताजी ने इन द्वीपों का शहीद और स्वराज द्वीप नाम से नामकरण किया । दोनो फौजो ने मिलकर इंफाल और कोहिमा पर आक्रमण किया। लेकिन बाद में अंग्रेजों का पलडा भारी पडा और दोनो फौजो को पीछे हटना पडा। सुभाष चन्द्र बोस आजादी के लिये निरंतर प्रयास करते रहे। 1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध में जापान की हार के बाद, नेताजी को नया रास्ता ढूँढना जरूरी हो गया । उन्होने रूस से सहायता माँगने का निश्चय किया।

अत: 18 अगस्त 1945 को नेताजी हवाई जहाज से मांचुरिया की तरफ जा रहे थे। इस सफर के दौरान वे लापता हो गए। इस दिन के बाद वे कभी किसी को दिखाई नहीं दिये। नेताजी कहाँ लापता हो गए और उनका आगे क्या हुआ, यह भारत के इतिहास का सबसे बडा अनुत्तरित रहस्य हैं।

इस प्रकार देश के महान आत्म बलिदानी के जीवन का अंत असमय हो गया। अल्प समय में भारतीयों के मानस पटल पर एक अमिट छाप छोड गये। सुभाष चन्द्र बोस ने 18 वर्ष की आयु में अपने पिता से कहा था कि- विवेकानंद का आदर्श ही मेरा आदर्श है।

स्वाधीनता के पुजारी सुभाष चन्द्र बोस ने भारत माता की आजादी के लिये अपना सर्वस्व , अपार योग्यता और कार्यशक्ति मातृभूमि के चरणों में अर्पित कर दिया । त्याग और बलिदान की इस प्रतिमूर्ति को कोटी-कोटी प्रणाम।

सुभाष चन्द्र बोस जन्म 23 जनवरी 1897, मृत्यु- 18 अगस्त 1945) जो नेता जी के नाम से भी जाने जाते हैं, भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के अग्रणी नेता थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान, अंग्रेज़ों के खिलाफ लड़ने के लिये, उन्होंने जापान के सहयोग से आज़ाद हिन्द फौज का गठन किया था। उनके द्वारा दिया गया जय हिंन्द का नारा भारत का राष्ट्रीय नारा बन गया है। तुम मुझे खून दो मैं तुम्हे आजादी दूंगा का नारा भी उनका उस समय अत्यधिक प्रचलन में आया।

कुछ इतिहासकारों का मानना है कि जब नेता जी ने जापान और जर्मनी से मदद लेने की कोशिश की थी तो ब्रिटिश सरकार ने अपने गुप्तचरों को 1941 में उन्हें ख़त्म करने का आदेश दिया था।

नेता जी ने 5 जुलाई 1943 को सिंगापुर के टाउन हाल के सामने सुप्रीम कमाण्डर के रूप में सेना को सम्बोधित करते हुए दिल्ली चलो! का नारा दिया और जापानी सेना के साथ मिलकर ब्रिटिश व कामनवेल्थ सेना से बर्मा सहित इम्फाल और कोहिमा में एक साथ जमकर मोर्चा लिया।

21 अक्टूबर 1943 को सुभाष बोस ने आजाद हिन्द फौज के सर्वोच्च सेनापति की हैसियत से स्वतन्त्र भारत की

अस्थायी सरकार बनायी जिसे जर्मनी, जापान, फिलीपींस, कोरिया, चीन, इटली, मान्चुको और आयरलैंड ने मान्यता दी। जापान ने अंडमान व निकोबार द्वीप इस अस्थायी सरकार को दे दिये। सुभाष उन द्वीपों में गये और उनका नया नामकरण किया।

1944 को आजाद हिन्द फौज ने अंग्रेजों पर दोबारा आक्रमण किया और कुछ भारतीय प्रदेशों को अंग्रेजों से मुक्त भी करा लिया। कोहिमा का युद्ध 4 अप्रैल 1944 से 22 जून 1944 तक लड़ा गया एक भयंकर युद्ध था। इस युद्ध में जापानी सेना को पीछे हटना पड़ा था और यही एक महत्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुआ।

6 जुलाई 1944 को उन्होंने रंगून रेडियो स्टेशन से महात्मा गांधी के नाम एक प्रसारण जारी किया जिसमें उन्होंने इस निर्णायक युद्ध में विजय के लिये उनका आशीर्वाद और शुभकामनायें माँगीं।[4]

नेताजी की मृत्यु को लेकर आज भी विवाद है। जहाँ जापान में प्रतिवर्ष 18 अगस्त को उनका जन्म दिन धूमधाम से मनाया जाता है वहीं भारत में रहने वाले उनके परिवार के लोगों का आज भी यह मानना है कि सुभाष की मौत 1945 में नहीं हुई। वे उसके बाद रूस में नज़रबन्द थे। यदि ऐसा नहीं है तो भारत सरकार ने उनकी मृत्यु से सम्बंधित दस्तावेज़ अब तक सार्वजनिक क्यों नहीं किये?

16 जनवरी 2014 (गुरुवार) को कलकत्ता हाई कोर्ट ने नेताजी के लापता होने के रहस्य से जुड़े खुफिया दस्तावेजों को सार्वजनिक करने की माँग वाली जनहित याचिका पर सुनवाई के लिये स्पेशल बेंच के गठन का आदेश दिया।

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस का जन्म 23 जनवरी सन् 1897 को ओड़िशा के कटक शहर में हुआ था। उनके पिता का नाम जानकीनाथ बोस और माँ का नाम प्रभावती था। जानकीनाथ बोस कटक शहर के मशहूर वकील थे। पहले वे सरकारी वकील थे मगर बाद में उन्होंने निजी प्रैक्टिस शुरू कर दी थी। उन्होंने कटक की महापालिका में लम्बे समय तक काम किया था और वे बंगाल विधानसभा के सदस्य भी रहे थे। अंग्रेज़ सरकार ने उन्हें रायबहादुर का खिताब दिया था। प्रभावती देवी के पिता का नाम गंगानारायण दत्त था। दत्त परिवार को कोलकाता का एक कुलीन परिवार माना जाता था। प्रभावती और जानकीनाथ बोस की कुल मिलाकर 14 सन्तानें थी जिसमें 6 बेटियाँ और 8 बेटे थे। सुभाष उनकी नौवीं सन्तान और पाँचवें बेटे थे। अपने सभी भाइयों में से सुभाष को सबसे अधिक लगाव शरद चन्द्र से था। शरदबाबू प्रभावती और जानकीनाथ के दूसरे बेटे थे। सुभाष उन्हें मेजदा कहते थें। शरदबाबू की पत्नी का नाम विभावती था।

कटक के प्रोटेस्टेण्ट यूरोपियन स्कूल से प्राइमरी शिक्षा पूर्ण कर 1909 में उन्होंने रेवेनशा कॉलेजियेट स्कूल में दाखिला लिया। कॉलेज के प्रिन्सिपल बेनीमाधव दास के व्यक्तित्व का सुभाष के मन पर अच्छा प्रभाव पड़ा। मात्र पन्द्रह वर्ष की आयु में सुभाष ने विवेकानन्द साहित्य का पूर्ण अध्ययन कर लिया था। 1915 में उन्होंने इण्टरमीडियेट की परीक्षा बीमार होने के बावजूद द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण की। 1916 में जब वे दर्शनशास्त्र

(ऑनर्स) में बीए के छात्र थे किसी बात पर प्रेसीडेंसी कॉलेज के अध्यापकों और छात्रों के बीच झगड़ा हो गया सुभाष ने छात्रों का नेतृत्व सम्हाला ज़िसके कारण उन्हें प्रेसीडेंसी कॉलेज से एक साल के लिये निकाल दिया गया और परीक्षा देने पर प्रतिबन्ध भी लगा दिया। 49वीं बंगाल रेजीमेण्ट में भर्ती के लिये उन्होंने परीक्षा दी किन्तु आँखें खराब होने के कारण उन्हें सेना के लिये अयोग्य घोषित कर दिया गया। किसी प्रकार स्कॉटिश चर्च कॉलेज में उन्होंने प्रवेश तो ले लिया किन्तु मन सेना में ही जाने को कह रहा था। खाली समय का उपयोग करने के लिये उन्होंने टेरीटोरियल आर्मी की परीक्षा दी और फोर्ट विलियम सेनालय में रँगरूट के रूप में प्रवेश पा गये। फिर ख्याल आया कि कहीं इण्टरमीडियेट की तरह बीए में भी कम नम्बर न आ जायें सुभाष ने खूब मन लगाकर पढ़ाई की और 1919 में बीए (ऑनर्स) की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। कलकत्ता विश्वविद्यालय में उनका दूसरा स्थान था।

पिता की इच्छा थी कि सुभाष आईसीएस बनें किन्तु उनकी आयु को देखते हुए केवल एक ही बार में यह परीक्षा पास करनी थी। उन्होंने पिता से चौबीस घण्टे का समय यह सोचने के लिये माँगा ताकि वे परीक्षा देने या न देने पर कोई अन्तिम निर्णय ले सकें। सारी रात इसी असमंजस में वह जागते रहे कि क्या किया जाये। आखिर उन्होंने परीक्षा देने का फैसला किया और 15 सितम्बर 1919 को इंग्लैण्ड चले गये। परीक्षा की तैयारी के लिये लन्दन के किसी स्कूल में दाखिला न मिलने पर सुभाष ने किसी तरह किट्स विलियम हाल में मानसिक एवं नैतिक विज्ञान की ट्राइपास (ऑनर्स) की परीक्षा का अध्ययन करने हेतु उन्हें प्रवेश मिल गया। इससे उनके रहने व खाने की समस्या हल हो गयी। हाल में एडमीशन लेना तो बहाना था असली मकसद तो आईसीएस में पास होकर दिखाना था। सो उन्होंने 1920 में वरीयता सूची में चौथा स्थान प्राप्त करते हुए पास कर ली।

इसके बाद सुभाष ने अपने बड़े भाई शरतचन्द्र बोस को पत्र लिखकर उनकी राय जाननी चाही कि उनके दिलो-दिमाग पर तो स्वामी विवेकानन्द और महर्षि अरविन्द घोष के आदर्शों ने कब्जा कर रक्खा है ऐसे में आईसीएस बनकर वह अंग्रेजों की गुलामी कैसे कर पायेंगे? 22 अप्रैल 1921 को भारत सचिव ई0एस0 मान्टेग्यू को आईसीएस से त्यागपत्र देने का पत्र लिखा। एक पत्र देशवन्धु चित्तरंजन दास को लिखा। किन्तु अपनी माँ प्रभावती का यह पत्र मिलते ही सुभाष जून 1921 में मानसिक एवं नैतिक विज्ञान में ट्राइपास (ऑनर्स) की डिग्री के साथ स्वदेश वापस लौट आये।

स्वतन्त्रता संग्राम में प्रवेश और कार्य

कोलकाता के स्वतन्त्रता सेनानी देशबंधु चित्तरंजन दास के कार्य से प्रेरित होकर सुभाष दासबाबू के साथ काम करना चाहते थे। इंग्लैंड से उन्होंने दासबाबू को खत लिखकर उनके साथ काम करने की इच्छा प्रकट की। रवींद्रनाथ ठाकुर की सलाह के अनुसार भारत वापस आने पर वे सर्वप्रथम मुम्बई गये और महात्मा गांधी से मिले। मुम्बई में गान्धीजी मणिभवन में निवास करते थे। वहाँ 20 जुलाई 1921 को गान्धी और सुभाष के बीच पहली

मुलाकात हुई। गान्धीजी ने उन्हें कोलकाता जाकर दासबाबू के साथ काम करने की सलाह दी। इसके बाद सुभाष कोलकाता आकर दासबाबू से मिले।

उन दिनों गान्धी ने अंग्रेज़ सरकार के खिलाफ असहयोग आंदोलन चला रक्खा था। दासबाबू इस आन्दोलन का बंगाल में नेतृत्व कर रहे थे। उनके साथ सुभाष इस आन्दोलन में सहभागी हो गये। 1922 में दासबाबू ने कांग्रेस के अन्तर्गत स्वराज पार्टी की स्थापना की। विधानसभा के अन्दर से अंग्रेज़ सरकार का विरोध करने के लिये कोलकाता महापालिका का चुनाव स्वराज पार्टी ने लड़कर जीता और दासबाबू कोलकाता के महापौर बन गये। उन्होंने सुभाष को महापालिका का प्रमुख कार्यकारी अधिकारी बनाया। सुभाष ने अपने कार्यकाल में कोलकाता महापालिका का पूरा ढाँचा और काम करने का तरीका ही बदल डाला। कोलकाता में सभी रास्तों के अंग्रेज़ी नाम बदलकर उन्हें भारतीय नाम दिये गये। स्वतन्त्रता संग्राम में प्राण न्यौछावर करने वालों के परिवारजनों को महापालिका में नौकरी मिलने लगी।

बहुत जल्द ही सुभाष देश के एक महत्वपूर्ण युवा नेता बन गये। जवाहरलाल नेहरू के साथ सुभाषने कांग्रेस के अन्तर्गत युवकों की इण्डिपेण्डेंस लीग शुरू की। 1928 में जब साइमन कमीशन भारत आया तब कांग्रेस ने उसे काले झण्डे दिखाये। कोलकाता में सुभाष ने इस आन्दोलन का नेतृत्व किया। साइमन कमीशन को जवाब देने के लिये कांग्रेस ने भारत का भावी संविधान बनाने का काम आठ सदस्यीय आयोग को सौंपा। मोतीलाल नेहरू इस आयोग के अध्यक्ष और सुभाष उसके एक सदस्य थे। इस आयोग ने नेहरू रिपोर्ट पेश की। 1928 में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में कोलकाता में हुआ। इस अधिवेशन में सुभाष ने खाकी गणवेश धारण करके मोतीलाल नेहरू को सैन्य तरीके से सलामी दी। गान्धीजी उन दिनों पूर्ण स्वराज्य की माँग से सहमत नहीं थे। इस अधिवेशन में उन्होंने अंग्रेज़ सरकार से डोमिनियन स्टेटस माँगने की ठान ली थी। लेकिन सुभाषबाबू और जवाहरलाल नेहरू को पूर्ण स्वराज की माँग से पीछे हटना मंजूर नहीं था। अन्त में यह तय किया गया कि अंग्रेज़ सरकार को डोमिनियन स्टेटस देने के लिये एक साल का वक्त दिया जाये। अगर एक साल में अंग्रेज़ सरकार ने यह माँग पूरी नहीं की तो कांग्रेस पूर्ण स्वराज की माँग करेगी। परन्तु अंग्रेज़ सरकार ने यह माँग पूरी नहीं की। इसलिये 1930 में जब कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में लाहौर में हुआ तब ऐसा तय किया गया कि 26 जनवरी का दिन स्वतन्त्रता दिवस के रूप में मनाया जायेगा।

26 जनवरी 1931 को कोलकाता में राष्ट्र ध्वज फहराकर सुभाष एक विशाल मोर्चे का नेतृत्व कर रहे थे तभी पुलिस ने उन पर लाठी चलायी और उन्हें घायल कर जेल भेज दिया। जब सुभाष जेल में थे तब गान्धीजी ने अंग्रेज सरकार से समझौता किया और सब कैदियों को रिहा करवा दिया। लेकिन अंग्रेज सरकार ने भगत सिंह जैसे क्रान्तिकारियों को रिहा करने से साफ इन्कार कर दिया। भगत सिंह की फाँसी माफ कराने के लिये गान्धी ने सरकार से बात तो की परन्तु नरमी के साथ। सुभाष चाहते थे कि इस विषय पर गान्धीजी अंग्रेज सरकार के साथ

किया गया समझौता तोड़ दें। लेकिन गान्धी अपनी ओर से दिया गया वचन तोड़ने को राजी नहीं थे। अंग्रेज सरकार अपने स्थान पर अड़ी रही और भगत सिंह व उनके साथियों को फाँसी दे दी गयी। भगत सिंह को न बचा पाने पर सुभाष गान्धी और कांग्रेस के तरिकों से बहुत नाराज हो गये।

1939 में सुभाषचन्द्र बोस का अखिल भारतीय कांग्रेस कमीटी की बैठक में आगमन सौजन्य- टोनी मित्र

अपने सार्वजनिक जीवन में सुभाष को कुल 11 बार कारावास हुआ। सबसे पहले उन्हें 16 जुलाई 1921 में छह महीने का कारावास हुआ।

1925 में गोपीनाथ साहा नामक एक क्रान्तिकारी कोलकाता के पुलिस अधीक्षक चार्लस टेगार्ट को मारना चाहता था। उसने गलती से अर्नेस्ट डे नामक एक व्यापारी को मार डाला। इसके लिए उसे फाँसी की सजा दी गयी। गोपीनाथ को फाँसी होने के बाद सुभाष फूट फूट कर रोये। उन्होंने गोपीनाथ का शव माँगकर उसका अन्तिम संस्कार किया। इससे अंग्रेज़ सरकार ने यह निष्कर्ष निकाला कि सुभाष ज्वलन्त क्रान्तिकारियों से न केवल सम्बन्ध ही रखते हैं अपितु वे उन्हें उत्प्रेरित भी करते हैं। इसी बहाने अंग्रेज़ सरकार ने सुभाष को गिरफ़्तार किया और बिना कोई मुकदमा चलाये उन्हें अनिश्चित काल के लिये म्याँमार के माण्डले कारागृह में बन्दी बनाकर भेज दिया।

5 नवम्बर 1925 को देशबंधु चित्तरंजन दास कोलकाता में चल बसे। सुभाष ने उनकी मृत्यु की खबर माण्डले कारागृह में रेडियो पर सुनी। माण्डले कारागृह में रहते समय सुभाष की तबियत बहुत खराब हो गयी। उन्हें तपेदिक हो गया। परन्तु अंग्रेज़ सरकार ने फिर भी उन्हें रिहा करने से इन्कार कर दिया। सरकार ने उन्हें रिहा करने के लिए यह शर्त रखी कि वे इलाज के लिये यूरोप चले जायें। लेकिन सरकार ने यह स्पष्ट नहीं किया कि इलाज के बाद वे भारत कब लौट सकते हैं। इसलिए सुभाष ने यह शर्त स्वीकार नहीं की। आखिर में परिस्थिति इतनी कठिन हो गयी कि जेल अधिकारियों को यह लगने लगा कि शायद वे कारावास में ही न मर जायें। अंग्रेज़ सरकार यह खतरा भी नहीं उठाना चाहती थी कि सुभाष की कारागृह में मृत्यू हो जाये। इसलिये सरकार ने उन्हें रिहा कर दिया। उसके बाद सुभाष इलाज के लिये डलहौजी चले गये।

1930 में सुभाष कारावास में ही थे कि चुनाव में उन्हें कोलकाता का महापौर चुना गया। इसलिए सरकार उन्हें रिहा करने पर मजबूर हो गयी। 1932 में सुभाष को फिर से कारावास हुआ। इस बार उन्हें अल्मोड़ा जेल में रखा गया। अल्मोड़ा जेल में उनकी तबियत फिर से खराब हो गयी। चिकित्सकों की सलाह पर सुभाष इस बार इलाज के लिये यूरोप जाने को राजी हो गये।

संदर्भ :

Aldrich, Richard J. (2000), Intelligence and the War Against Japan: Britain, America and the Politics of Secret Service, Cambridge, UK: Cambridge University Press, ISBN 978-0-

521-64186-9, retrieved 6 November 2013

Allen, Louis (2012), "The Campaigns in Asia and the Pacific", in John Gooch, Decisive Campaigns of the Second World War, London: Routledge, pp. 162–191, ISBN 978-1-136-28888-3, retrieved 7 November 2013

Bandyopadhya?a, Sekhara (2004), From Plassey to Partition: A History of Modern India, Orient Blackswan, ISBN 978-81-250-2596-2, retrieved 21 September 2013

Bhattacharjee, CS (23 January 2012), "World believes Netaji was married, but not his party", The Sunday Indian, Kolkata, retrieved 13 February 2016

Bayly, Christopher Alan (2012), Recovering Liberties: Indian Thought in the Age of Liberalism and Empire, Cambridge University Press, ISBN 978-1-139-50518-5, retrieved 11 November 2013

Bayly, Christopher; Harper, Timothy (2007), Forgotten Wars: Freedom and Revolution in Southeast Asia, Harvard University Press, ISBN 978-0-674-02153-2, retrieved 21 September 2013

Bayly, Christopher; Harper, Timothy (2005), Forgotten Armies: The Fall of British Asia, 1941–1945, Harvard University Press, ISBN 978-0-674-01748-1, retrieved 22 September 2013

Bhuyan, P. R. (2003), Swami Vivekananda, Atlantic Publishers & Distributors

Bose, Sarmila (2005), "Love in the Time of War: Subhas Chandra Bose's Journeys to Nazi Germany (1941) and towards the Soviet Union (1945)", Economic and Political Weekly, 40 (3): 249–56

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

नगरीय पंचायत और ग्राम पंचायत के अधिकार

अजय कौशिक
सहायक प्राध्यापक राजनीति शास्त्र

प्राचीन काल से ही भारतवर्ष के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन में पंचायत का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। सार्वजनिक् जीवन का प्रत्येक पहलू इसी के द्वारा संचालित होता था।

वैदिक काल में भी पंचायतों का अस्तित्व था। ग्राम के प्रमुख को ग्रामणी कहते थे। उत्तर वैदिक काल में भी यह होता था जिसके माध्यम से राजा ग्राम पर शासन करता था। बौद्धकालीन ग्रामपरिषद् में ग्राम वृद्ध सम्मिलित होते थे। इनके प्रमुख को ग्रामभोजक कहते थे। परिषद् अथवा पंचायत ग्राम की भूमि की व्यवस्था करती थी तथा ग्राम में शांति और सुरक्षा बनाए रखने में ग्रामभोजक की सहायता करती थी। जनहित के अन्य कार्यों का संपादन भी वही करती थी। स्मृति ग्रंथों में भी पंचायत का उल्लेख है। कौटिल्य ने ग्राम को राजनीतिक इकाई माना है। अर्थशास्त्र का ग्रामिक ग्राम का प्रमुख होता था जिसे कितने ही अधिकार प्राप्त थे। अपने सार्वजनिक कर्तव्यों को पूरा करने में वह ग्रामवासियों की सहायता लेता था। सार्वजनिक हित के अन्य कार्यों में भी ग्रामवासियों का सहयोग वांछनीय था। ग्राम की एक सार्वजनिक निधि भी होती थी जिसमें जुर्माने, दंड आदि से धन आता था। इस प्रकार ग्रामिक और ग्रामपंचायत के अधिकार और कर्तव्य सम्मिलित थे जिनकी अवहेलना दंडनीय थी। गुप्तकाल में ग्राम शासन की सबसे छोटी इकाई था जिसके प्रमुख को ग्रामिक कहते थे। वह पंचमंडल अथवा पंचायत की सहायता से ग्राम का शासन चलाता था। ग्रामवृद्ध इस पंचायत के सदस्य होते थे। हर्ष ने भी इसी व्यवस्था को अपनाया। उसके समय में राज्य भुक्ति (प्रांत), विषय (जिला) और ग्राम में विभक्त था। हर्ष के मधुबन शिलालेख में सामकुंडका ग्राम का उल्लेख है जो कुंडधानी विषय और अहिछत्र भुक्ति के अंतर्गत था। ग्रामप्रमुख को ग्रामिक कहते थे।

मध्य काल

नवीं और दसवीं शताब्दी के चोल और उत्तर मल्लूर शिलालेखों से पता चलता है कि दक्षिण में भी पंचायत व्यवस्था थी। ग्राम्य स्वशासन का विकास चोल शासन की मुख्य विशेषता थी। इन साम्य शासन इकाइयों को ष्कुर्रुमष् कहते थे, जिनमें कई ग्राम सम्मिलित होते थे। कुर्रुम एक स्वायत्तशासी इकाई थी। शासनसत्ता एक महासभा में निहित होती थी जिले ग्राम के लोग चुनते थे सभा अपनी समितियों के माध्यम से शासन का काम चलाती थी। इस प्रकार की आठ समितियाँ थीं जो जनहित के विभिन्न कार्यों को करने के अतिरिक्त शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए उत्तरदायी थीं। ये न्याय संबंधी कार्य भी करती थीं। ग्राम पूरी तरह स्वायत्तशासी था और इस प्रकार केंद्रीय शासन अनेक दायित्वों से मुक्त रहता था। मुस्लिम और मराठा कालों में भी किसी न किसी प्रकार की पंचायत व्यवस्था चलती रही और प्रत्येक ग्राम अपने में स्वावलंबी बना रहा।

ब्रिटिश काल

अंग्रेजी शासनकाल में पंचायत–व्यवस्था को सबसे अधिक धक्का पहुँचा और वह यह व्यवस्था छिन्न–भिन्न हो गई। फिर भी ग्रामों के सामाजिक जीवन में पंचायतें बनी रहीं। प्रत्येक जाति अथवा वर्ग की अपनी अलग–अलग पंचायतें थीं जो उसके सामाजिक जीवन को नियंत्रित करती थीं और पंचायत की व्यवस्था एवं नियमों का उल्लंघन करनेवाले को कठोर दंड दिया जाता था। शासन की ओर से इन पंचायतों के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं किया जाता था। आरंभ से ही अंग्रेजों की नीति यह रही कि शासन का काम, यथासंभव, अधिकाधिक राज्य कर्मचारियों के हाथों में ही रहे। इसके परिणामस्वरूप फौजदारी और दीवानी अदालतों की स्थापना, नवीन राजस्व नीति, पुलिस व्यवस्था, गमनागमन के साधनों का विकास आदि कारणों से ग्रामों का स्वावलंबी जीवन और स्थानीय स्वायत्तता धीरे–धीरे समाप्त हो चली।

परंतु आगे चलकर अंग्रेजों ने भी यह अनुभव किया कि उनकी केंद्रीकरण की नीति से शासनभार दिन प्रति दिन बढ़ता ही जा रहा है। दूसरी ओर राष्ट्रीय जाग्रति के कारण स्वायत्तशासन की माँग भी बढ़ रही थी। अतएव उन्हें विकेंद्रीकरण की दिशा में कदम उठाने को बाध्य होना पड़ा। प्रारंभ में जिला बोर्डों और म्युनिसिपल बोर्डों की स्थापना की गई। सन् 1907 के विकेंद्रीकरण संबंधी शाही कमीशन ने पंचायतों के महत्व को स्वीकार किया और अपनी रिपोर्ट में लिखा कि किसी भी स्थायी संगठन की नींव, जिससे जनता का सक्रिय सहयोग प्रशासन के साथ हो, ग्रामों में ही होनी चाहिए। कमीशन ने सिफारिश की कि कुछ चुने हुए ग्रामों में, जो पारस्परिक दलबंदी और झगड़ों से मुक्त हों, पंचायतें स्थापित की जाएँ और प्रारंभ में उन्हें सीमित अधिकार दिए जाएँ। तत्कालीन भारत सरकार ने 1915

ई. में कमीशन की सिफारिशों को सिद्धांततरू तो स्वीकर कर लिया परंतु व्यवहार में उनकी पूर्णतया उपेक्षा की गई। बहुत ही कम ग्रामों में पंचायतें बनीय जो बनीं, वे भी सरकार द्वारा पूरी तरह नियंत्रित थी।

भारत सरकार के 1919 मे अधिनियम के अनुसार प्रांतीय सरकारों को स्वशासन के कुछ अधिकार दिए गए और 1920 के आसपास सभी प्रांतों में ग्राम पंचायत अधिनियम बनाए गए। संयुक्त प्रदेश (उत्तर प्रदेश) में 1920 के पंचायत ऐक्ट के अधीन लगभग 4700 ग्राम पंचायतें स्थापित की गईं। सभी प्रांतों में पंचायतों को सीमित अधिकार दिए गए। वे जनस्वास्थ्य, स्वच्छता, चिकित्सा, जलविकास, सड़कों, तालाबों कुओं आदि की देखभाल करती थीं। उन्हें न्याय संबंधी कुछ अधिकार भी प्राप्त थे। वे अधिकतम 200 रु. की चल संपत्ति से संबद्ध मुकदमे ले सकती थीं और फौजदारी के मुकदमों में 50 रु. तक जुर्माना कर सकती थीं। इनकी आय का मुख्य साधन जुर्माना या दान था। परंतु वास्तविकता यह रही कि प्राचीन पंचायतों की तुलना में ये पंचायतें पूर्णतया प्रभावहीन थीं, इनके पंच जनता द्वारा न चुने जाकर सरकार द्वारा मनोनीत किए जाते थे तथा आय के साधन न होने के करण इनकी आर्थिक स्थिति शोचनीय थी। दूसरी ओर राष्ट्रीय आंदोलन के कर्णधार यह अनुभव करते थे कि गाँवों का आर्थिक और नैतिक पतन केवल पंचायतों की पुनरू स्थापना द्वारा ही रोका जा सकता है। गांधी जी के ग्रामों के लिए दससूत्री कार्यक्रम में पंचायतों को सुदृढ़ बनाने की बात मुख्य थी। वे पंचायतों को स्वतंत्र भारत की शासनव्यवस्था की आधारशिला बनाना चाहते थे। 1937 में सात प्रांतों में स्थापित कांग्रेसी सरकारों के सामने भी यही आदर्श था। उत्तर प्रदेश में अनेक ग्रामों में जीवनसुधार समितियाँ (Better Life Societies) बनाई गई जिन्हें ग्रामविकास के कार्य सौंपे गए।

स्वतंत्रताप्राप्ति के बाद

इस प्रकार 1947 ई. तक ग्रामों में सही पंचायत व्यवस्था का अभाव ही रहा। स्वतंत्रताप्राप्ति के पश्चात् इस व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के सक्रिय प्रयास आरंभ हुए। उत्तर प्रदेश में सन् 1947 में पंचायत राज अधिनियम बनाया गया। संविधान के अंतर्गत ष्राजनीति के निदेशक तत्वोंष में राज्य का यह प्रमुख कर्तव्य बतलाया गया कि ष्वह ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होष तथा ष्उनको ऐसी शक्तियाँ और अधिकार प्रदान करे जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक होंष। इस निदेश के अनुसार प्रत्यक राज्य में पंचायत व्यवस्था लागू करने की दिशा में कदम उठाए गए और प्रत्येक ग्राम अथवा ग्रामसमूह में पंचायत की स्थापना की गई। पंचायत के सदस्यों का चुनाव गाँव के मताधिकारप्राप्त व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। ग्राम पंचायतें ग्राम की स्वच्छता, प्रकाश, सड़कों, औषधालयों, कुओं की सफाई और मरम्मत, सार्वजनिक भूमि, पैठ, बाजार तथा

मेलों और चरागाहों की व्यवस्था करती हैं, जन्म मृत्यु का लेखा रखती हैं और खेती, उद्योग धंधों एवं व्यवसायों की उन्नति, बीमारियों की रोकथाम, श्मशानों और कब्रिस्तानों की देखभाल भी करती हैं। वृक्षारोपण, पशुवंश का विकास, ग्रामसुरक्षा के लिए ग्रामसेवक दल का गठन, सहकारिता का विकास, अकाल पीड़ितो की सहायता, पुलों और पुलियों का निर्माण, स्कूलों और अस्पतालों का सुधार आदि इनके ऐच्छिक कर्तव्य हैं। ग्रामों में पंचायत व्यवस्था का दूसरा अंग न्याय पंचायतें हैं। ग्रामों में मुकदमेबाजी कम करने तथा जनता को सस्ता न्याय सुलभ बनाने की दृष्टि से न्याय पंचायतों का निर्माण किया गया है। इन्हें दीवानी, फौजदारी और माल के मामलों में कुछ अधिकार प्रदान किए गए है। प्रत्येक राज्य में पंचायतों के अधिकार और दायित्व न्यूनाधिक रूप से समान है।

विकेंद्रीकरण व्यवस्था को पूरी तरह कार्यान्वित करने की दिशा में और भी कदम उठाए गए हैं। पंचायतों के अधिकारों और कर्तव्यों का क्षेत्र विस्तृत हो रहा है। इस प्रकार ग्राम पंचायतें पुनः हमारे देश के जनजीवन का अभिन्न अंग बन गई हैं। इस व्यवस्था की सफलता के लिए जनशिक्षा, सामूहिक चेतना, गुटबंदी का अभाव, राज्य द्वारा कम से कम हस्तक्षेप आदि बातें आवश्यक हैं।

पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम, तालुका और जिला आते हैं। भारत में प्राचीन काल से ही पंचायती राज व्यवस्था आस्तित्व में रही हैं। आधुनिक भारत में प्रथम बार तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा राजस्थान के नागौर जिले में २ अक्टूबर १९५९ को पंचायती राज व्यवस्थ लागू की गई।

संवैधानिक प्रवधान

भारतीय संविधान के अनुच्छेद ४० में राज्यों को पंचायतों के गठन का निर्देश दिया गया हैं। १९९३ मैं संविधान में ७३वां संविधान संशोधन अधिनियम, १९९२ करके पंचायत राज संस्था को संवैधानिक मान्यता दे दी गयी हैं।

बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशें (1957) –

अशोक मेहता समिति की सिफारिशें (1976) –

24 अप्रैल 1993 भारत में पंचायती राज के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण मार्गचिन्ह था क्योंकि इसी दिन संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को संबैधानिक दर्जा हासिल कराया गया और इस तरह महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज के स्वप्न को वास्तविकता में बदलने की दिशा में कदम बढ़ाया गया था।

73वें संशोधन अधिनियम, 1993 में निम्नलिखित प्रावधान किये गये हैंरू

एक त्रि–स्तरीय ढांचे की स्थापना (ग्राम पंचायत, पंचायत समिति या मध्यवर्ती पंचायत तथा जिला पंचायत)

ग्राम स्तर पर ग्राम सभा की स्थापना

हर पांच साल में पंचायतों के नियमित चुनाव

अनुसूचित जातियोंध्जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में सीटों का आरक्षण

महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटों का आरक्षण

पंचायतों की निधियों में सुधार के लिए उपाय सुझाने हेतु राज्य वित्ता आयोगों का गठन

राज्य चुनाव आयोग का गठन

73वां संशोधन अधिनियम पंचायतों को स्वशासन की संस्थाओं के रूप में काम करने हेतु आवश्यक शक्तियां और अधिकार प्रदान करने के लिए राज्य सरकार को अधिकार प्रदान करता है। ये शक्तियां और अधिकार इस प्रकार हो सकते हैं

संविधान की गयारहवीं अनुसूची में सूचीबध्द 29 विषयों के संबंध में आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार करना और उनका निष्पादन करना

कर, डयूटीज, टॉल, शुल्क आदि लगाने और उसे वसूल करने का पंचायतों को अधिकार

राज्यों द्वारा एकत्र करों, डयूटियों, टॉल और शुल्कों का पंचायतों को हस्तांतरण

ग्राम सभा

ग्राम सभा किसी एक गांव या पंचायत का चुनाव करने वाले गांवों के समूह की मतदाता सूची में शामिल व्यक्तियों से मिलकर बनी संस्था है।

गतिशील और प्रबुध्द ग्राम सभा पंचायती राज की सफलता के केंद्र में होती है। राज्य सरकारों से आग्रह किया गया है कि वेरू–

पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996 में उल्लिखित प्रावधानों के अनुसार ग्राम सभा को शक्तियां प्रदान करें।

गणतंत्र दिवस, श्रम दिवस, स्वतंत्रता दिवस और गांधी जयंती के अवसर पर देश भर में ग्राम सभा की बैठकों के आयोजन के लिए पंचायती राज कानून में अनिवार्य प्रावधान शामिल करना।

पंचायती राज अधिनियम में ऐसा अनिवार्य प्रावधान जोड़ना जो विशेषकर ग्राम सभा की बैठकों के कोरम, सामान्य बैठकों और विशेष बैठकों तथा कोरम पूरा न हो पाने के कारण फिर से बैठक के आयोजन के संबंध में हो।

ग्राम सभा के सदस्यों को उनके अधिकारों और शक्तियों से अवगत कराना ताकि जन भागीदारी सुनिश्चित हो और विशेषकर महिलाओं तथा अनुसूचित जातिध्जनजाति के लोगों जैसे सीमांतीकृत समूह भाग ले सकें।

ग्राम सभा के लिए ऐसी कार्य–प्रक्रियाएं बनाना जिनके द्वारा वह ग्राम विकास मंत्रालय के लाभार्थी–उन्मुख विकास कार्यक्रमों का असरकारी ढंग से सामाजिक ऑडिट सुनिश्चित कर सके तथा वित्तीय कुप्रबंधन के लिए वसूली या सजा देने के कानूनी अधिकार उसे प्राप्त हो सकें।

ग्राम सभा बैठकों के संबंध में व्यापक प्रसार के लिए कार्य–योजना बनाना।

ग्राम सभा की बैठकों के आयोजन के लिए मार्ग–निर्देशध्कार्य–प्रक्रियाएं तैयार करना।

प्राकृतिक संसाधनों, भूमि रिकार्डों पर नियंत्रण और समस्या–समाधान के संबंध में ग्राम सभा के अधिकारों को लेकर जागरूकता पैदा करना।

73वां संविधान संशोधन अधिनियम ग्राम स्तर पर स्व–शासन की संस्थाओं के रूप में ऐसी सशक्त पंचायतों की परिकल्पना करता है जो निम्न कार्य करने में सक्षम हो

ग्राम स्तर पर जन विकास कार्यों और उनके रख–रखाव की योजना बनाना और उन्हें पूरा करना।

ग्राम स्तर पर लोगों का कल्याण सुनिश्चित करना, इसमें स्वास्थ्य, शिक्षा, समुदाय भाईचारा, विशेषकर जेंडर और जाति–आधारित भेदभाव के संबंध में सामाजिक न्याय, झगड़ों का निबटारा, बच्चों का विशेषकर बालिकाओं का कल्याण जैसे मुद्दे होंगे।

73वें संविधान संशोधन में जमीनी स्तर पर जन संसद के रूप में ऐसी सशक्त ग्राम सभा की परिकल्पना की गई है जिसके प्रति ग्राम पंचायत जवाबदेह हो। ७४वें संविधान संशोधन

संदर्भ

पंचायत का इतिहास (भारतीय पक्ष)

लोक पंचायत (हिन्दी पत्रिका)

दैनिक जागरण 2015

यूजीसी एनएनएन 1986

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

पंचायती राज व्यवस्था एवं ग्राम पंचायत प्रशासन एक अध्ययन

अजय कौशिक
सहायक प्राध्यापक राजनीति शास्त्र

रूपरेखा

भारत के संविधान के 73 वें संशोधन के अनुरूप प्रदेश में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को सफल बनाने, विकास योजनाओं को मूर्तरूप दिया जाकर लोकतंत्रीय ग्रामीण स्थानीय व्यवस्था और जनभागिदारी को सुदृड़ करना, आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय के लिये संविधान की 11 वीं अनुसूची में वर्णित विषयों से संबंधित योजनाओं के क्रियान्वयन, अनुश्रवण एवं प्रबधंन के बारे में पदाधिकारियों को समुचित मार्गदर्शन तथा प्रशिक्षण देना एवं पंचायतों को उनके अधिकार, कर्तृयव्य एवं दायित्वों को परिचित कराकर प्रदेश में ग्रामीण विकास त्वरित गति से हो ऐसी व्यवस्था सुनिश्चित करना ।

दायित्व

1) पंचायत के सुदृढ़ीकरण हेतु सचिवीय एवं अंकेक्षण व्यवस्था

2) पंचायत सचिव, प्रशिक्षण केंद्र प्रदेश में पंचायत सचिवों के प्रशिक्षण हेतु तीन प्रशिक्षण संस्थान संस्थित है जिनका मुख्य दायित्व ग्राम सहायकों, पंचायत सचिवों को ग्राम पंचायतो के कार्यों से परिचित कराकर उन्हे पंचायत राज अधिनियम के प्रावधान, नियमों का ज्ञान कराना इसके साथ ही राज्य शासन द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों मे चलाई जा रही सभी विकास योजनाओं तथा विभागीय गतिविधियों की जानकारी दी जाकर सफलता पूर्वक कार्यान्वयन संबधी प्रशिक्षण देना है ।

3) पंचायत राज प्रशिक्षण – वगठित पंचायतों के पदधारियों के नये पंचायत राज अधिनियम, नियम एवं समय-समय पर राज्य शासन द्वारा प्रसारित निर्देशों के परिवेश से अवगत कराने हेतु एवं उनके कर्तृत्यव्यों एवं उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक बनाने हेतु शासन द्वारा उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है ।

4) ग्राम पंचायत के मूलभुत कार्य – मध्यप्रदेश पंचायतराज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम 1993 की धारा–49 के अंतर्गत ग्राम पंचायतों को बहुत से मूलभूत कार्यों को संपादित करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है । इन कृत्यों को भली भांति निर्वहन करने हेतु राज्य वित्त आयोग की अनुशंसा को मान्य करते हुए राज्य की सकल कर एवं करेत्तर राजस्व संग्रहण का 2.91 हिस्सा ग्राम पंचायतों के मध्य वितरण की स्वीकृति शासन द्वारा दी गई है ।

5) पंचायत निर्वाचन – मध्यप्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम 1993 के अधीन मई, जून 1994 में संपूर्ण प्रदेश मे तीन चरणों में प्रथम बार त्रिस्तरीय पंचायतराज संस्थाओं का चुनाव पृथक एवं स्वतंत्र ईकाई के रूप में राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा कराया गया ।

6) मध्यप्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज् अधिनियम के अंतर्गत भू-राजस्व उपकर, मुद्राशं शुल्क, अनुदान तथा जिला स्तरीय पंचायतराज निधि का गठन

नीति

1) राजीव गांधी जलग्रहण क्षेत्र प्रबंधन मिशन

2) सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम

3) एकीकृत पड़त भूमि विकास कार्यक्रम

4) सुनिशचित रोजगार आशश्वासन योजना

5) स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना

6) सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना

7) इंदिरा गाँधी गरीबी हटाओ योजना

8) प्रधानमंत्री ग्रामोदय ग्रामीण आवास योजना

9) ग्रामीण आवास एवं बसाहट विकास की अभिनव धारा

10) प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना

11) जिला ग्रामीण विकास अभिकरण प्रशासन योजना

संविधान (चौहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 की धारा 2 द्वारा (1-6-1993 से) अंत: स्थापित।

(क) नगरपालिका – नगरपालिका प्रशासन का विशेष ज्ञान या अनुभव रखने वाले व्यक्तियों का लोकसभा के ऐसे सदस्यों का और राज्य की विधान सभा के ऐसे सदस्यों का, जो उन निर्वाचन-क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनमें कोई नगरपालिका क्षेत्र पूर्णत: या भ्रगत: समाविष्ट हैं राज्य सभा के ऐसे सदस्यों का और राज्य की विधान परिषद् के ऐसे सदस्यों का, जो नगरपालिका क्षेत्र के भीतर निर्वाचकों के रूप में रजिस्ट्रीकृत हैं अनुच्छेद 243 के खंड (5) के अधीन गठित समितियों के अध्यक्षों का प्रतिनिधित्व करने के लिए उपबंध कर सकेगा परंतु पैरा में निर्दिष्ट व्यक्तियों को नगरपालिका के अधिवेशनों में मत देने का अधिकार नहीं होगा

(ख) किसी नगरपालिका के अध्यक्ष के निर्वाचन की रीति का उपबंध कर सकेगा।

वार्ड समितियों, आदि का गठन और संरचना--(1) ऐसी नगरपालिका के, जिसकी जनसंख्या तीन लाख या उससे अधिक है, प्रादेशिक क्षेत्र के भीतर वार्ड समितियों का गठन किया जाएगा, जो एक या अधिक वार्डों से मिलकर बनेगी।

(2) राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा,--

(क) वार्ड समिति की संरचना और उसके प्रादेशिक क्षेत्र की बाबत

(ख) उस रीति की बाबत जिससे किसी वार्ड समिति में स्थान भरे जाएँगे

(3) वार्ड समिति के प्रादेशिक क्षेत्र के भीतर किसी वार्ड का प्रतिनिधित्व करने वाला किसी नगरपालिका का सदस्य उस समिति का सदस्य होगा।

(4) जहाँ कोई वार्ड समिति,--

(क) एक वार्ड से मिलकर बनती है वहाँ नगरपालिका में उस वार्ड का प्रतिनिधित्व करने वाला सदस्य या

(ख) दो या अधिक वार्डों से मिलकर बनती है वहाँ नगरपालिका में ऐसे वार्डों का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों में से एक सदस्य, जो उस वार्ड समिति के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किया जाएगा, उस समिति का अध्यक्ष होगा।

(5) इस अनुच्छेद की किसी बात से यह नहीं समझा जाएगा कि वह किसी राज्य के विधान-मंडल को वार्ड समितियों के औंतरिक्त समितियों का गठन करने के लिए कोई उपबंध करने से निवारित करती है।

स्थानों का आरक्षण--(1) प्रत्येक नगरपालिका में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे और इस प्रकार आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, उस नगरपालिका में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या से यथाशक्य वही होगा जो उस नगरपालिका क्षेत्र में अनुसूचित जातियों की अथवा उस नगरपालिका क्षेत्र में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या का अनुपात उस क्षेत्र की कुल जनसंख्या से है और ऐसे स्थान किसी नगरपालिका के भिन्न-भिन्न निर्वाचन-क्षेत्रों को चक्रानुक्रम से आबंटित किए जा सकेंगे।

(2) खंड (1) के अधीन आरक्षित स्थानों की कुल संख्या के कम से कम एक-तिहाई स्थान, यथास्थिति, अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों की स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे।

(3) प्रत्येक नगरपालिका में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के कम से कम एक-तिहाई स्थान (जिनके अंतर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की स्त्रियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या भी है) स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे और ऐसे स्थान किसी नगरपालिका के भिन्न-भिन्न निर्वाचन-क्षेत्रों को चक्रानुक्रम से आबंटित किए जा सकेंगे।

(4) नगरपालिकाओं में अध्यक्षों के पद अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और स्त्रियों के लिए ऐसी रीति से आरक्षित रहेंगे, जो राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, उपबंधित करे।

(5) खंड (1) और खंड (2) के अधीन स्थानों का आरक्षण और खंड (4) के अधीन अध्यक्षों के पदों का आरक्षण (जो स्त्रियों के लिए आरक्षण से भिन्न है) अनुच्छेद 334 में विनिर्दिष्ट अवधि की समाप्ति पर प्रभावी नहीं रहेगा।

(6) इस भाग की कोई बात किसी राज्य के विधान-मंडल को पिछड़े हुए नागरिकों के किसी वर्ग के पक्ष में किसी नगरपालिका में स्थानों के या नगरपालिकाओं में अध्यक्षों के पद के आरक्षण के लिए कोई उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

नगरपालिकाओं की अवधि, आदि--(1) प्रत्येक नगरपालिका, यदि तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन पहले ही विघटित नहीं कर दी जाती है तो, अपने प्रथम अधिवेशन के लिए नियत तारीख से पांच वर्ष तक बनी रहेगी, इससे अधिक नहीं

परंतु किसी नगरपालिका का विघटन करने के पूर्व उसे सुनवाई का उचित अवसर दिया जाएगा।

(2) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के किसी संशोधन से किसी स्तर पर ऐसी नगरपालिका का, जो ऐसे संशोधन के ठीक पूर्व कार्य कर रही है, तब तक विघटन नहीं होगा जब तक खंड (1) में विनिर्दिष्ट उसकी अवधि समाप्त नहीं हो जाती।

(3) किसी नगरपालिका का गठन करने के लिए निर्वाचन,--

(क) खंड (1) में विनिर्दिष्ट उसकी अवधि की समाप्ति के पूर्व;

(ख) उसके विघटन की तारीख से छह मास की अवधि की समाप्ति के पूर्व पूरा किया जाएगा

परंतु जहाँ वह शेष अवधि, जिसके लिए कोई विघटित नगरपालिका बनी रहती, छह मास से कम है वहां ऐसी अवधि के लिए उस नगरपालिका का गठन करने के लिए इस खंड के अधीन कोई निर्वाचन कराना आवश्यक नहीं होगा।

(4) किसी नगरपालिका की अवधि की समाप्ति के पूर्व उस नगरपालिका के विघटन पर गठित की गई कोई नगरपालिका, उस अवधि के केवल शेष भाग के लिए बनी रहेगी जिसके लिए विघटित नगरपालिका खंड (1) के अधीन बनी रहती, यदि वह इस प्रकार विघटित नहीं की जाती।

सदस्यता के लिए निरर्हताएँ--(1) कोई व्यक्ति किसी नगरपालिका का सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य होने के लिए निरर्हित होगा,--

(क) यदि वह संबंधित राज्य के विधान-मंडल के निर्वाचनों के प्रयोजनों के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस प्रकार निरर्हित कर दिया जाता है

परंतु कोई व्यक्ति इस आधार पर निरर्हित नहीं होगा कि उसकी आयु पच्चीस वर्ष से कम है, यदि उसने इक्कीस वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है;

(ख) यदि वह राज्य के विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस प्रकार निरर्हित कर दिया जाता है।

(2) यदि यह प्रश्न उठता है कि किसी नगरपालिका का कोई सदस्य खंड (1) में वर्णित किसी निरर्हता से ग्रस्त हो गया है या नहीं तो वह प्रश्न ऐसे प्राधिकारी को, और ऐसी रीति से, जो राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, उपबंधित करे, विनिश्चय के लिए निर्देशित किया जाएगा।

नगरपालिकाओं, आदि की शक्तियाँ, प्राधिकार और उत्तरदायित्व--इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा,--

(क) नगरपालिकाओं को ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार प्रदान कर सकेगा, जो उन्हें स्वायत्त शासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हों और ऐसी विधि में नगरपालिकाओं को, ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो उसमें विनिर्दिष्ट की जाएँ, निम्नलिखित के संबंध में शक्तियाँ और उत्तरदायित्व न्यागत करने के लिए उपबंध किए जा सकेंगे, अर्थात आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएँ तैयार करना ऐसे कृत्यों का पालन करना और ऐसी स्कीमों को, जो उन्हें सौंपी जाएँ, जिनके अंतर्गत वे स्कीमें भी हैं, जो बारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के संबंध में हैं, कार्यान्वित करना

(ख) समितियों को ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार प्रदान कर सकेगा जो उन्हें अपने को प्रदत्त उत्तरदायित्वों को, जिनके अन्तर्गत वे उत्तरदायित्व भी हैं जो बारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों के संबंध में हैं, कार्यान्वित करने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हों।

नगरपालिकाओं द्वारा कर अधिरोपित करने की शक्ति और उनकी निधियाँ--किसी राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा--

(क) ऐसे कर, शुल्क, पथ कर और फीसें उद्गृहीत, संगृहीत और विनियोजित करने के लिए किसी नगरपालिका को, ऐसी प्रक्रिया के अनुसार और ऐसे निर्बंधनों के अधीन रहते हुए, प्राधिकृत कर सकेगा

(ख) राज्य सरकार द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत ऐसे कर, शुल्क, पथकर और फीसें किसी नगरपालिका को, ऐसे प्रयोजनों के लिए, तथा ऐसी शर्तों और निर्बंधनों के अधीन रहते हुए, समनुदिष्ट कर सकेगा

(ग) राज्य की संचित निधि में से नगरपालिकाओं के लिए ऐसे सहायता-अनुदान देने के लिए उपबंध कर सकेगा

(घ) नगरपालिकाओं द्वारा या उनकी ओर से क्रमशः प्राप्त किए गए सभी धनों को जमा करने के लिए ऐसी निधियों का गठन करने और उन निधियों में से ऐसे धनों को निकालने के लिए भी उपबंध कर सकेगा, जो विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएँ।

वित्त आयोग--(1) अनुच्छेद 243 के अधीन गठित वित्त आयोग नगरपालिकाओं की वित्तीय स्थिति का भी पुनर्विलोकन करेगा और जो--

(क)राज्य द्वारा उद्ग्रहणीय ऐसे करों, शुल्कों, पथ करों और फीसों के ऐसे शुद्ध आगमों के राज्य और नगरपालिकाओं के बीच, जो इस भाग के अधीन उनमें विभाजित किए जाएँ, वितरण को और सभी स्तरों पर नगरपालिकाओं के बीच ऐसे आगमों के तत्संबंधी भाग के आबंटन को ऐसे करों, शुल्कों, पथ करों और फीसों के अवधारण को, जो नगरपालिकाओं को समनुदिष्ट की जा सकेंगी या उनके द्वारा विनियोजित की जा सकेंगी; राज्य की संचित निधि में से नगरपालिकाओं के लिए सहायता अनुदान को, शासित करने वाले सिद्धांतों के बारे में नगरपालिकाओं की वित्तीय स्थिति को सुधारने के लिए आवश्यक अध्युपायों के बारे में नगरपालिकाओं के सुदृढ़ वित्त के हित में राज्यपाल द्वारा वित्त आयोग को निर्दिष्ट किए गए किसी अन्य विषय के बारे में, राज्यपाल को सिफारिश करेगा।

(2) राज्यपाल इस अनुच्छेद के अधीन आयोग द्वारा की गई प्रत्येक सिफारिश को, उस पर की गई कार्रवाई के स्पष्टीकारक ज्ञापन सहित, राज्य के विधान-मंडल के समक्ष रखवाएगा।

नगरपालिकाओं के लेखाओं की संपरीक्षा--किसी राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, नगरपालिकाओं द्वारा लेखे रखे जाने और ऐसे लेखाओं की संपरीक्षा करने के बारे में उपबंध कर सकेगा।

243 नगरपालिकाओं के लिए निर्वाचन--(1) नगरपालिकाओं के लिए कराए जाने वाले सभी निर्वाचनों के लिए निर्वाचक नामावली तैयार कराने का और उन सभी निर्वाचनों के संचालन का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण, अनुच्छेद 243 में निर्दिष्ट राज्य निर्वाचन आयोग में निहित होगा।

(2) इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, नगरपालिकाओं के निर्वाचनों से संबंधित या संसक्त सभी विषयों के संबंध में उपबंध कर सकेगा।

संघ राज्यक्षेत्रों को लागू होना--इस भाग के उपबंध संघ राज्यक्षेत्रों को लागू होंगे और किसी संघ राज्यक्षेत्र को उनके लागू होने में इस प्रकार प्रभावी होंगे मानो किसी राज्य के राज्यपाल के प्रति निर्देश, अनुच्छेद 239 के अधीन नियुक्त संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक के प्रति निर्देश हों और किसी राज्य के विधान-मंडल या विधान सभा के प्रति निर्देश, किसी ऐसे संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में, जिसमें विधान सभा है, उस विधान सभा के प्रति निर्देश हों

परंतु राष्ट्रपति, लोक अधिसूचना द्वारा, यह निदेश दे सकेगा कि इस भाग के उपबंध किसी संघ राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए, लागू होंगे, जो वह अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे।

इस भाग का कतिपय क्षेत्रों को लागू न होना--(1) इस भाग की कोई बात अनुच्छेद 244 के खंड (1) में निर्दिष्ट अनुसूचित क्षेत्रों और इसके खंड (2) में निर्दिष्ट जनजाति क्षेत्रों को लागू नहीं होगी।

(2) इस भाग की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह पश्चिमी बंगाल राज्य के दार्जिलिंग जिले के

पर्वतीय क्षेत्रों के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन गठित दार्जिलिंग गोरखा पर्वतीय परिषद् के कृत्यों और शक्तियों पर प्रभाव डालती है।

(3) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, संसद?, विधि द्वारा, इस भाग के उपबंधों का विस्तार खंड (1) में निर्दिष्ट अनुसूचित क्षेत्रों और जनजाति क्षेत्रों पर, ऐसे अपवादों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए, कर सकेगी, जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएँ और ऐसी किसी विधि को अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन नहीं समझा जाएगा।

जिला योजना के लिए समिति--(1) प्रत्येक राज्य में जिला स्तर पर, जिले में पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा तैयार की गई योजनाओं का समेकन करने और संपूर्ण जिले के लिए एक विकास योजना प्रारूप तैयार करने के लिए, एक जिला योजना समिति का गठन किया जाएगा।

(2) राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, निम्नलिखित की बाबत उपबंध कर सकेगा, अर्थात-

(क) जिला योजना समितियों की संरचना;

(ख) वह रीति जिससे ऐसी समितियों में स्थान भरे जाएँगे

परंतु ऐसी समिति की कुल सदस्य संख्या के कम से कम चार बटा पाँच सदस्य, जिला स्तर पर पंचायत के और जिले में नगरपालिकाओं के निर्वाचित सदस्यों द्वारा, अपने में से, जिले में ग्रामीण क्षेत्रों की और नगरीय क्षेत्रों की जनसंख्या के अनुपात के अनुसार निर्वाचित किए जाएँगे;

(ग) जिला योजना से संबंधित ऐसे कृत्य जो ऐसी समितियों को समनुदिष्ट किए जाएँ;

(घ) वह रीति, जिससे ऐसी समितियों के अध्यक्ष चुने जाएँगे।

(3) प्रत्येक जिला योजना समिति, विकास योजना प्रारूप तैयार करने में,--

(क) निम्नलिखित का ध्यान रखेगी, अर्थात- पंचायतों और नगरपालिकाओं के सामान्य हित के विषय, जिनके अंतर्गत स्थानिक योजना, जल तथा अन्य भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों में हिस्सा बंटाना, अवसंरचना का एकीकृत विकास और पर्यावरण संरक्षण है, उपलब्ध वित्तीय या अन्य संसाधनों की मात्रा और प्रकार, ऐसी संस्थाओं और संगठनों से परामर्श करेगी जिन्हें राज्यपाल, आदेश द्वारा, विनिर्दिष्ट करे।

(4) प्रत्येक जिला योजना समिति का अध्यक्ष, वह विकास योजना, जिसकी ऐसी समिति द्वारा सिफारिश की जाती है, राज्य सरकार को भेजेगा।

महानगर योजना के लिए समिति--(1) प्रत्येक महानगर क्षेत्र में, संपूर्ण महानगर क्षेत्र के लिए विकास योजना प्रारूप तैयार करने के लिए, एक महानगर योजना समिति का गठन किया जाएगा।

(2) राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, निम्नलिखित की बाबत उपबंध कर सकेगा, अर्थात--

(क) महानगर योजना समितियों की संरचना

(ख) वह रीति जिससे ऐसी समितियों में स्थान भरे जाएँगे

परंतु ऐसी समिति के कम से कम दो-तिहाई सदस्य, महानगर क्षेत्र में नगरपालिकाओं के निर्वाचित सदस्यों और पंचायतों के अध्यक्षों द्वारा, अपने में से, उस क्षेत्र में नगरपालिकाओं की और पंचायतों की जनसंख्या के अनुपात के अनुसार निर्वाचित किए जाएँगे

(ग) ऐसी समितियों में भारत सरकार और राज्य सरकार का तथा ऐसे संगठनों और संस्थाओं का प्रतिनिधित्व जो ऐसी समितियों को समनुदिष्ट कृत्यों को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक समझे जाएँ

(घ) महानगर क्षेत्र के लिए योजना औऱ समन्वय से संबंधित ऐसे कृत्य जो ऐसी समितियों को समनुदिष्ट किए जाएँ

(घ) वह रीति, जिससे ऐसी समितियों के अध्यक्ष चुने जाएँगे।

(3) प्रत्येक महानगर योजना समिति, विकास योजना प्रारूप तैयार करने में,--

(क) निम्नलिखित का ध्यान रखेगी, अर्थात- महानगर क्षेत्र में नगरपालिकाओं और पंचायतों द्वारा तैयार की गई योजनाएं, नगरपालिकाओं और पंचायतों के सामान्य हित के विषय, जिनके अंतर्गत उस क्षेत्र की समन्वित स्थानिक योजना, जल तथा अन्य भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों में हिस्सा बंटाना, अवसंरचना का एकीकृत विकास और पर्यावरण संरक्षण है।

भारत सरकार और राज्य सरकार द्वारा निश्चित समस्त उद्देश्य और पूर्विकताएँ

उन विनिधानों की मात्रा और प्रकृति जो भारत सरकार और राज्य सरकार के अभिकरणों द्वारा महानगर क्षेत्र में किए जाने संभाव्य हैं तथा अन्य उपलब्ध वित्तीय या अन्य संसाधन

(ख) ऐसी संस्थाओं और संगठनों से परामर्श करेगी जिन्हें राज्यपाल, आदेश द्वारा, विनिर्दिष्ट करे।

(4) प्रत्येक महानगर योजना समिति का अध्यक्ष, वह विकास योजना, जिसकी ऐसी समिति द्वारा सिफारिश की जाती है, राज्य सरकार को भेजेगा।

विद्यमान विधियों और नगरपालिकाओं का बना रहना--इस भाग में किसी बात के होते हुए भी, संविधान (चौहत्तरवाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 के प्रारंभ के ठीक पूर्व किसी राज्य में प्रवृत्त नगरपालिकाओं से संबंधित किसी विधि का कोई उपबंध, जो इस भाग के उपबंधों से असंगत है, जब तक सक्षम विधान-मंडल द्वारा या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा उसे संशोधित या निरसित नहीं कर दिया जाता है या जब तक ऐसे प्रारंभ से एक वर्ष समाप्त नहीं हो जाता है, इनमें से जो भी पहले हो, तब तक प्रवृत्त बना रहेगा

परंतु ऐसे प्रारंभ के ठीक पूर्व विद्यमान सभी नगरपालिकाएँ, यदि उस राज्य की विधान सभा द्वारा या ऐसे राज्य की दशा में, जिसमें विधान परिषद्? हैं, उस राज्य के विधान-मंडल के प्रत्येक सदन द्वारा पारित इस आशय के संकल्प द्वारा पहले ही विघटित नहीं कर दी जाती हैं तो, अपनी अवधि की समाप्ति तक बनी रहेंगी।

(क) अनुच्छेद 243यक के अधीन बनाई गई या बनाई जाने के लिए तात्पर्यित किसी ऐसी विधि की विधिमान्यता, जो निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन या ऐसे निर्वाचन-क्षेत्रों को स्थानों के आबंटन से संबंधित है, किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं की जाएगी;

(ख) किसी नगरपालिका के लिए कोई निर्वाचन, ऐसी निर्वाचन अर्जी पर ही प्रश्नगत किया जाएगा जो ऐसे प्राधिकारी को और ऐसी रीति से प्रस्तुत की गई है, जिसका किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन उपबंध किया जाए, अन्यथा नहीं।

सारांशः– भारत की ग्रामीण आबादी परिवर्तन के तीव्र दौर से गुजर रही है। ग्राम्य जीवन की आधारशिला कृषि क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं जिसका सीधा असर ग्रामीणों के सामाजिक आर्थिक जीवन पर पड़ रहा है विभिन्न सरकारी और गैर सरकारी प्रयासों के चलते ग्रामीणों ने जहाँ शिक्षा के महत्व को समझा है, वही ग्रामीण महिलायें भी सशक्तीकरण के दौर से गुजर रही है। आधुनिक तकनीक की मदद से कृषि कार्य में लगे लोगों का जीवन स्तर सुधर रहा है। इसी प्रकार एक ओर लघु वित्त के माध्यम से निर्धनतम ग्रामीणों को रोजगार मिल रहा है, जिससे नगरों की ओर पलायन की प्रवृत्ति कम हुई है तो दूसरी ओर संचार क्रांति ने ग्रामीणों के लिये रोजगार के अनेक अवसर उपलब्ध कराये हैं। इन सभी परिवर्तनों का सीधा असर स्पष्टतः परिलक्षित हो रहा है।

मुख्य बिन्दुः– ग्रामीण जीवन, साक्षरता, सशक्तीकरण, स्वास्थ्य, गरीबी, लघु वित्त, संचार क्रांति

वर्तमान भारतीय ग्रामीण परिदृश्य का अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि भारतीय ग्राम निरंतर परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल, सड़कें, पेयजल, बिजली, सफाई, स्वास्थ्य सुविधायें, रोजगार संचार के आधुनिक साधन इत्यादि विभिन्न सरकारी व गैर सरकारी प्रयासों के द्वारा उपलब्ध हो गये हैं, जिनकी बदौलत ग्रामीणों के जीवन में अनेक परिवर्तन हो गये हैं।

ग्रामीण समाज में परिवर्तन के वाहकः–

संदर्भ ग्रन्थ :

- भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र (2000) साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
- पंचायत राज एवम् ग्रामीण विकास, अर्जुन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली (2004)
- भारत में विकास की चुनौतियाँ, अविष्कार पब्लिकेशन, जयपुर, 2007
- स्वास्थ्य सुविधायें प्रदान करने के भारत के प्रयास–योजना–फरवरी 2014
- कुरुक्षेत्र– जनवरी 2010, जनवरी 2012, फरवरी 2012, जुलाई 2012 , अक्टूबर 2012 दिसंबर 2012, फरवरी 2014, मार्च 2014, मई 2014

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के विकास के लिये गये काम एवं रोजगार :-

डॉ. मो. मतीन खान
अतिथि विद्वान–राजनीति शास्त्र विभाग
शा. महा. नसरुल्लागंज

र्तमान में अनुसूचित जाति एवं जनजातीय विकास के दर्जन भर से ज्यादा कार्यक्रम एक साथ चल रहे हैं। उन योजनाओं पर केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, विदेशी संस्थाओं के रुपये अनुपातिक रुप से खर्च हो रहे है। क्या इतनी विशाल राशि के खर्च के बाद भी जनजातियों का विकास खर्च के अनुपात में हो पाया है, इसका जवाब गाँव की चौपाल, गली, पगडंडी तथा सड़क देखने से मिल जाता है।15 जनजातियों के विकास के लिए पाँचवे दशक में भूदान आन्दोलन (1951), सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1952) तथा पंचायती राज योजना (1959) प्रारम्भ की गई थी। छठे दशक में गहन कृषि जिला कार्यक्रम (1960) आदिवासी क्षेत्र विकास योजना (1962), गहन कृषि योजना (1964), गहन कृषि क्षेत्र विकास योजना (1965), कृषि मजदूर एवं सीमांत कृषक योजना (1965) प्रारम्भ की है। सातवें दशक में सूखा क्षेत्र योजना (1972), गहना रोजगार योजना (1972) गारंटी योजना (1974), 20 सूत्री कार्यक्रम (1975), न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (1976), अंत्योदय कार्यक्रम (1977), काम के बदले अनाज योजना (1977), जिला औद्योगिक केन्द्र योजना (1978), लागू की गई।16 आठवें दशक में महिला तथा बच्चों हेतु कार्यक्रम 1980 राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (1980) जनजातीय विकास कार्यक्रम (1980), ग्रामीण युवकों को रोजगार प्रशिक्षण योजना (1980), ग्रामीण भूमि रोजगार गारण्टी योजना (1983) जवाहर रोजगार योजना तथा इंदिरा आवास योजना 1988 में लागू की गई नौवे दशक में पहले से चली आ रही योजनाओं को नया रुप देकर चलाया जा रहा है। साथ ही त्वरित पेय जल आपूर्ति योजना

(1990), समेकित रोजगार योजना 1993 भंगी मुक्ति योजना 1993, महिला समृद्धि योजना 15 रुपये में साड़ी, धोती, योजना, गरीबी रेखा से नीचे के लोगों हेतु आधी कीमत पर अनाज योजना, स्थानीय संसद विधायक क्षेत्र विकास योजना, राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना सांसद विधायक विकास योजना, राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना, राष्ट्रीय योजना, प्रधानमंत्री ग्राम शिविर योजना, प्रधानमंत्री रोजगार योजना, प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना की घोषण की गई है। नई श्शताब्दी में किशोर ऊर्जा योजना प्रध ानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना, अन्नपूर्णा योजना, अन्त्योदय अन्न योजना, सम्पूर्ण रोजगार योजना इत्यादि चालू की गई जो अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के विकास के लिए लाभदायक सिद्ध हो।

मध्यप्रदेश के अनुसूचित जाति एवं जनजातीय कल्याण की योजनाः–

मध्यप्रदेश भारत में अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के संदर्भ में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जनजातियों के विकास के लिये मध्यप्रदेश सरकार ने जिन नीतियों एवं कार्यक्रमों को रखा है वे जनजातियाँ एवं जाति कल्याण के साथ–साथ मानव जाति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

मध्यप्रदेश शासन द्वारा निर्मित प्रमुख योजनाओं का उल्लेख हम यहाँ पर कर रहे हैं।18

(1) अनुसूचित जाति/जनजाति एवं विछड़ावर्ग राज्य छात्र प्रतियोजना

(कक्षा 6 वी से कक्षा 10 तक)

विभाग द्वारा राज्य छात्रवृत्ति जिसमें कक्षा 6 वी से कक्षा दसवी तक के अनुसूचितजाति/अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़े वर्ग जाति के छात्र/छात्राओं का वर्गवार, 10 गाह के तीन चरणों में विकास खण्ड स्तर पर शिविरों का आयोजन कर तीन किश्तों में प्रदाय की जाती है इसमें कक्षा 6 से 8 तक प्रति छात्र 200/– रुपये और छात्रा को 300/– रुपये वार्षिक कक्षा 9 से 10 तक प्रति छात्र 300/– रुपये और प्रति छात्रा को 400/– रुपये की स्वीकृति प्रदान की जाती है।19

अध्याय तृतीय

(1) राजगढ़ जिले में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की स्थिति :–

मध्यप्रदेश के राजगढ़ जिले में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के विकास के प्रयासों का आरम्भ वर्ष 1946 में महान समाज सेवी श्री ठक्कर बाबा की अध्यक्षता में गठित समिति द्वारा अनुसूचितजाति एवं जनजाति की स्थिति के सर्वेक्षण से माना जा सकता है। वर्ष 1956 में नवीन मध यप्रदेश के निर्माण के पूर्व की चार इकाई में मध्यप्रदेश, महाकौशल, विंध्यप्रदेश तथा भोपाल राज्य में शिक्षा सामाजिक तथा आर्थिक कार्यक्रमों को प्रमुखता देते हुए कल्याण केन्द्रों के माध्यम से उनका

क्रियान्वय किया गया था। वर्ष 1956 में राज्य पुनर्गठन के उपरान्त अर्थात मध्यप्रदेश के निर्माण के बाद राजगढ़ जिले में आदिम ज़ाति कल्याण के लिए कार्यक्रम संचालित करने में चौथी योजना काल तक इस विभाग की प्रमुख भूमिका रही है। विभाग द्वारा संचालित विकासीय योजनाओं में शिक्षा के क्षेत्र में संचालित कार्यक्रम प्रमुख हैं। क्योंकि शिक्षा के प्रसार से ही एक जागृत, मनोवैज्ञानिक और मानसिक दृष्टि से सशक्त समाज का निर्माण सम्भव है।1

विभागीय संरचना : मध्यप्रदेश

आयुक्त आदिवासी विभाग (राज्य स्तर विभागाध्यक्ष)

संचालक अनुसूचित जाति विकास

संचालक आदिम जाति क्षेत्रीय विकास योजना

संचालक, आदिम जाति अनुसंधान एवं विकास संस्थान

जिला स्तर, राजगढ़ :–

कार्य :– जिला स्तर पर विभागीय योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए आदिवासी 19 जिले में सहायक आयुक्त एवं अनुसूचितजाति बहुल 26 जिलों में जिला संयोजक कार्यरत हैं।2

मध्यप्रदेश के राजगढ़ जिले के संदर्भ में अनुसूचित जाति एवं

अनुसूचित जनजाति

ऐतिहासिक स्थिति :–

राजगढ़ जिसका वास्तविक नाम झन्झनीपुर हुआ करता था। जिले के रुप में मई 1948 में मध्य भारत के गठन के बाद अस्तित्व में आया। इसके पूर्व जिले का क्षेत्र राजगढ़, नरसिंहगढ़, खिलचीपुर सम्पूर्ण रुप से और देवास जूनियर देवास सीनियर और इन्दौर राज्य में आंशिक रुप सें सम्मिलित था। राजगढ़ मध्यकालीन उठम राजपूतों द्वारा शशासित राज्य का मुख्यालय और परमार वंश की एक शाखा हुआ करता था। कालान्तर में यह देहली सुल्तान और मुगल साम्राज्य की जागीर के रुप में रहा। इस राज्य की पहली राजधानी दुपाड़िया थी जो कि वर्तमान में शाजापुर जिले का एक भाग है। बाद में राजधानी राजगढ़ से 19 कि.मी. की दूरी पर स्थित रतनपुर हो गई। तत्कालीन शशासक मोहन सिंह ने मुगल सेना कि आवाजाही से होने वाले व्यवधानों को ध्यान में रखकर वर्तमान राजगढ़ को 1640 में भीलों से जीत लिया और वर्ष 1645 में अपने मुख्यालय को यहाँ स्थानांतरित करते हुए इसे राजगढ़ नाम दिया।3

वर्तमान में जिला 7 तहसीलों एवं 8 उप तहसीलें, 6 जनपद पंचायतें, 627 ग्राम पंचायतों के रुप में गठित है जिले में 13 शशहरी क्षेत्र हैं। राजगढ़ जिला उत्तर में गुना, दक्षिण में शशाजापुर, पूर्व में सीहोर

व विदिशा और पश्चिम में राजस्थान राज्य के झालावाड़ जिले से घिरा हुआ है।

भौगोलिक स्थिति :–

राजगढ़ जिला मालवा के पठार के उत्तरी भाग में स्थित है जिले का विस्तार 23.28 डिग्री से 24. 18 डिग्री उत्तरी अक्षांश के बीच और 76.11 डिग्री से 72.20 डिग्री देशान्तर पूर्ण के बीच है। जिले की समुद्र तल से औसत ऊँचाई 390 मीटर है। जिले में औसत वर्षा 800 से 1200 मि.मी. होती है।

परंतु विगत पांच वर्षो में वर्षा का औसत 800 मि.मी. से कम रहा है। जिले का कुल भौगेलिक क्षेत्र 6163 वर्ग कि.मी. है जिसमें 176.36 वर्ग कि.मी. (4:) वन क्षेत्र है। जिले का दो तिहाई भू–भाग पहाड़ी और असमतल है। जिले की भूमि को मुख्य रुप से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। जिसमें राजगढ़ और खिलचीपुर की अधिकांश भूमि पथरीली और कम उपजाऊ है। व्यावरा और नरसिंहगढ़ का थोड़ा भाग पहाड़ी होकर अधिकतर भाग समतल एवं उपजाऊ है। सारंगपुर और जीरापुर तहसील का भू–भाग समतल होकर अधिक उपजाऊ है। राजगढ़ जिले की मुख्य नदियाँ नेवज, पार्वती, कालीसिंध और घोड़ापछाड़ हैं जो जिले के पूर्व से पश्चिमी मध्य और उत्तर में बहती हैं। कुछ वर्ष पूर्व तक इन नदियों में पानी वर्ष भर रहा करता था। छोटी नदियों में गाड़गंगा, अजनार, छापी ओर दूधी का नाम उल्लेखनीय है।4

अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की स्थिति :–

वर्ष 2001 में जनगणना की अनुसार जिले की जनसंख्या 12.54 लाख थी जो 2.62 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि की दर से बढ़कर वर्तमान में लगभग 15.16 लाख हो गई है। जिले की अधिकांश जनसंख्या 82. 67 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र में और मात्र 17.33 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों में निवास करती है। जिले की कुल जनसंख्या में 18 प्रतिशत अनुसूचित जाति एवं 3.3 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति सम्मिलित है। जिले में लिंग अनुपात की स्थिति राज्य की औसत 919 स्त्री प्रति हजार पुरुष के विरुद्ध 932 व 6 वर्ष से कम आयु समूह में राज्य 932 स्त्री प्रति हजार पुरुष के विरुद्ध 936 है। ग्रामीण क्षेत्र में यह अनुपात राज्य का 939 व राजगढ़ का 941 स्त्री प्रति हजार पुरुष है।

वर्ष 2002–03 के बी.पी.एल. सर्वे के अनुसार जिले की जनसंख्या का लगभग 50 प्रतिशत भाग गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करता है जिले में विकास खण्ड वार बी.पी.एल. परिवारों का विवरण नीचे सारणी नं. 1 में ग्राफ के माध्यम से दर्शाया गया है।5

राज्य में विधान सभा की कार्यविधि 5 वर्ष की होती है। किन्तु यदि राज्यपाल चाहे तो निश्चित समय से पूर्व भी विधानसभा भंग कर सकता है। राज्य विधान सभा का उपयुक्त कार्यकाल जब आपात् की उदघोषणा प्रवर्तन में है आपातकालीन स्थिति के समाप्त होने के उपरान्त 6 माह की कार्यविधि से अधि

ाक नही बढ़ाया जा सकता है।

मध्यप्रदेश विधानसभा में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति का प्रतिनिधित्व एवं भूमिका :–

संविधानप में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए संसद एवं राज्य की विधान सभाओं में स्थान सुरक्षित किए गये हैं। वर्तमान में विधानसभाओं में कुल 547 स्थान सुरक्षित हैं। इसी प्रकार पंचायती राज संस्थाओं नगर–पालिकाओं और नगर निगमों में भी अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान सुरक्षित किए गये हैं।

जनप्रतिनिधियों के निर्वाचन के समय से ही जनता अपने प्रतिनिधियों से कुछ अपेक्षायें तथा आकांक्षायें रखती हैं जिन्हें चुने हुए प्रतिनिधि को पूरा करना उनका कर्तव्य होता हैं। संसदीय प्रणाली के लोकतंत्र में ग्राम पंचायतों से लेकर विधान सभा और लोकसभा प्रतिनिधि संस्थाओं के रुप में मान्यता प्राप्त निकाय हैं। इसीलिए विधायिका को जनता की आकांक्षाओं का दर्पण कहा जाता है।

भारत के संविधान के अंतर्गत ऐसी प्रतिनिधि संस्थाओं में विधान निर्माण की श्शक्ति केवल विध ाायिका अर्थात् संसद और राज्य विधान मंडलों को प्रदत्त की गई है। वास्तव में विधायिका एक बहुआयामी शब्द है और इसके अंतर्गत लोकसभा, राज्यसभा, सभी राज्यों की विधान सभायें तथा विध ाान परिषदें सम्मिलित होती हैं जिनमें जनता के द्वारा चुने गये प्रतिनिधि सदस्य होते हैं जो जनता की समस्याओं के निराकारण तथा उनके हित को दृष्टिगत रखते हुए अनेक मामले विधान मंडलों में उठाते हैं; उनका निराकरण करते हैं और आवश्यकतानुसार विधान निर्माण भी करते हैं।

हमारे देश में संसदीय श्शासन प्रणाली को अंगीकृत किया गया है। संसदीय प्रणाली के अंतर्गत संसद/विधान मंडलों की संरचना मुख्यतः विधायी एवं वित्तीय कार्यों के लिये की गयी है। विधायिका का यह भी कार्य है कि वह कार्यपालिका के कार्यों की निगरानी करे तथा उस पर अंकुश रखें। इसके अलावा, नौकरशाही के विरुद्ध जनता की शिकायतें प्राप्त करना, जनता की शिकायतों को दूर करना तथा जनता को राहत पहुँचाना भी विधायिका का कार्य है।

आज संसदीय आम चुनाव में जनता की बढ़ती भागीदारी तथा जागरुकता के फलस्वरुप जनता अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हो रही है। अतः विधायक से जनता की अपेक्षाएं भी बढ़ रही हैं। जनता अपनी छोटी समस्या का समाधान अपने विधायक से चाहती है, चाहे वह पेयजल की आपूर्ति करवाना हो या सीवर का निर्माण हो । इन समस्याओं के निराकरण में जनता अपने विधायक की सहभागिता चाहती है। इसके अलावा जनता यह भी चाहती है कि बिजली, सड़क की कमी, जन–उत्पीड़न, भ्रष्टाचार जैसी समस्यायें भी विधायक की दिनचर्या में शामिल रहें और विधायक जनता की समस्याओं का समाधान करते रहें।

सांसद/विधायक चाहे सदन में हों या सदन के बाहर, वह जनता और सरकार के बीच एक कड़ी का कार्य करते हैं। आम–आदमी मदद के लिये उन्हीं के पास आता है। जन समुदाय के कल्याण हेतु रचनात्मक योगदान करने में एक सच्चा जन प्रतिनिधि आनंद का अनुभव करता है। अतः विधायक को सदन में अपनी बात रखने के समुचित अवसर प्राप्त होने चाहिये।

विधायक अथवा सांसद अपनी इस महत्वपूर्ण जिम्मेंदारी का निर्वहन कई प्रकार से कर सकते है। कानून निर्माता की प्राथमिक भूमिका में उन्हें समाज की जरुरतों के अनुरुप विधान बनाने का महत्वपूर्ण अवसर मिलता है। इसके अतिरिक्त, उनके पास विभिन्न संसदीय विकल्प उपलब्ध हैं, जिनके माध्यम से वे सार्वजनिक हितों के रक्षक बन सकते हैं और कार्यपालिका की जवाबदेही

भारत विभिन्न धर्मो, मतों, सम्प्रदायों, संस्कृतियों, प्रजातियों, जातियों और जनजातियों की कर्म भूमि रहा है। इन सभी ने यहां की सामाजिक व्यवस्था और संगठन के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका और उन्हें एक विशिष्ट स्परूप प्रदान किया है। भारत में विविधता में एकता है। भारतीय समाज के प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक आदिम समूहों, वनवासियों, पिछड़ी जातियों का उल्लेख प्राप्त होता रहा है। वैदिक एवं उत्तरवैदिक काल तथा महाकाव्य काल में भी इनका उल्लेख हुआ है।

भारतीय जनजातियां जब आर्थिक एवं सामाजिक समानता तथा राजनैतिक स्वतंत्रता के लिए संगठित हो रहीं थी तभी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इनके विकास के लिए मार्ग खोजने का प्रयास किया। स्वतंत्रता के पश्चात संविधान में आरक्षण की व्यवस्था के लिए जनजातियों को सूचीबद्ध किया गया किया गया। ये सूचीबद्ध जनजातियां ही अनुसूचित जनजातियां है। भारत में विभिन्न जाति, धर्म एवं सम्प्रदाय के लोग निवास करते है। जिसमें भारत की कुल जनसंख्या के लगभग आठ प्रतिशत भाग में जनजाति निवास करती है। 1981 की जनगणना के अनुसार भारत में 5.16 करोड़ जनसंख्या जनजातियों की थी। जो बढ़कर 1991 में 6.78 करोड़ हो गई। वर्तमान में यह संख्या आठ करोड़ से अधिक हो चुकी है। प्रायः अधिकतर जनजातियां ऐसे भौगोलिक क्षेत्र में निवास करती हैं। जहां सभ्यता का प्रकाश बहुत कम पहुंच पाता है। आज भी अनेक जनजातियां आदिम स्तर पर ही अपना जीवन यापन कर रही है। जबकि दुनिया के अधिकांश देश प्रगति के पथ पर काफी आगे बढ़ चुके हैं। देश की कुल आबादी का 16.20 प्रतिशत भाग अनुसूचित जाति वर्ग का है जिसका 36.7 प्रतिशत भाग आज भी गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहा है। मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के उत्थान और राजनैतिक और सामाजिक समानता की दिशा में बहुआयामी प्रयास किये जा रहे हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 332 के अनुसार प्रत्येक राज्य की विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण किया गया है। मूल संविधान में विहित

दस वर्ष की अवधि को अनुच्छेद 334 के अनुसार संविधान के 8वें संशोधन अधिनियम 1959 द्वारा 20 वर्ष के लिये विस्तारित किया गया। इसके बाद संविधान के 23वां संशोधन अधिनियम 1969 द्वारा इस आधार पर कि उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो पाई इसे 30 वर्ष तक विस्तारित किया गया। संविधान के 45वां संशोधन अधिनियम 1980 द्वारा जो 25 जनवरी 1980 को पारित किया गया था। इसे बढ़ाकर 40 वर्ष कर दिया गया। संविधान के 62 दें संशोधन अधिनियम 1989 द्वारा 20.12.1989 से इस अवधि का 10 वर्षो के लिये और बढ़ा दिया गया है। और अनुच्छेद 334 में प्रयुक्त शब्द चालीस के स्थान पर शब्द "पचास" रख दिया गया। अब 1999 में संविधान संशोधन अधिनियम 1999 द्वारा इसे बढ़ाकर संविधान लागू होने की तारीख से 60 वर्ष कर दिया गया। संविधान के 95वें संशोधन अधिनियम 2009 द्वारा अब शब्दावली 60 वर्ष के स्थान पर 70 वर्ष कर दिया गया है। अर्थात् अब इन वर्गो के लिए लोकसभा और राज्यसभा एवं विधान सभाओं में आरक्षण 70 वर्ष तक बना रहेगा अर्थात 2019 तक।

संविधान के अनुच्छेद 168 के अनुसार प्रत्येक राज्य में एक विधान मण्डल की व्यवस्था की गई है। विधान मण्डल राज्यपाल तथा विधान सभा एवं विधान परिषद दो सदनों से मिलकर बनता है। म.प्र. में इसका एक सदन है विधानसभा इसके सदस्यों का निर्वाहन राज्यों के क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष मतदान द्वारा होता है। विधानसभा का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है। विधानसभा जनता का सदन है इसके सदस्यों की संख्या राज्य जनसंख्या के आधार पर निश्चित की जाती है। अनुच्छेद 332 के अनुसार प्रत्येक राज्य की विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान सुरक्षित है। भारत परिसीमन आयोग ने 19 जनवरी 2007 को मध्यप्रदेश विधानसभा के इन 230 क्षेत्रों का परिसीमन कर परिवर्तन किया है। जिसमें क्रमशः 35 स्थान अनुसूचित जातियों और 47 अनुसूचित जनजाति के लिये आरक्षित स्थान प्रस्तावित है। परम्परागत क्षेत्रों के परिसीमन में परिवर्तन से मध्यप्रदेश विधानसभा निर्वाचनों में राजनीतिक समीकरण भी बदलेंगे। 2001 की जनगणना के अनुसार जिला राजगढ़ में अनुसूचित जाति की जनसंख्या 218706 तथा अनुसचित जनजाति की जनसंख्या 47370 निवास करती है। राजगढ़ जिले में सारंगपुर विधानसभा क्षेत्र अनुसूचित जाति वर्ग के लिए आरक्षित है। शोधार्थी ने अपने शोध कार्य में मध्यप्रदेश विधानसभा में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के विकास के विश्लेषणात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया है अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति का विकास स्वतंत्र भारत में किस प्रकार प्रारम्भ हो सका।

विकास एक जटिल एवं निरन्तर प्रक्रिया है। इसे विभिन्न दृष्टिकोणों से चित्रित किया गया है। समाजवेत्ता विकास की व्याख्या सामाजिक विभेदीकरण तथा सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में करते है। अर्थशास्त्री विकास को आर्थिक उत्पादन एवं उच्च जीवनयापन के ढंग से सम्बद्ध करते है, प्रशासनिक

अधिकारी विकास की खोज एवं प्रसार दतरशाही अनुपालन के माध्यम से करते है। इन सभी दृष्टिकोणों के पीछे सामान्य सी बात है– "मानव जीवन क गुणात्मक पक्ष में वृद्धि।"

सामाजिक विकास की पूर्ण व्याख्या एक समाज विशेष की सांस्कृतिक भौगोलिक क्षेत्र एवं समय के संदर्भ में ही हो सकती है। इस दृष्टि से विकास के अनेक चरण बताये गये है। प्रत्येक चरण "प्रगति" का घोतक माना जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से सामाजिक विकास, प्रगति का पर्यायवाची हो जाता है। तथापि दोनों में सूक्ष्म अन्तर है, यथा प्रगति 'तर्क और बुद्धिवाद' की परम्परा से जुड़ी होती है। जबकि विकास क्षेत्रीय विशेषताओं से जुड़ा होता है। स्वतंत्र भारत के पहले अनुसूचित जाति एवं जनजाति का विकास कैसे हुआ होगा। आखिर अनुसूचित जाति एवं जनजाति क्या है। मानव समाज का एक विशिष्ट प्रवर्ग "जनजाति" है। आदिवासी, वनवासी, आदिम जाति जैसे जनजाति के पर्यायवाची शब्द है। इन्हें देशज समाज भी कहा गया है।

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

आदिवासी कविता के विविध परिदृश्य

ललिता कु. मीणा
शोधकर्ता
राजकीय महाविद्यालय, कोटा
कोटा (राज.)

विगत कुछ दशकों से हिन्दी साहित्य से आदिवासी विमर्श की चर्चा जोरो पर हैं। शताब्दियो ये वर्ग समाज की मुख्यधारा से कटकर जीवन यापन कर रहा हैं। आजादी के लम्बे अन्तराल पर भी उनकी स्थिति में कोई सुधार नही हो रहा है। उन्हें हाशियो पर जीवन जीना पड रहा हैं सेज के नाम पर उनके जंगल छीनकर काटे जा रहे हैं तथा उस भूमि को बहुराष्टीय कम्पनियों को बेचा जा रहा हैं। उनकी धरोहर अथवा उनकी आजीविका का साधन को छीनकर नष्ट किया जा रहा हैं। जंगल से उनका पलायन हो रहा है। नक्सलवादी कहकर सरेआम उन पर जुल्म ढाये जा रहे हैं। वैश्वीकरण के युग में भी उन्हें अपनी आधुनिक आवश्यकताएँ भी मुहैया नही होती । शिक्षा और संस्कति से वंचित ये लोग अपनी संस्कति ओर पहचान को बनाये रखने में संधर्षरत हैं।

एक जर्मन कहावत है कि जंब जगल मरता हैं तब उसके साथ इंसान भी मरता हैं । वस्तुत जंगल जीवन के अस्तित्व विकास प्रगति और उतम स्वास्थ्य के लिए अपरिहार्य हैं। वै विकास के नाम पर जंगलों कि अंधाधुंध कटाई हो रही हैं। वन क्षेत्र कम होनें से बाढ सूखा भूस्खलन जैसी समस्याएँ उभरी हैं। वहीं जलवायु असन्तुलन पर्यावरण प्रदूषण तथा मौसम मे अनियमित्तताओं की बात आयी हैं

समकालीन आदिवासी हिन्दी कविता में आदिवासियों की सामाजिक राजनीजिक आर्थिक तथा ध र्मिक पर रचनाकारों ने सूक्ष्मता से चित्रण किया हैं ये लोग आजीविका के लिये पूणत जंगल पर निर्भर हैं। जंगल पर निर्भर हैं। जंगल में उत्पन्न होने वाले व्रक्षों के फूल पत्ते फलो तथा लकडी विविध प्रकार से उपयोग में लाकर जीवन यापन करता हैं। किन्तु जब ये पूँजीपतियों दारा दलालों ठैकैदारों को बेच दिया जाता हैं तो ये सीना तानकर खडे हो जाते हैं। महादेव टाप्पो की कविता देखिए जब जंगल की सारी विदोही आवाजों को जंगल के पेडों के हरेपन को हरे भरे होकर सीना तान पहाडों पर धाटियों

में उगने लहराने की उनकी आकांक्षाओं को महुए कि बोतल मे डुबाने की हो साजिश इस जंगल का कवि रहेगा भला कैसे चुप वह धनुष उठायेगा प्रत्यंचा पर कलम चटायेगा साथ में बांसुरी और मादल भी जरूर उपयोग जंगल के हरेपन को बचाने की खातिर जंगल का कवि मांदल बजायेगा बांसरी बजायेगा चढाकर प्रत्यंचा पर कलम। सदियों से जारी क्रूर तथा कठोर न्याय व्यवस्था ने जिनकी सैकडो पीढियो आजीवन वनवास दिया उस आदिम समूह का मुक्ति साहित्य हैं आदिवासी साहित्य इस साहित्य में वेदना हें और अपने ढंग की अभिव्यक्ति भी हैं ।पहाडो की गोद और कंटीली झाडियों में बस्ती बस्ती जिनके जीवन का हर क्षण श्रृंखलाबध्द हुआ हैं साहित्य ऐसे ही जंगलवासियों को मुक्ति की आशा दिलवाले वाला हैं। आस्था को ही देखे उसने कहा नाचों सब झूमने लगे उसने कहा गाओं सब गुनगुनाने लगे उसने खिडकी कहा तो सब खुल गए उसने गलीचे कहा तो सब बिछ गये शेर कहने पर दहाडे भेड कहने पर मिमियाये जब प्रशन नही होते तब वहा होता हैं जब प्रशन होगे तब वहा नही होगा तमाम उपेक्षाओं के बावजूद ये संर्धषरत हैं इन्ही में से कुछ लाकर अभिव्यक्ति के सारे खतरे उठाकर सृजन में संलग्न हैं आदिवासी की तरहा ही आदिवासी साहित्यकार भी अपनी क्षमतावान सृजनात्ताक प्रतिभा के बावजूद गुमनामी के अंधेरे में खो जाता है उसने मेरी फसल ले ली उन्होने मेरी जमीन पर कब्जा किया उन्होने मेरे शरीर पर नियन्त्रण रखा अब मेरे मन को दबाना चाहता हैं भाई उन्हे क्यों नही मिलेगा यश आदिवासी अपनी अस्मिता एंव अस्तित्व के प्रति जागृत हो रहे हैं। इस चेतना के साथ ही अपने अस्तित्व तथ अस्मिता के संघर्ष में कविता को अपना मुख्या आधार बनाया हैं। आप तो आप हैं आपकी हमारी बराबरी कैसी बे बात ठहाके लगा सकते हैं आप बेमतलब उदास हो सकते हैं आप आप भाई बाप हैं दुखी सुखी होने की पूरी आजादी हैं आपको हमारी क्या बिसात हमारी क्या औकात हम हँस नही सकते हम रो नही सकते आदिवासी अपनी अनुभूतियों पीड़ा और सम्वेदना को अपने अनुभव की ठोस भाषा में सटीक अभिव्यक्ति दी हैं। भोगे हुए अनुभव का दम्ध यथार्थ हैं इस कविता में । जल जमीन और जंगल से बेदखल आदिवासी के विस्थापन की समस्या को डॉ हरिराम मीणा के शशब्दो में देखिए देखो तुम देख रहे हो कि वो आ रहे हैं/तुम्हारी नसें तन रही हैं/तुम्हारी भुजाएँ फडक रही हैं/तुम्हारे तीन कमान तने हैं/तुम एकजुट हो मगर तुम कुछ नही कर रहे देखो आखिर तुम्ह खदेड़ ही दिया न/तुम्हारी जगीन से तुम्हें नेस्तनाबूद करने के लिए/पर फिर भी तुम चुप हो क्यों आखिर क्यों

आदिवासी कवि मूल्यों के निकट हैं ये निकटता ही उसकी जिजीविषा का स्त्रोत्र हैं। ये आधुनिक ओर आदिम दोनो हैं। अनुज लुगुन की कविता का अधोषित उलगुलान आधुनिकता और परम्परा के सकमण के साथ भविष्य की सूचना देती

कट रहे हैं वृक्ष/माफियाओं की कुल्हाड़ी से और/बढ रहे हैं कंकीट के जगंल /दोडू जाए तो कहाँ जाये तो कहाँ जाए/कटते जंगल में या बढते जंगल में ।

निर्मला पुतुल विकास के नाम पर आदिवासियों के व्यापक विस्थापन को देखकर प्रश्न करती हैं पर तुम्हीं बताओं यह कैसे सम्भव है/आँख रहते अंधी कैसे हो जाउँ मैं कैसे कह दूँ रात को दिन खून को पानी कैसे लिख दूँ।

आजादी के लम्बे अंतराल पर भी आदिवासी विकास के नाम पर अस्मिता को गिरवी और हाशिए पर रखकर क्या कुछ हांसिल किया। भूख के सवाल आज तक कायम रहे बेरोजगार बढी हैं हमने जीत ली आजादी/देशज जनता और देशज/ विकास की/लेकिन ये क्या/हमारी जमान हमारा गाँव/हमारी संस्कुति हमारा जंगल/हमारा पशु पक्षी/सब लूट के ले जा रहे हैं।

समाज के सवालों के साथ कविता खड़ी है। चाहे वह पूंजी और पानी का सवाल हैं अथवा पक्षी और पूर्वज का। अगर कोई नही खडा है तो तथाकथित सभ्य समाज । तो तीतर को खा सकता है पर पालता आदिवासी है।

सामान्य मानव और आदिवासी के अवनिअम्बर के अंतर को देखिए
हे आदिवासी तू कैसे राक्षस बना और वो कैसे इंसान बना
है आदिवासी तू कैसे वानर बना और वो कैसे मानव बना
हे आदिवासी इस देश का मूल निवासी होते हुए भी
तू कैसे वनवासी बना और वो कैसे मूलनिवासी हुआ।

देश की विकाश यात्रा के इतिहास को लिखने वाले भले ही देश की आदिम जनता को न जानते हो लेकिन कविता जानती है। कविता उस आदमी के संघर्ष को जानती है जिसने पहली बार रंगो और चित्रों मे उसे पहाड. की कंदराओं में उतारा हैं। शशी भूपण मिश्र की कविता हमें असभ्य रहने दो पर बरबस जाता

बाबा आदम के जमाने से
जब शायद तुम भी नहीं आये थे यहाँ
तब से इस मिटटी और इसी जंगल में
जीती आयीं हैं हम्मरी कई कई पुश्ते ।

सरकार की नीतियों कें फलस्वरूप आदिवासी समाज अपनी जड़ो से विस्थापित होने पर मजबूर हुआ हैं। आदिवासी समाज मातसत्तात्मक रहा हैं। महिलाओं को वह हक बाहरी धुसपैठ व रूढ़िवादिता के कारण पिछड़ने लगा। सानवणे आदिवासी औरत की सम्वेदना को उकेरते है जवानी में वेश्या बुढापे

में डायन ऐसे ही कहते लोग/एक एसी चीज जिसे धाट में बाँट में/जहाँ मिले थाम लो/जब भी चाहे अगं लगा लो/पूरी हुई हवस तो त्याग दो चीख न पुकार।

आदिवासी कविता वस्तुतः करवट की कविताएँ हैं करवट लेते समाय और समाज और सम्वेदना की कविता। जिस समाज में अंगडाई लेना नकारात्मक अर्थ छवि की निर्मित हो वहाँ करवट की बात करना तो बगावत की तरहा हैं और बगावत समाज को पसन्द है और न गैर आदिवासी कविता की। इसलिये आदिवासी कविता की नव्यता को स्वीकार में वैचारिक करवट आवश्यक हैं कोई नहीं बोलना इनके हालत पर/कोई नहीं बोलता जंगलों कें कटने पर/पहाडों के टूटने पर/नदियों के सूखने पर/कोई कुछ नहीं बोला ।

'स्टेज' कविता देखिए–

'और वे मंच पर खड़े होकर/हमारा दुख हमसे ही कहते रहे/हमारा दुख हमारा ही रहा/कभी उनका हो नहीं पाया.....

आदिवासीयों की दयनीय दशा का चित्रण वाहरु सोनवणे के शब्दों में–

यहाँ रहकर क्या करें/यहाँ हमें न सहारा है/न पेट के लिए चारा है/न काम है/न धंधा है/काम मांगने गए तो/किमा लाठी से वार/हमारा विश्वास हो गया घायल।

स्त्री को मनुष्य के रुप में स्वीकारने की वकालत कवि करते है–

एक मुल्क/जहाँ देवता को देते हैं लड़कियों का चढ़ावा/मुर्गियों–बकरियों के माफिक/जवान होते–होते/बांहों में भरो।

आदिवासी स्त्री को हाशिए पर ढकेल दिये जाने की पीड़ा के खिलाफ एक सच्चे प्रतिरोध को देखिए– आज की तारीख के साथ/कि गिरेंगी जितनी बूंदे लहू की पृथ्वी पर/उतनी ही जन्मेगी निर्मला पुतुल/हवा में मुट्ठी बंधे हाथ लहराते हुए।

इनकी जमीन ही नहीं बल्कि इनके उत्पादनों और मजदूरी का भी शोषण किया जाता है। उत्पादनों की सही कीमत न मिलने पर धीरे–धीरे ये आवाज उठाने लगे हैं–

एक पथली चिरौंजी/के बदले/अब भी क्यों मिलेगा इतना ही नमक।

आदिवासी जनता आर्थिक संघर्ष के साथ चुनौतियों का सामना कर रही है। संविधान द्वारा प्रदत्त आरक्षण के उपरान्त भी ये असहाय है। विस्थापन की समस्या सरकारी योजनाओं के कारण ही है। शोषण की पीड़ा का मार्मिक चित्रण–

हम चाहते रहे संतुलन/तुक करते रहे असन्तुलित/तोड़ते रहे एकता मिटाते रहे/हमारी पहचान/खदेड़ते रहे हमें हमारे ही जंगल से हमें/उजाड़ते रहे विकास के नाम पर हमारी ही

बस्तियाँ/बसाने के नाम पर ठेलते रहे हाशिए पर/अब तुम जाओ/हम कुछ नहीं बता सकते तुम्हें।19

आदिवासियों को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उनकी प्रकृति को रगणिका गुप्ता की कविता 'आदिम दर्शन' में कुछ इस प्रकार से अभिव्यक्ति पाते हैं–

पत्थर युग, लौह युग से होता/गुफाओं में/उकेरता, लीकता/हथौड़े की चोट खा–खा बनता/चकमक पत्थरों की चकाचौंध से/आग निकालता/लकड़ियाँ जलाता/लकड़ियाँ बुझाता/आग को वश करता/जिन्दगी सहज बनाता/प्रकृति से होड़ लगाता/प्रकृति से डरता/प्रकृति को डराता/प्रकृति को प्यार करता।

आदिवासियों में भी अंधविश्वास व्याप्त है। कवियित्री ज्योति लकड़ा ने ऐसे ही डायन–बिसाही जैसे अंधविश्वास के खिला 'टोहनी' शीर्षक कविता में महिलाओं के उत्पीड़न पर कटाक्ष किया है–

न्यौता नहीं जाता उसे/शुभ कार्यों में/नहीं दिया जाता उसकी गोद में नवजात शिशु/नहीं दिखायी जाती उसे नई दुल्हन/खिलाया जाता है उसे कच्चा कलेजा/मुंडवा कर केश/जुमाई जाती है वह पूरे गाँव में/वहनाकर ठुठकी बढ़नी

बांसती कुजूर की कविता 'अब जागो' में छोटा नागपुर के संसाधनों, जिन पर आदिवासी अपना अधिकार समझकर दावा करते हैं, कवयित्री स्मरण करती हुई पुकार उठती हैं– ओ मेरे हीरा नागपुर/बहुत सो लिए/भोर हुई अब जागो/तुम्हारा हीरा और लोहा/ले भाग रहें हैं दुसरे देश के लोग/उठो–उठो अब/पकड़ो–पकड़ो, करो न देर/भोर हुई अब जागो।

प्रतिदिन, प्रतिपल कैसे उनके पहाड़ों और चट्टानों को दीमक की तरह खाये जा रही है, आधुनिक सभ्यता, आधुनिक तकनीक की संस्कृति। वे कह उठते हैं– दिन–रात, पल–छिन, हर क्षण/रेलगाड़ी, लाइन ट्रक–डम्पर और पार्सल/अंदर ही अंदर सब छेद/कर रहें है चट्टनों में/दीमक की तरह/कोल्हान के सारण्डा–वन को कर रहे हैं खोखला।

पर्यावरण के प्रति भी वे चिन्तित हैं– सड़कें बनाने की खातिर/पेड़–पौधे काट रहे हैं''..... ''सारण्डा–वन में कटाई/अभियान चला रहे हैं/धीरे–धीरे पर्यावरण बिगाड़ रहे हैं/क्या सम्भव होगी ऐसी मानसून वर्षा।

आदिवासी कवि ओली मिंज ने कल कारखानों के फैलते जाल और उनसे उत्पन्न प्रदूषण पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं–

चिमनियों के नीचे/जिन्दगी गुजारना तो/बस इक बहाना है/अपनी जिन्दगी को/मौत के करीब ले जाने का/यह अंदाज पुराना है।

जातिप्रथा के बरक्स आदिवासी समाज के मानवतावाद को उजागर करते हैं– शायद मैं आदमी

हूँ/लेकिन जन्मकुंडली से/ब्राह्माण हूँ/क्षत्रिय हूँ/वैश्य हूँ/शुद्र हूँ/इनमें से/जो सबसे पुराना/वही मेरा दावा/शायद मैं आदमी हूँ।

लड़कियाँ पैदा होने पर आदिवासी समाज में खुशियाँ मनायी जाती हैं। गैर आदिवासी में विपरीत स्थिति है। भाजपा के मुख्यमंत्री श्री अर्जुन सिंह ने 5 हजार का अनुदान इस कुप्रथा को प्रोत्साहित किया। लड़कियों का होना एक बोझ है की अवधारणा को पुष्ट किया–

तुम डरते हो मेरा सामना करने से/क्योंकि तुम बौने हो/इसलिये धो ही डालते हो मेरा भ्रूण/तुम डरते हो मुझसे/इसलिए धर्म ग्रन्थों में/बराबरी और इंसा का दर्जा नहीं दिया मुझे।

निर्मला पुतुल उन सन्दर्भों को खंगालती हैं जिनमें स्त्री के अस्तित्व को पुरुष की सत्ता से अलग स्तर पर स्थापित करती है। पुरुष की नजर में आखिर वह क्या है? उसका अस्तित्व केवल प्रेम, घर तथा देह तक सीमित है या वह इससे कुछ इतर भी है–

क्या तुम जानते हो?/एक स्त्री के समस्त रिश्ते का व्याकरण/बता सकते हो तुम/एक स्त्री को स्त्री दृष्टि से देखते/उसके स्त्रीत्व की परिभाषा/अगर नहीं/तो फिर जानते क्या हो तुम/रसोई और बिस्तर के गणित से परे/एक स्त्री के बारे में.....

स्त्री मात्र देह नहीं, अपितु संघर्ष की मूरत या कहें साक्षात गाथा है–

उन्होंने अपने जूड़े में/खोंस रखा है साहस का फूल/कानों में उम्मीद को/बालियों की तरह पिरोया है/धरती को सर पर घड़े की तरह ढोए/लचकती हुई चली जा रही हैं/उलगुलान की औरतें/धरती से प्यार करने वालों के लिए/उतनी ही खूबसूरत/और उतनी ही खतरनाक/धरती के दुश्मनों के लिए।

शोषण की इंतहा का चित्रण निर्मला पुतुल के शब्दों में–

कब तक हमारे हिस्से का समुद्र/लीलकर बुझाते रहेंगे/अपनी–अपनी प्यास/और चढ़ाते रहेंगे/निर्दोष मासूमों की बलि/उनके हिस्से का/अनाज छीनकर/आखिर कब तक।

साहस का परिचय देने पर क्या सलूक किया इन सरकारी मुआइन्दों या पुरुषों ने।

इसमें मेरा अपराध क्या था?–

लज्जा शर्म तो सब दिये हैं बस तुमने ही/अपने अंगों के लिए/इतनी अभद्र गालियाँ? इतना औघड़पन? पर मुझे क्यों नंगा किया? हजारों हाथ मुझ पर लपके/गुप्तांगों पर तीव्र प्रहार भी सहे/मालूम है/जुर्म क्या था मेरा/मैं उठ खड़ी हुई थी अपनी पहचान बनाने/आदिवासी होने पर भी मांगने की हिम्मत/की थी सरकार से।..... फिर क्यों हुई नंगी हुई लक्ष्मी सरेआम/अपेक्षाओं से परे था जो किया तुमने/अपने से लगने वाले तुम/क्यों छला तुमने?/जीने का हक नहीं छीन रहे

थे तुमसे/बस अपना अधिकार मांग रहे थे तुमसे/तुमने मुझे नहीं/पूरे समाज को नंगा किया/चाहे रेप करो, चाहे मर्डर/जूझेंगे तुमसे हम। कैसी विडम्बना है कि भारतीय संविधान के द्वारा प्रदत्त अधिकारों की मांग का प्रतिदान क्या मिलता है?

समकालीन आदिवासी साहित्य अपनी रचनात्मक दर्जा उनके विद्रोह से लेता है। वाहरु सोनवणे शोषित व्यक्ति का चित्रण किस प्रकार करते हैं– चाहे जो भी करें वे/हमें बोलना नहीं है एक भी शब्द/उनके खिलाफ/नहीं कबूल, तो फेर लो पीठ।

आदिवासी कविता में तथाकथित सभ्य समाज की भोगवादी मानसिकता को रेखांकित किया है। सभ्य समाज एक ओर आदिवासियों की भाषा रहन–सहन, चाल–चलन का उपहास उड़ाते हुए उन्हें असभ्य घोषित करता है तो दूसरी ओर आदिवासी स्त्री के प्रति उनकी कामुक दृष्टि लार टपकाती है। सांस्कृतिक शोषण, स्त्री शोषण, बाल शोषण, श्रम शोषण आदि शोषण के विविध रुपों से आदिवासी समाज त्रस्त है। कुलीन, तथाकथित सभ्य समाज के अत्याचारों पर निर्मला पुतुल व्यंग्य करती हैं–

मेरा सब कुछ अप्रिय है/उनकी नजर में/प्रिय है तो बस/मेरे पसीने से पुष्ट हुए अनाज के दाने ...../मेरी गहराई देह/मेरा मांस प्रिय है उन्हें।

सदियों से उपेक्षित, तिरस्कृत आदिवासी जाग्रत हो रहा है। दुख–दर्द, पीड़ा, कष्ट शोषण, अस्तित्व तथा अस्मिता के संकट की मार्मिक अभिव्यक्ति हो रही है। आदिवासी साहित्य का मूलधार है मानव। मानव को मानव के रुप में मान्यता दिलवाने तथा अपनी अस्मिता के लिए प्रतिबद्धता की प्रवृति ही आदिवासी साहित्य की पहचान है। उनके विविधवर्णी परिदृश्यों की झांकी को सजीव तथा जीवन्त करते हुए उनकी सभ्यता से रु–ब–रु करवाना ही मूल उददेश्य है।

अन्त में इन्हीं पंक्तियों के साथ–

कभी फूलों की तरह मत जीना
जिस दिन खिलोगे ..... टूटकर बिखर जाओगे
जीना है तो पत्थर की तरह जियो
जिस दिन तराशे गए ..... खुदा बन जाओगे।

संदर्भ सूची :–

1. आदिवासियों के अस्तित्व पर संकट, डॉ. आदित्य गुप्ता, युद्धरत आम आदमी, पृ.–61
2. आदिवासी साहित्य यात्रा, रमणिका गुप्ता, डॉ. विनायक तुकाराम, पृ.–2
3. तब 'वह'

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

महिला साक्षरता एवं विकास आज की आवश्यकता

कविता रायकवार
प्राचार्य
भोपाल डिग्री कालेज, भोपाल

सामान्य अर्थ में ज्ञान प्राप्त करना शिक्षा है जो जीवनपर्यन्त निरन्तर रूप में चलने वाली प्रक्रिया है। शिक्षा के सम्बन्ध में विभिन्न विचारकों ने अपनी–अपनी अभिव्यक्तियाँ दी हैं। साक्षरता को विकास की चाभी माना गया है। साक्षरता विशेषज्ञा मारिया लूइस के अनुसार उन्नति का शक्तिशाली आधार शिक्षा है। कोई भी कला सीखने का मूल आधार शिक्षा है। अब सवाल उठता है कि क्या है साक्षरता दृ निरक्षर लोगों को पढ"ने–लिखने लायक बनाना ही साक्षरता है। ऐसी शिक्षा आठ साल से चौदह साल तक के बच्चों और पन्द्रह साल तक की निरक्षर महिला तथा पुरुषों को उनके अनुकूल स्थान और समय में दी जाती है। अक्षर पहचान कराने के बाद लिखने पढ"ने तथा अन्य सम्बन्धित विषय में बातचीत कर जन–चेतना की अभिवृद्धि करना, साथ ही मानवीय गुणों का विकास करना और आनेवाली समस्याओं का समाधान तथा निर्णालेने में सक्षम करना इसका उद्देश्य है।

महिला साक्षरता आज की आवश्यकता

पद्यउांसीसी क्रान्ति से प्रभावित पद्यउांसीसी महिला ओलाम्दे द गोउसने १७९१ से महिला अधिकार की शुरुआत की। १८५३ में अमेरिकन महिला सोजोनोर टुथ ने महिला अधिकार के सम्बन्ध में बहस शुरू की। १८६५ मे एमिल डेविस और लिज ग्यारेट ने इंग्लैंड की प्रतिनिधिसभा में जाँन स्टुअर्ट मिल को एक विज्ञप्ति दी, जिसमें महिलाओं को शिक्षा, रोजगार, समान अधिकार, मताधिकार और पारिवारिक सम्मान के अधिकार की जोड"दार माँग की गई थी। उपर्युक्त अधिकारों के लिए विभिन्न समितियों का गठन किया गया। इसके लिए विभिन्न विरोध के कार्यक्रम आयोजित किए गए एवं आन्दोलन किया गया। वर्षों प्रयास के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ ने महिला–अधिकार के सम्बन्ध में एक आयोग गठन किया।

सन् १९७९ में महासन्धि प्रस्ताव पारित और अनुमोदन कर १९८० में इसकी घोषणा की गयी। इस महासन्धि की धारा दस में महिलाओं को शिक्षा के क्षेत्र में पुरुषों के बराबर अधिकार होने का उल्लेख है। पूर्व प्राथमिक शिक्षा, सामान्य शिक्षा, प्राविधिक शिक्षा, पेशागत उच्च प्राविधिक शिक्षा के साथ हरेक प्रकार के शैक्षिक संस्थान से स्नातक की उपाधि प्राप्त करने का अधिकार सुनिश्चित किया गया। छात्रवृत्ति, प्रौढ और कार्यमूलक साक्षरता कार्यक्रम के साथ ही खेलकूद, शारीरिक शिक्षा में भाग लेन का अवसर प्रदान करने की बात उल्लेखित की गयी। नेपाल में महिला साक्षरता को उत्प्रेरित करने के लिए विभिन्न जिलों में विभिन्न प्रकार के अपाङ्ग, दलित, जन–जाति, द्वन्द्व पीडितों के लिए छात्रवृत्ति का प्रावधान किया गया है। निरक्षर को साक्षर बनाने के लिए विविध कार्यक्रम सञ्चालन किया जाता है। फिर भी देश पूर्णतः साक्षर नहीं बन पाया। यूनेस्को के मापदण्ड अनुसार पन्द्रह साल से ऊपर के लोगों को कम से कम ९६ प्रतिशत लोगों को लिखने–पढ"ने लायक बनाया जाय तब ही निरक्षरतामुक्त देश घोषित किया जा सकता है।

यह सच है कि लाख प्रयासों के बावजूद राष्ट्र को निरक्षरता मुक्त नहीं बनाया जा सका फ़िर भी यह कहा जा सकता है कि तुलनात्मक रूप से स्थिति में कुछ सुधार हुआ है। वि. स. २००७ मे २.० प्रतिशत, २००८ मे पुरुष ६.५ः और महिला ०.७ः कुल ५.३ प्रतिशत, २०१८ में पुरुष १६.३ः और महिला १.८ः कुल ८.६ प्रतिशत, २०२८ में पुरुष २३.६ः और महिला ३.६ः कुल १४ प्रतिशत, २०३८ में पुरुष ३४.४ः और महिला १२ः कुल २३.४ प्रतिशत, २०४३ मे पुरुष ५१.८ः और महिला १८ः कुल ३६.६ प्रतिशत, २०४८ में पुरुष ५४.५ः और महिला २५ः कुल ३६.६ प्रतिशत, २०५४ मे पुरुष ६७.६ः और महिला ३७.८ः कुल ५२.६ प्रतिशत, २०५८ में पुरुष ६५.१ः और महिला ४२.५ः कुल ५३.७ प्रतिशत हैं, २०६८ में पुरुष ७५.१ और महिला ५७.४ कुल ६५.६ प्रतिशत है।

इस विषय को आधार बनाकर अब तक चार विश्व–महिला–सम्मेलन हो चुके हैं। प्रथम सम्मेलन १९७५ मे मेक्सिको में सम्पन्न हुआ जिसमें साक्षरता और शिक्षा प्रतिशत में वृद्धि के साथ–साथ अन्य बिन्दुओं को भी समाविष्ट किया गया था। द्वितीय सम्मेलन डेनमार्क के कोपेनहेगन में १९८० में हुआ था। महिलाओं को सभी स्तर की शिक्षा और प्रशिक्षण पाने के समान अवसर के साथ ही महिला अधिकारों पर विचार–विमर्श करना इसका उद्देश्य था। केन्या के नैरोवी में १९८५ में समानता के आधार पर अवसर प्रदान करना और पूर्ववर्ती निर्णों का कार्यान्वयन इसका रणनीतिक आधार था। चौथा सम्मेलन १९९५ में चीन की बेइजिङ्ग में सम्पन्न हुआ, जिसमें विगत के आन्दोलनों का सिंहावलोकन किया गया था। संयुक्त राष्ट्र संघ ने २००३–२०१२ को साक्षरता दशक घोषित किया जिसका मूल नारा साक्षरता और सशक्तीकरण था।

१९८० मे घोषित महासन्धि के प्रति प्रतिबद्धता जतलाते हुए तत्कालीन सरकार ने १९९१ में इस पर हस्ताक्षर किया। नेपाल अधिराज्य के संविधान २०४७, भाग ४ में महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार की विशेष व्यवस्था कर राष्ट्रिय विकास में उसे आधिकारिक सहभागी बनाने की नीति राज्य ने अवलम्बन किया। महिला शिक्षा को प्रोत्साहन करने के उद्देश्य से अधिराज्य के १८ जिलों मे सुगम क्षेत्रों में रु. ८५०।– और र्दुगम क्षेत्र में रु.१०५०।– छात्रवृत्ति प्रदान करने का उल्लेख किया है। –कान्तिपुर २०५६, आषाढ २८)। २०६५–२०६६ की बजट में निरक्षरता उन्मूलन और साक्षरता अभियान चलाने का निर्णालिया गया। २०६६ दृ २०६७ में "साक्षर बनें, क्षमता बढाएँ" का नारा दिया गया।

सरकार के इस प्रयास को सकारात्मक माना जा सकता है। राष्ट्र समुन्नति के लिए तैयार आठ योजनाओं में महिलाओं को पुरुषों के समान शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के अवसर प्रदान करने के अर्थिय से बहुत प्रयास हुआ फिर भी महिला साक्षरता के तथ्याङ्क में अपेक्षित बढौतरी नहीं हो पायी। वर्तमान में महिला साक्षरता की संख्या छः साल से ऊपर ५१ः है। यह माना जा सकता है कि शिक्षा के क्षेत्र में स्थिति में सुधार है। वर्तमान त्रिवर्षीय योजना में छ साल से ऊपर साक्षरता ७६ः और १५ः साल से ऊपर ६०ः पहुँचाने का लक्ष्य है।

सवाल उठता है कि महिला निरक्षर क्यों होती हैं दृ विकासोन्मुख राष्ट्र में गरीबी, सम्पत्ति पर पितृसत्तात्मक अधिकार, लैंगिक भेदभाव, सामाजिक विकृति, अन्धविश्वास, आर्थिक आदि कारणों से बालिकाएँ विद्यालिय में शिक्षा प्राप्त नहीं कर पातीं। निरक्षरता के कारण विकास की गति में अवरोध उत्पन्न होता है। साक्षरता अभियान सक्रिय बनाने, महिलाओं को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र संघ ने विश्व में १९९० को अन्तर्राष्ट्रीय साक्षरता वर्ष और ८ सितम्बर को साक्षरता दिवस मनाने की घोषणा की है। तत्कालीन श्री ५ सरकार ने सन् २००० से "सबके लिए शिक्षा" नीति कार्यान्वयन के लिए जि.शि.अ. की अगुवाई में स्थानीय आवश्यकता अनुरूप शिक्षा योजना निर्माण कार्य शुरू हुआ। महिलाओं की नयीं भूमिका, नया शिल्प विकास, आत्मनिर्भरता आदि पुरुषों को नहीं पचता। उसका परम्परागत रूप ही पुरुषों को अधिक पसन्द है। स्वयं महिलाओं में आत्मविश्वास की कमी, पुरुषों के प्रति आवश्यकता से ज्यादा नम्रता, शर्मिली प्रवृत्ति के कारण महिला निरक्षता की दर अधिक है।

महिलाओं में निरक्षरता समाप्त करने के लिए आवश्यक है मातृभाषा में शिक्षा, शिक्षिका व्यवस्था, सहयोगी कार्यकर्त्तार्ा चयन, सहभागिता की आवश्यकता, अध्ययन सामग्री, स्थान और समय की व्यवस्था, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय गैरसरकारी संस्थाओं को साक्षरता कार्यक्रम में संलग्न कराना, शिल्प को व्यवहार में लाना, निरन्तर शिक्षा की व्यवस्था, साक्षर बच्चों को विद्यालय में दाखिला की व्यवस्था आदि। देश की सर्म्पूण जनसंख्या का अधिकाँश भाग अज्ञानता, अन्धविश्वास, परम्परागत रुढिवादिता और

भाग्यवादी धारणा पर निर्भर होने की प्रवृत्ति के कारण महिलाएँ निरक्षर हैं। निरक्षरता के कारण उन्हें शोषण का शिकार होना पड"ता है। विगत की तुलना में वर्त्तमान में साक्षरता दर बढ"ने के बावजूद वर्त्तमान समय में जनसंख्या वृद्धि के कारण यह उपलब्धि नगण्य लगती है।

उपर्युक्त शिक्षा नीति को मूर्त रूप प्रदान करनेके लिए राष्ट्रीय, जिला, नगर, गाँव और कक्षा व्यवस्थापन समिति, केन्द्र से वार्ड तक की साक्षरता समिति, बाल–क्लब; समावेशी समिति आदि को मिलकर पूर्ण जिम्मेवारी निभाना जरूरी है। विकासोन्मुख राष्ट्र में सम्पन्न परिवार की महिलाएँ शिक्षित दिखती हैं। लेकिन यही पर्याप्त नहीं है। सिर्फहस्ताक्षर के ज्ञान से वह अपनी समस्याओं से नहीं जूझ सकती। उन्हें सम्यक् ज्ञान प्रदान कर जीवन और जगत के वृहत्तर क्षेत्र में उसके प्रयोग को प्रोत्साहित करना होगा। एक शिक्षित महिला परिवार में एक अच्छा नागरिक का निर्माण कर सकती है और पूरे परिवार को साक्षर बना सकती है। तर्सथ महिला साक्षरता आज की आवश्यकता है।

नारी सशक्तिकरण का मतलब नारी को सशक्त करना नहीं हैं । नारी सशक्तिकरण या वूमन एम्पोवेर्मेंट का मतलब फेमिनिस्म भी नहीं हैं । नारी सशक्तिकरण या वूमन एम्पोवेर्मेंट का मतलब पुरूष की नकल करना भी नहीं हैं , ये सब महज लोगो के दिमाग बसी भ्रान्तियाँ हैं । नारी सशक्तिकरण या वूमन एम्पोवेर्मेंट का बहुत सीधा अर्थ हैं की नारी और पुरूष इस दुनिया मे बराबर हैं और ये बराबरी उन्हे प्रकृति से मिली है। नारी सशक्तिकरण या वूमन एम्पोवेर्मेंट के तहत कोई भी नारी किसी भी पुरूष से कुछ नहीं चाहती और ना समाज से कुछ चाहती हैं क्योकि वह अस्वीकार करती हैं की पुरूष उसका मालिक हैं । ये कोई चुनौती नहीं हैं , और ये कोई सत्ता की उथल पुथल भी नहीं हैं ये एक जाग्रति हैं की नारी और पुरूष दोनो इंसान हैं और दोनों समान अधिकार रखते हैं समाज मे।.बहुत से लोग सशक्तिकरणष्से ये समझते हैं की नारी को कमजोर से शक्तिशाली बनना हैं नहीं ये विचार धारा ही गलत हैं । सशक्तिकरण का अर्थ हैं की जो हमारा मूलभूत अधिकार हैं यानी सामाजिक व्यवस्था मे बराबरी की हिस्सेदारी वह हमे मिलना चाहिये। कोई भी नारी जो नारी सशक्तिकरण को मानती हैं वह पुरूष से सामजिक बराबरी का अभियान चला रही हैं। अभियान कि हम और आप {यानि पुरूष} दुनिया मे ५० प्रतिशत के भागीदार हैं सो लिंग भेद के आधार पर कामो अधिकारों का , नियमो का बटवारा ना करे । नारी पुरूष एक दूसरे के पूरक हैं, इस सन्दर्भ मे उसका कोई औचित्य नहीं हैं क्योकि वह केवल नारी – पुरूष के वैवाहिक रिश्ते की परिभाषा हैं जबकि नारी –पुरूष और भी बहुत से रिश्तो मे बंधे होते हैं जहाँ लिंग भेद किया जाता हैं। नारी सशक्तिकरण पुरूष को उसके आसन से हिलाने की कोई पहल नहीं हैं अपितु नारी सशक्तिकरण सोच हैं की हम तो बराबर ही हैं सो हमे आप से कुछ इसलिये नहीं चाहिये की हम महिला हैं। नहीं चाहिये हमे कोई इसी लाइन जिस मे खडा करके आप

हमारे किये हुए कामो की तारीफ करके कहे कि बहुत सुंदर कम किया हैं और आप इस पुरूस्कार की हकदार हैं क्योकि हम नारी को आगे बढ़ाना चाहते हैं। ये हमारे मूल भूत अधिकारों का हनन हैं। नारी सशक्तिकरण की समर्थक नारियाँ किरी की आँख की किरकिरी नहीं हैं क्योकि वह नारी और पुरूष को अलग अलग इकाई मानती हैं , वह पुरूष को मालिक ही नहीं मानती इसलिये वह अपने घर को कुरुक्षेत्र ना मान कर अपना कर्म युद्ध मानती हैं । नारी सशक्तिकरण की समर्थक महिला चाहती हैं की समाज से ये सोच हो की जो पुरूष के लिये सही वही नारी के लिये सही हैं । नारी सशक्तिकरण के लिये जो भी अभियान चलाये जा रहे हैं वह ना तो पुरूष विरोधी हैं और नाही नारी समर्थक। वह सारे अभियान केवल मूलभूत अधिकारों को दुबारा से बराबरी से बांटने का प्रयास हैं। नारी सशक्तिकरण ष को मानने वाले ये जानते हैं की इस विचार धारा को मानने वाली नारियाँ फेमिनिस्म का मतलब ये मानती हैं की हम जो कर रहे हैं या जो भी करते रहे हैं हमे उसको छोड़ कर आगे नहीं बढ़ना हैं अपितु हमे अपनी ताकत को बरकरार रखते हुए अपने को और सक्षम बनाना हैं ताकि हम हर वह काम कर सके जो हम चाहे और इसके लिये अब अगर समाज को बदलना है तो वह बदले अपनी वह रुढिवादी नियम जो कहते हैं

हमारा ये नारी ब्लॉग इसी पहल को नेट के जरिये आगे बढाने का एक प्रयास हैं और इस लिये आप को इस ब्लॉग पर नारी की कमजोरी से लेकर नारी की उपलब्धियों तक का सफर दीखेगा । और इस ब्लॉग के सदस्यों की हर सम्भव कोशिश होगी की नेट पर हिन्दी ब्लोगिंग मे जो भी ब्लॉगर नारी के प्रति असंवेदनशील शब्दों को लिखते उनको उनकी भाषा और मानसिक भ्रांतियों से अवगत कराया जाऐ । यही एक छोटी सी पहल हैं हमारी ।

स्त्री शिक्षा स्त्री और शिक्षा को अनिवार्य रूप से जोड़ने वाली अवधारणा है। इसका एक रूप शिक्षा में स्त्री को पुरुषों की ही तरह शामिल करने से संबंधित है। दूसरे रूप में यह स्त्री के लिए बनाई गई विशेष शिक्षा पद्धति को संदर्भित करता है। भारत में मध्य और पुनर्जागरण काल के दौराण स्त्री को पुरुषों से अलग तरह की शिक्षा देने की धारणा विकसित हुई थी। वर्तमान दौर में यह बात सर्व मान्य है की स्त्री को भी उतना शिक्षित होना चाहिये जितना पुरुष हो। यह सिद्ध सत्य है कि यदि माता, शिक्षित न होगी तो देश की सन्तानो का कदापि कल्याण नही हो सकता।

शिक्षा वयस्क जीवन के प्रति स्त्रियों के विकास के लिए एक आधार के रूप में विशेष रूप से ख्,महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शिक्षा अन्य अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए लड़कियों और महिलाओं को सक्षम करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बहुत सी समस्याओं को पुरुषों से नहीं कह सकने के कारण महिलाएं कठिनाई का सामना करती रहती हैं। अगर, महिलाए शिक्षित है तो वे

अपने घरों की सभी समस्याओं का समाधान कर सकती हैं। स्त्री शिक्षा राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय विकास में मदद करता है। आर्थिक विकास और एक राष्ट्र के सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि में मदद करता है। महिला शिक्षा एक अच्छे समाज के निर्माण में मदद करता है।

समस्याएं

रूढ़िवादी सांस्कृतिक नजरिए के कारण लड़कियों को अक्सर पाठशाला जाने कि अनुमति नहीं दिया जाता है।

भारत में स्त्री शिक्षा

भारत मे वैदिककाल से ही स्त्रियों के लिए शिक्षा का व्यापक प्रचार था। भारत मे ऐसा समय भी आया जबकी स्त्री और शूद्र जाति के लिये वेदो को पढ़ना निषिद कर दिया गया था। परन्तु यह धारणा बहुत दिनो तक स्थिर न रह सकी। मुगलकाल में भी अनेक महिला विदुषियों का उल्लेख मिलता है। पुनर्जागरण के दौर में भारत में स्त्री शिक्षा को नए सिरे से महत्व मिलने लगा। ईस्ट इंडिया कंपनी के द्वार सन १८५४ में स्त्री शिक्षा को स्वीकार किया गया था। विभिन्न सरकारी और गैर सरकारी प्रयासों के कारण साक्षरत के दर 0.२: से बदकर ६: तक पहुँच गया था। कलकत्ता के विश्वविद्यालय महिला को शिक्षा के लिए स्वीकार करने वाला पहला विश्वविद्यालय था। १९८६ में शिक्षा संबंधी राष्ट्रीय नीति प्रत्येक राज्य को सामाजिक रूपरेखा के साथ शिक्षा का पुनर्गठन करने का निर्णय लिया था। शिक्षा लोकतंत्र के लिए जरूरी हो गया था और महिलाओं के हालात में बदलाव लाने के लिये जरूरि था। जोन इलियोट जी ने पेहला महिला विश्वविद्यालय खोला था सन् १८४९ में और उस विश्वविद्यालय क नाम बीथुने कालेज था। सन १९४७ से लेकर भारत सरकार पाठशाला में अधिक लड़कियों को पड़ने कि मोखा देने के लिये, अधिक लड़कियों को पाठशाला में दाखिला करने के लिये और उनका स्कूल में उपस्थिति बढ़ाने कि कोशिश में अनेक योजनाएं बनाये हैं जैसे निरू शुल्क पुस्तकें, दोपहर की भोजन। सन् १९८६ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति को पुनर्गठन देने को सरकार ने फैसला किया। सरकार ने राज्य कि उन्नती की लिये, लोकतंत्र की लिये और महिलाओं का स्थिति को सुधारने की लिये महिलाओं को शिक्षा देना जरूरी सम्ज था। भारत की स्वतंत्र की बाद सन् १९४७ में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग को बनाया गया सिफारिश करने की महिला कि शिक्षा में गुणवता में सुधार लिया जाए। भारत सरकार ने नूतन में ही महिला साक्षारता की लिये साक्षर भारत मिशन की शुरूआत की है इस मिशन में महिला कि अशिक्षा की दर को नीचे लाने कि कोशिश किया जाता है। बुनियादि शिक्षा उन्हें पसंद है और अपने स्वयं के जीवन और शरीर पर फैसला करने का अधिकार देने, बुनियादी स्वास्थ्य, पोषण और परिवार नियोजन की समझ के साथ लड़कियों और महिलाओं को प्रदान करता है। लड़कियों और महिलाओं

की शिक्षा गरीबी पर काबू पाने में एक महत्वपूर्ण कदम है। कुछ परिवारों का काम कर रहे पुरुषों दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटनाओं में विकलांग हो जाते हैं। उस स्थिति में, परिवार का पूरा बोझ परिवारों की महिलाओं पर टिकी रहते हैं। इस जरूरती महिलाओं को पूरा करने के लिए उन्हे शिक्षित किया जाना चाहिए। वे विभिन्न क्षेत्रों में नियोजित किया जाना चाहिए। महिला शिक्षकों, डॉक्टरों, वकीलों और प्रशासक के रूप में काम कर सकते हैं। शिक्षित महिलाओं अच्छी मां हैं। महिलाओं की शिक्षा से दहेज समस्या, बेरोजगारी की समस्या, आदि सामाजिक शांति को आसानी से स्थापित किया जा सकता है।

स्त्री शिक्षा की भूमिका

संस्कृत में यह उक्ति प्रसिद्ध है– 'नास्ति विद्यासमं चक्षुर्नास्ति मातृ समोगुरुरू'. इसका मतलब यह है कि इस दुनिया में विद्या के समान नेत्र नहीं है और माता के समान गुरु नहीं है।' यह बात पूरी तरह सच है। बालक के विकास पर प्रथम और सबसे अधिक प्रभाव उसकी माता का ही पड़ता है। माता ही अपने बच्चे को पाठ पढ़ाती है। बालक का यह प्रारंभिक ज्ञान पत्थर पर बनी अमिट लकीर के समान जीवन का स्थायी आधार बन जाता है। लेकिन आज पूरे भारतवर्ष में इतने दरिंदे उभर आये हैं, जिन्होंने मां–बहनों का रिश्ता खत्म कर दिया है और जो भोग–विलास की जिंदगी जीना अधिक उपयोगी समझने लगे हैं। यही कारण है कि कस्बों से लेकर शहरों की मां–बहनें असुरक्षित हैं।

असुरक्षा के कारण ही बलात्कार, गैंग रेप जैसी अनेक घटनाओं के जाल में फांस कर उन्हें मछली की तरह तवे पर भूना जा रहा है। मेरा मानना है कि इसका सबसे बड़ा कारण है स्त्रियों में शिक्षा की कमी.हाल ही में हजारीबाग में घटी दुष्कर्म जैसी अनेक घटनाओं में आज हमें बुराई नजर आती है, तो उसके लिए अधिकांशतरू जिम्मेदार मां को ही ठहराया जाता है। एक मां दुलार में छिपी अपनी अज्ञानता के कारण ही बेटे–बेटी को नये फैशन का कपड़ा, कम उम्र में मोबाइल, खर्च से अधिक पैसा देना आदि.जैसे लापरवाही पर ध्यान नहीं दे पाती हैं। परिणामस्वरूप वे गलत रास्ते पर चले जाते हैं। वास्तव में कहा जाता है कि महिलाओं की शिक्षा, किसी भी पुरुष की शिक्षा से कम महत्वपूर्ण नहीं है। उस नयी समाज की रूपरेखा तैयार करने में महिलाओं की शिक्षा–पुरुषों से सौ गुना अधिक उपयोगी है। इसलिए स्त्री शिक्षा के लिए सरकार को प्रयासरत होना चाहिए, तभी अत्याचार जैसी घटनाओं पर काबू पाया या सकता है।

लाभ

शिक्षा प्राप्त करके आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने का अर्थ यह नहीं है कि नारी शिक्षित होकर पुरुष को अपना प्रतिद्वन्द्वी मानते हुए उसके सामने ही मोर्चा लेकर खड़ी हो जाए। बल्कि वह आर्थिक क्षेत्र में भी पुरुष के बराबर समानता का अधिकार प्राप्त करके उसके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए। जिस

प्रकार शरीर को भोजन की आवश्यकता होती है उसी प्रकार मानसिक विकास के लिए शिक्षा आवश्यक है। अगर नारी ही शिक्षित नहीं होगी तो वह न तो सफल गृहिणी बन सकेगी और न कुशल माता। समाज में बाल–अपराध बढ़ने का कारण बालक का मानसिक रूप से विकसित न होना है। अगर एक माँ ही अशिक्षित होगी तो वह अपने बच्चों का सही मार्गदर्शन करके उनका मानसिक विकास कैसे कर पाएगी और एक स्वस्थ समाज का निर्माण एवं विकास सम्भव नहीं हो सकेगा। अतः हम कह सकते हैं कि शिक्षित नारी ही भविष्य में निराशा एवं शोषण के अन्धकार से निकलकर परिवार, समाज व राष्ट्र के विकास एवं उत्थान में अपना दायित्व सही अर्थों में स्थापित कर पाऐगी।

सन्दर्भ

जे सी अग्रवाल (1 श्रंदनंतल 2009). भारत में नारी शिक्षा. प्रभात प्रकाशन. आई०घ्स०बी०घ्न० 978–81–85828–77–0.

E- W- Hutter (1859)- Female Education: Its Importance] the Helps and the Hindrances : Address Delivered Before the Faculty and Students of the Susquehanna Female College] at Selinsgrove] Pa-] on Tuesday Evening] November 8th] 1859- T-N- Kurtz

सुगन कृष्ण कांत (1 सितम्बर 2001). इक्कीसवीं सदी की ओर. राजकमल प्रकाशन. आई०एस०बी०एन० 978–81–267–0244–2.

Female Education: A Study of Rural India- Cosmo Publications- 2003. आई०एस०बी०एन० 978–81–7755–207–2.

डॉ. जे. पी. सिंह, (1 April 2016). आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन. PHI Learning Pvt- Ltd.. आई०एस०बी०एन० 978–81–203–5232–2.

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

रुपये के गिरते मूल्य का भारत पर प्रभाव

डॉ. पापिया चतुर्वेदी
सहायक प्राध्यापक वाणिज्य
मिनीमाता शासकीय महाविद्यालय कोरबा

तेज रफ्तार से गिरा रुपया हर किसी की सांसें थामने वाला था. हर दिन एक नई गिरावट के साथ नया इतिहास दर्ज कर एक डॉलर के मुकाबले 70 की कीमत तक पहुंच गया रुपया देश के माथे पर चिंता की लकीरें खींच गया. हर किसी को उम्मीद थी कि रुपया उठेगा लेकिन उसके उठने कोई सुगबुगाहट कहीं नजर नहीं आ रही थी. आरबीआई के पूर्व गवर्नर डी सुब्बाराव की विदाई के साथ ही नए गवर्नर रघुराम राजन का देश ने स्वागत किया. इसके साथ ही रुपए ने भी सक्रियता दिखाई और बहुत दिनों बाद दिनोंदिन गिरता रुपया थोड़ा संभला और 70 की करीबी छोड़कर 65 के मुहाने पर आ गया.

शुक्रवार (6 सितंबर 2013) को लंबे समय के बाद भारतीय बाजार को खुशी का एहसास देते हुए गिरावट की बजाय तेजी का रुख करते हुए रुपया 65.24 पर पहुंच गया. सुबह एक डॉलर के मुकाबले 66.32 पर खुला रुपया शाम 65.24 पर बंद हुआ. लेकिन अभी भी इसमें बहुत सुधार होना बाकी है. जितना जल्दी रुपया संभलेगा उतनी ही जल्दी हालात भी सुधरेंगे. पर रुपए की आज की स्थिति पहले के मुकाबले बहुत अलग है.

एक नजर रुपए के इतिहास पर

अंतर्राष्ट्रीय बाजार में आज अपना मूल्य खोता जा रहा रुपया हमेशा ऐसा नहीं था. डॉलर के मुकाबले गिरने के क्रम में साल दर साल, दशक दर दशक कमजोरी आती गई और रुपया इस मुकाम पर है. 1985 में एक डॉलर की कीमत 12.38 रुपया था. 1990 में 17.01, 1993 में 31.37, 2006 में 45.19, 2008 में 48.88 और अब 65.24 रुपया सितम्बर 2013 में हो गया है.

विदेश मुद्रा के अनुपात में हम भारतीय गरीब होते जा रहे हैं. राजकोषीय घाटा, व्यापार अंतराल,

लगातार उच्च मुद्रास्फीति, कुल कारक उत्पादकता, और भारत में सोने के आयात ने रुपये पर लगातार दबाव बनाए रखा है. उस पर विदेशी निवेशक भी अपना मुंह मोड़ रहे हैं. भारतीय इक्विटी बाजार में धन का प्रवाह सूख रहा है. यह हाल ही में मुद्रा के उतार–चढ़ाव में ईंधन का कम कर सकता था. पर ऐसा हो नहीं सका.

रुपए का प्रभाव कुछ खट्टा कुछ मीठा

आयातित वस्तुओं के मूल्य में वृद्धिरू रुपए के गिरने का यह सबसे बुरा पक्ष है. फास्ट मूविंग कंज्यूमर गुड्स (एफएमसीजी) जैसे साबुन, शैम्पू आदि के साथ पेट्रोल, दवाइयां, खाद–उर्वरक महंगे होते जा रहे हैं. ये भारत में सबसे ज्यादा आयात होने वाली वस्तुओं में मानी जाती हैं. रुपये में मूल्य ह्रास की वजह से आयातित होने वाले कच्चे माल की लागत ऊंची हो रही है. परिणामतरू उनसे बनी हमारी रोजमर्रा की चीजें भी महंगी हो रही हैं. कंपनियां पहले ही लागत के दबाव का सामना कर रहे थीं. रुपया मूल्य ह्रास ने उनकी परेशानियों को और बढ़ा दिया.

विदेश में पढाईरू रुपये के गिरने का सबसे ज्यादा खामियाजा उन छात्रों को भुगतना पड़ रहा है जो विदेश में पढ़ाई कर रहे हैं या जिन्होंने विदेशी पढाई के लिए ऋण लिया है. जिस कोर्स के लिए वे भारतीय रुपये में 45 लाख का भुगतान कर रहे थे उनका खर्च सीधे 52–54 लाख होगा क्योंकि उनका उधार रुपए में था और लागत विदेशी मुद्रा में.

विदेश यात्रा अगर आप विदेश जाने की सोच रहे हैं तो यह उपयुक्त समय नहीं है. मूल्य ह्रास में गिरावट के कारण टिकट से लेकर, रहने, घूमने–खाने सबके मूल्य में वृद्धि हो गई है. न तो आप पुराने मूल्यों पर शॉपिंग कर पाएंगे, न ही अच्छी चीजों का लुत्फ उठा पाएंगे.

नौकरियां और वेतनरू अगर आपकी कंपनी विदेशों से आयात ज्यादा करती है तो आपके वेतन में भी कटौती हो सकती है क्योंकि आपकी कंपनी को रॉ मटीरियल (कच्चा माल) से लेकर हर उस सुविधा का कहीं ज्यादा भुगतान करना पड़ रहा होगा जो विदेशों से आयात की जा रही हैं. इन कंपनियों को अपने नियंत्रण में लागत को युक्तिसंगत करना होगा. अगर मानव संसाधन का पहलू देखें तो या तो लोगों को कम संख्या में काम पर रखा जाएगा या फिर उनका वेतन स्थिर या कम रखा जाएगा

रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीतिरू रुपए में ह्रास से आगे मुद्रास्फीति में वृद्धि होने की वजह बनेगी. ऐसी स्थिति में आरबीआई नीतिगत दरों में कटौती करने के लिए मजबूर होगा. नीति दर में कोई कटौती बेसब्री से उच्च ऋण पाने का इंतजार कर रहे लोगों को ऋण लेने के संकट से जोड़ देगा.

रुपए का गिरना हमेशा सरकार को भविष्य के संकट से आगाह करता रहा है. सरकार की गलत नीतियों का ही नतीजा है कि आज कि रुपया अपने साथियों के समूह में सबसे कमजोर मुद्राओं में

से एक है. अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए सरकार अपनी तरफ से भरसक कोशिश कर रही है. वह पूंजी प्रवाह को बढ़ावा दे रही है साथ ही साथ विदेशी मुद्रा के बहिर्वाह को प्रतिबंधित करने की कोशिश भी भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किया जा रहा है. यह समय उन अप्रवासी भारतीयों के लिए अच्छा है जो विदेशों में नौकरी कर रहे हैं या उन कंपनियों के लिए जो विदेशों में निर्यात कर रहे हैं. खैर जब तक रुपए के गिरने की दुविधा सुलझेगी नहीं या रुपया जब तक आपने आप को पूरी तरह स्थिर नहीं कर लेता तब तक आम आदमी की जेब हल्की होती रहेगी और महंगाई का डर सताता रहेगा.

जिस दौर में डॉलर को कमजोर होना चाहिए उस दौर में रुपया रसातल में जा रहा है। अमेरिकी अर्थव्यवस्था पंद्रह हजार अरब अमेरिकी डॉलर के कर्ज तले दबी हुई है और अमेरिकी कांग्रेस की सख्ती के कारण घाटे में कटौती के प्रस्तावों को 2021 तक टाल दिया गया है। हकीकत यह है कि अमेरिका दिवालिया होने के करीब है। ऐसे वक्त में भारतीय रूपये की कमजोर होती हालत क्या अमेरिकी अर्थव्यवस्था के घाटे को पूरा करेगी और डॉलर की सर्वोच्चता बनाये रखेगी? अमेरिकी डॉलर की हालत देखते हुए रुपये की कमजोरी हजम नहीं हो रही है।

हमारे प्रधानमंत्री को रुपए की चिंता हो न हो, लेकिन डालर की चिंता उन्हें बहुत रहती है। 23 नवंबर, 2009 को न्यूयार्क की यात्रा के वक्त हमारे प्रधानमंत्री ने मजबूत डालर में सार्वजनिक तौर पर अपना भरोसा जताकर उसे सहारा देने की कोशिश की थी। विश्लेशकों का यह भय कि रुपया प्रति डालर 50 के स्तर को छुएगा, जल्द ही सच हो गया। वाणिज्य मंत्रालय ने तो यह कहकर चौंका दिया कि इस साल व्यापार घाटा 200 अरब डालर को पार कर जाएगा। अब दो सरल सवाल हमारे सामने हैं–

(क) नई आर्थिक नीति के तहत 1991 में जब रुपए के अवमूल्यन की नीति प्रारंभ की गई तो बहाना बनाया गया कि ऐसा भारत के व्यापार संतुलन को ठीक करने के लिए किया गया। सरकार ने आलोचकों को आडेह हाथों लिया और सभी उपलब्ध मंचों से चिल्ला–चिल्ला कर कहा कि इससे निर्यात सस्ता और आयात महंगा होगा, जिसके चलते भारतीय उत्पाद प्रतिस्पर्धी होंगे और आयात को हतोत्साहित किया जा सकेगा। लेकिन रुपए का मूल्य जुलाई, 1991 के प्रति डालर 18 रुपए से गिरकर अब प्रति डालर 50 रुपए तक जा पहुंचा है। इसके कारण व्यापार घाटा 2.7 अरब डालर से बढ़कर 200 अरब डालर के अनुमानित स्तर तक पहुंच गया है। क्या उस समय के नीति निर्माता रुपए के अवमूल्यन की नीति अपनाकर देश को गुमराह करने और देश की अर्थव्यवस्था से जान–बूझकर खेलने के लिए माफी मांगेंगे?

(ख) अमरीका में 2008 के आर्थिक संकट के दौरान जब डॉलर के मूल्य में भारी गिरावट का भय

था, उस समय भारतीय रिजर्व बैंक ने रुपए की स्वाभाविक बढ़त को रोकने के लिए विदेशी मुद्रा विनिमय बाजार यानी फारेक्स मार्केट में सक्रिय हस्तक्षेप किया और अमरीकी नीति निर्माताओं की मजबूत डालर नीति को समर्थन दिया। अब जबकि कमजोर रुपए के चलते तेल आयात से भारी व्यापार घाटा हो रहा है, जो डालर समर्थित अमरीकी सैन्य नीति के चलते है, क्या भारतीय रिजर्व बैंक फारेक्स मार्केट में एक बार फिर सक्रिय हस्तक्षेप करेगा, जिससे कि रुपए की गिरावट थम सके, जिससे तेल और तेल पर निर्भर भारतीय उपभोक्ता राहत की सांस ले सकें?

हम जानते हैं कि उपरोक्त दोनों मामलों में जवाब नकारात्मक है। भारत की आजादी के बाद विशेष रूप से अगस्त, 1971 में ब्रेटनवुड्स सिस्टम के ढहने के बाद से अब तक डालर की तुलना में रुपए की लगातार हुई गिरावट पर मैं एक नजर डालना जरूरी है।

1950–51 से मध्य दिसंबर, 1973 तक भारत ने पाउंड स्टर्लिंग से जुड़े रुपए की विनिमय दर प्रणाली का अनुसरण किया, ठीक वैसे ही जैसे चीन ने इन दिनों अपनी मुद्रा रेनमिनबी या युआन को अमरीकी डालर के साथ किया है। यह विनिमय दर स्थिर थी और रुपए की किस्मत पाउंड स्टर्लिंग से जुड़ी थी। 1966 और 1971 में जब पाउंड स्टर्लिंग का अवमूल्यन हुआ तो रुपए का दूसरी मुद्राओं की तुलना में फिर से मूल्यांकन किया गया। समस्या तब शुरू हुई, जब निक्सन ने 15 अगस्त, 1971 को सोना–डालर परिवर्तनीयता को समाप्त करने की घोषणा की। वस्तुतः डालर–सोने की परिवर्तनीयता ब्रेटनवुड्स प्रणाली पर आधारित थी, जिसके तहत प्रति औंस सोने की कीमत 35 डालर थी। यह प्रणाली खत्म होने के बाद डालर पूर्ण रूप से एक कागज मुद्रा बन गया।

24 सितंबर, 1975 को पाउंड स्टर्लिंग के साथ रुपए का गठजोड़ टूट गया और वहीं से डालर की तुलना में रुपए के पतन की सतत यात्रा शुरू हुई। इससे भारतीय अर्थव्यवस्था की कमजोरी का निष्कर्ष निकालना गलत होगा। वास्तव में रुपए की कमजोरी हमारी व्यवस्था में काबिज अमरीका–प्रशंसक नीति निर्माताओं की कारगुजारी है। एशिया में अमरीकी दबदबे को बनाए रखने के लिए हमारे लोगों ने ही मजबूत डालर की नीति को बढ़ावा दिया। सोवियत रूस के विघटन और रुपया–रूबल व्यापार की समाप्ति ने डालर–पोषित नीति निर्माताओं को व्यापार घाटा कम करने के नाम पर रुपए की अवमूल्यन की नीति जारी रखने का अवसर प्रदान किया। बड़े नियोजित ढंग से इसका लक्ष्य भारत को कमजोर करना और अमरीकी दबदबे को मजबूत करना था।

आजादी के बाद के शुरुआती वर्षों में भारत की विकास दर में लगभग ठहराव सा था, इसके बावजूद रुपए ने अपनी मजबूती बनाए रखी। 1971 में ब्रेटनवुड्स प्रणाली के ढहने के बाद भी नीति निर्माताओं ने मजबूत रुपए की नीति का अनुसरण जारी रखा। इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में यह नीति

कमजोर पड़ने लगी। तथाकथित आर्थिक उदारीकरण के दौर में जब भारत में हार्वर्ड–कैम्ब्रिज के नीति निर्माताओं का उदय हुआ तब अचानक ही हालात बदल गए। उदारीकरण के पैरोकारों ने कमजोर रुपए की नीति का अनुसरण किया और भारतीय अर्थव्यवस्था को अमरीकी नीति निर्माताओं की सनक का मोहताज बना दिया।

आखिर डालर ने ऐसी शानदार स्थिति कैसे हासिल की?

अमरीकी अर्थव्यवस्था की बुनियादी सुविधाओं पर विश्वयुद्ध का कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा। उल्टे युद्ध के कारण वहां उत्पादन में तेजी आई। विश्वयुद्ध के समय अमरीका खनिज तेल का सबसे बड़ा उत्पादक था, जो आधुनिक उद्योगों की मूलभूत आवश्यकता है। अमरीका ने कमज़ोर यूरोपीय शक्तियों को सैन फ्रांसिस्को और ब्रेटनवुड्स में व्यवस्थित किया। संयुक्त राष्ट्र संघ, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोश, विश्व बैंक और गैट को अमरीकी प्रभुत्व स्थापित करने के उपकरण के तौर पर सृजित किया गया। हैरी जे. व्हाइट के सुझावों के अनुसार, डालर–सोने की परिवर्तनीयता की पूर्व शर्त पर डालर अंतरराष्ट्रीय रिजर्व और लेन–देन की मुद्रा बन गया। जान मैनयार्ड कीन्स के बैंक नोट जारी करने वाली एक अंतरराष्ट्रीय संस्था बनाने के प्रस्ताव को खारिज कर दिया गया। इस समय व्यापार संतुलन अमरीका के पक्ष में बहुत अधिक झुका हुआ था। इसके चलते केंद्रीय बैंक का 60 फीसदी सोना अमरीका ने अपने निजी फेडलर रिजर्व सिस्टम के पास इकट्ठा कर लिया, जो ब्रेटनवुड्स प्रणाली के स्थायित्व की गारंटी का आधार बना।

डालर की इस सर्वोच्चता को पहला झटका 1960 के दौरान लगा। अपने वैश्विक दबदबे का प्रदर्शन करने के लिए अमरीका ने वियतनाम पर आक्रमण किया। इस युद्ध के कारण जो आर्थिक दबाव पड़ा, उसे पूरा करने के लिए अमरीका ने लगातार घाटे का बजट पेश किया। अमरीकी अर्थव्यवस्था भारी भुगतान घाटे और बजट घाटे में चली गई। फ्रांसीसी राष्ट्रपति चार्ल्स डी गाल ने अमरीका को चुनौती देने के लिए यूरोपीय दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। उन्होंने अमरीका से सोने के बदले में यूरोडालर को परिवर्तित करने को कहा। अमरीका इससे हिल गया। उसे लगा कि यदि अन्य यूरोपीय देशों ने भी कारोबार अधिशेष से संचित यूरोडालर को परिवर्तित करने का निर्णय ले लिया तो फेडरल रिजर्व प्रणाली और डालर की सर्वोच्चता ढह जाएगी। निक्सन ने तब 1971 में सोने–डालर की परिवर्तनीयता समाप्त करने का निर्णय लिया और इस तरह 1974 में ब्रेटनवुड प्रणाली ढह गई। इससे लचीली विनिमय दर प्रणाली का रास्ता साफ हो गया।

स्थिर विनिमय दर प्रणाली के एक बार समाप्त हो जाने के बाद मुद्राओं में वैश्विक कारोबार को गति मिली। पूंजी तब गतिशील हो गई और विभिन्न क्षेत्रों में पूंजीवाद विकसित हुआ। धीरे–धीरे वित्तीय

पूंजीवाद उत्पादक दायरों से अलग हो गया। सृजित पूंजी की अत्यंत चंचल प्रकृति ने तीसरे विश्व के देशों को अविकसित उद्योगों में पूंजी आमंत्रित करने के लिए अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के दबाव के सामने झुकने को मजबूर कर दिया। इस मोड़ पर यूरोप ने स्वतंत्र यूरोपीय मौद्रिक प्रणाली के लिए गंभीरता से प्रयास शुरू कर दिया। उधर अपनी वित्तीय सर्वोच्चता को और मजबूत बनाने के लिए अमरीका के पास अन्य योजनाएं भी थीं।

सन 1973 में ओपेक देशों ने अरब–इजरायल युद्ध के चलते तेल की कीमत को कई गुना बढ़ा दिया। अमरीकी कूटनीतिज्ञ हेनरी किसिंजर ने ओपेक नेताओं से गुप्त बातचीत शुरू कर दी। तेल–डालर धुरी के उदय ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अमरीका को अपनी सर्वोच्चता और मजबूत करने का मौका दे दिया। दुनिया में तेल आपूर्ति के चुनिंदा आपूर्तिकर्ता हैं। इनमें से ज्यादातर आपूर्ति डालर के बदले में ही होती है।

इस दुनिया में जहां तरक्की को ईंधन के उच्च उपयोग से मापा जाता है, प्रत्येक तेल आयातक देश को प्रगति के लिए डालर चाहिए। डालर को केवल दो ही तरीकों से पाया जा सकता है, या तो अमरीकी और अमरीका नियंत्रित बहुपक्षीय संस्थाओं से कर्ज के जरिए, या अमरीका को सामानों और सेवाओं के अधिक से अधिक निर्यात से। यह कोई संयोग नहीं है कि आर्थिक विकास का नवउदार दर्शन निर्यात प्रधान विकास पर जोर देता है। मुद्रा अवमूल्यन निर्यात बढ़ाने का पैमाना है, इसे दिखाने के लिए आर्थिक सिद्धांतों में हेरफेर किया जाता रहा है। शेष विश्व, विशेषकर विकासशील देश डालर की तुलना में प्रतिस्पर्धात्मक अवमूल्यन में उतर जाते हैं, ताकि अमरीका में उनकी बाजार हिस्सेदारी बढ़े। परिणामस्वरूप अमरीका सबसे सस्ते दामों पर उत्पादों का सबसे बड़ा बाजार बन गया है, जिससे वहां उपभोक्ता क्रांति हो पाई। दूसरी ओर पेट्रो–डालर का विशाल भंडार अमरीकी बांड बाजार में दोबारा प्रयुक्त हो जाता है। अमरीका को इस तरह से तीन तरह के लाभ मिलते हैं। एक, अमरीका के चालू खाते का घाटा संतुलित रहता है। दूसरा, अधिशेष पूंजी उन विकासशील देशों को भुगतान घाटे को दुरुस्त करने के लिए बतौर कर्ज में दे दी जाती है, जिनकी अर्थव्यवस्था पूंजी के गतिशील होने के चलते अस्थिर है। तीसरा, अमरीका में शेयरों के मूल्य और संपदा मूल्य अधिकतम रखे जाते हैं, जो अमरीकी अर्थव्यवस्था की भ्रामक मजबूती को दिखाता है। ये तत्व डालर को स्थिर बनाते हैं। डालर की तुलना में अन्य मुद्राओं के अवमूल्यन से डालर की मजबूती बनी रहती है। इसलिए इसकी सर्वोच्चता को चुनौती नहीं मिलती। अमरीकी सर्वोच्चता इस सामान्य तरीके से फलती–फूलती है। वास्तविक भौतिक वस्तुओं के बदले अमरीका केवल आदेशित मुद्रा यानी डालर की अदायगी करता है, जिसे वह 1971 में डालर–सोना परिवर्तनीयता के टूटने के बाद बिना किसी सीमा तक छाप सकता है।

अमरीका अपने घाटे की पूर्ति वैश्विक स्तर पर राजकोषीय बांड जारी करके करता है। जापान और चीन दोनों के पास 20 खरब अमरीकी शेयर हैं। अमरीका वैश्विक अर्थव्यवस्था का डिफाल्टर बनने के करीब है। उसका वित्तीय घाटा बढ़ रहा है। वहां कर्ज और जीडीपी का अनुपात 100 फीसदी से ज्यादा हो गया है। अमरीकी अर्थव्यवस्था का कुल कर्ज 54 लाख करोड़ डालर की अकल्पनीय सीमा के पार चला गया है। 4,71,38,283 से अधिक लोग खाद्य स्टाम्प पाते हैं, क्योंकि वे दो वक्त की रोटी का जुगाड़ भी नहीं कर सकते। रोजाना कुर्की और दिवालिया होने के मामले बढ़ते ही जा रहे हैं। केवल 2011 में ही 22 नवंबर तक वहां कुर्की के 10,30,952 और दिवालियापन के 15,96,544 मामले दर्ज किए गए हैं।

डॉलर के लिए भारतीय रूपये की कुर्बानी

विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को यह सिद्धांत देकर बीहड़ में धकेल दिया जाता है कि सस्ती मुद्रा निर्यात को प्रोत्साहित करती है और केवल निर्यात केंद्रित विकास ही किसी देश को औद्योगिकृत और विकसित बना सकता है। डालर की तुलना में अपनी मुद्राओं को मजबूत होने से बचाने के लिए विदेशी मुद्रा विनिमय यानी फारेक्स बाजार में केंद्रीय बैंकों का डालर की खरीदारी के रूप में सीधा हस्तक्षेप होता है। डालर के इन भंडारों का पुनप्रयोग अमरीका में राजकोषीय बांड यानी टी–बांड खरीदने में किया जाता है। डालर भंडार के जमाव से घरेलू अर्थव्यवस्था में अत्यधिक धन आ जाता है, जिसका विभिन्न बाजार स्थिरीकरण बांडों के जरिए सही इंतजाम न किया जाए तो उच्च महंगाई दर की नौबत आ जाती है।

भारतीय रिजर्व बैंक ने 2008 में 40 अरब डालर खरीदे, ताकि रुपए को मजबूत होने से रोका जाए। आरबीआई की प्रत्येक डालर की खरीद के लिए व्यवस्था में समतुल्य परिमाण में रुपए डाले गए, जिससे महंगाई की समस्या उत्पन्न हुई जो गरीबों को सबसे ज्यादा सता रही है। इस तरीके से अमरीका ने अपनी मुद्रास्फीति को भारत और उसके जैसे अन्य देशों में भेज दिया। जब चौतरफा दबाव में वृद्धि होती है, तो अधिशेष तरलता को सोखने के लिए आरबीआई बाजार स्थिरीकरण बांड जारी करता है। ये बांड भारत के सालाना उधारी कार्यक्रम से बाहर हैं और इससे देश के बढ़ रहे राजकोषीय घाटे को पाटने में मदद मिलती है। भारत सरकार ने 2007 में वित्त वर्ष 2007–08 के लिए इसकी सीमा को तीन बार बढ़ा कर 2.5 लाख करोड़ रुपए यानी 63.6 अरब डालर कर दिया। इस पूरी प्रक्रिया में आरबीआई को ब्याज अंतर के चलते 3 फीसदी का नुकसान झेलना पड़ा। इस रास्ते में भारत सरकार ने डालर के आगमन पर 3 फीसदी की सब्सिडी दी, जिसे निम्न उत्पादकता वाली अमरीकी प्रतिभूतियों में निवेश किया गया। इससे पूंजी के बहिर्गमन की अमरीकी समस्या सुलझाने में मदद मिली।

अमरीका अपने घाटे को कम ब्याज दरों पर वित्त–पोषित करता है और कांग्रेस से कर्ज की सीमा बढ़ाकर अपने कर्ज को और बढ़ा रहा है। इस साल इसे बढ़ाकर 14,970 अरब डालर कर दिया गया। अमरीका को इस तरह दिवालिया होने का खतरा नहीं है, क्योंकि उसकी मुद्रा डालर दुनिया की रिजर्व मुद्रा है और निक्सन द्वारा 1971 में सोने–डालर की परिवर्तनीयता खत्म कर देने के बाद इसे बिना किसी 'सोना' या 'पदार्थ' के बैकअप के मर्जी के अनुसार छापा जा सकता है।

आज दुनिया में अमरीका सबसे बड़ा कर्जदार देश है, लेकिन मजे की बात यह है कि इसका विदेशी कर्ज उसी की मुद्रा में है, जिसे वह जब चाहे जितना चाहे छाप सकता है। दूसरे शब्दों में कहें तो चंद कागज के टुकड़ों के बदले वह दुनिया के किसी कोने से कुछ भी मंगा सकता है। बेहतरीन सामान और मानवीय प्रतिभाएं इसी डालर की लालच में अमरीका की ओर खिंचे चले आते हैं। इसलिए अमरीका अपनी मौद्रिक नीति के प्रति बहुत सचेत रहता है। इसी के बल पर वह ब्याज दर को निम्न, महंगाई दर को निम्न और डालर को मजबूत रखता है ताकि उसकी टी–प्रतिभूतियों और बांडों को वैश्विक स्तर पर आत्मविश्वास से बेचा जा सके। अमरीका अपनी मुद्रास्फीति को कमजोर देशों में भेज देता है। अमरीका तमाम मुश्किल हालातों के बावजूद मजबूत डालर की नीति बनाए रखना चाहता है, क्योंकि उसका विश्व प्रभुत्व डालर–तेल गठजोड़ पर कायम है।

अब अमरीकी अर्थव्यवस्था गहरी होती मुसीबत में फंसी है और बजट घाटा हजारों अरब डालर में है। डालर को इस तरह निकाला जा रहा है कि वह तेल बाजार के जरिए दोबारा इस्तेमाल हो जा रहा है। मांग में कमी के बावजूद तेल की कीमतों में वृद्धि इसलिए हुई है, क्योंकि तेल बिल डालर में ही होता है और विकासशील देश तेल की निर्बाध आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए अधिशेष डालर बचा लेते हैं। चूंकि वैश्विक अर्थव्यवस्था अभी मंद है, इसलिए अमरीका पश्चिम एशिया में संकट पैदा करने में जुटा है, ताकि तेल की कीमतें उच्च बनी रहें। लीबिया के बाद अब पाकिस्तान और ईरान संकट पैदा करने के लक्ष्य हैं।

डालर की कृत्रिम मांग डालर को मजबूत बनाए रखती है। अधिशेष डालर पुनः अमरीकी बांड बाजार में निम्न ब्याज दरों पर उपयोग में आ जाता है। इसलिए अमरीका अपने साम्राज्य को कायम रखने के लिए मौद्रिक हेरफेर की जटिल नीति का अनुसरण करता है। जब भी सोने में डालर की तुलना में मजबूती आती है, अमरीका डालर की मांग बढ़ाने के लिए एक या कई संकट उत्पन्न कर देता है। सोने के कमजोर होने से सोना कभी भी वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए वैकल्पिक सुरक्षित निवेश नहीं बन सकता। इस अस्वाभाविक घटना के विरुद्ध बाजारु शक्तियों के एकजुट होने के बावजूद डालर–सोना–तेल नीतियों में हेरफेर कर अमरीका डालर को मजबूत बनाए हुए है।

संदर्भ

(बैंकिंग अध्यादेश, धारा 2, व्याख्या, हांगकांग) ध्यान दें कि इस मामले में परिभाषा महीने में किसी भी जमा प्रतिदेय स्वीकार शामिल करने के लिए ३ महीने से कम के लिए बढ़ाया है, अधिक से अधिक 3 महीने की अवधि के लिए एच के से + 100 000 से अधिक की जमा स्वीकार कंपनियां के रूप में विनियमित कर रहे हैं जमा ले जा रही कंपनियां (कमचंवेपज जांपदह बवउचंदपमे) बल्कि बैंकों के रूप में हांगकांग में) से अधिक है

न्यूजीलैंड, AL Tyree,Le•isNe•is•is 2003, पृष्ठ 70 में Tyree है बैंकिंग विधि उदा.

http://en-wikipedia-org/wiki/Debits_and_credits

}} —>चार्ट 7, पृष्ठ 3

}} —>चार्ट 8, पृष्ठ 4

http://www-euromoney-com/poll/2050/PollsAndAwards/Bank&atlas&The&worlds&largest&banks-htmlEuromoney, बैंक एटलसरू इस दुनिया के सबसे बड़े बैंकों.शेयरधारक इक्विटी, 2008 तक विश्व के दस सबसे बड़े बैंकों की सूची

ज्ञान, सबसे मूल्यवान अमूर्त द्वारा अंजू भार्गव (Anju Bhargav). RMA जर्नल, जून 2001;

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

"कृषि में उर्वरकों की भूमिका : एक अध्ययन"

डॉ. भेरूलाल चौरडिया
(अतिधि विद्धवान, अर्थशास्त्र)
शासकीय महाविद्यालय पोलायकॅला, जिला शाजापुर

प्रस्तावना :–

कृषि उत्पादन को बढ़ाने की किसी भी योजना में रासायनिक उर्वरकों का महत्वपूर्ण भाग होता है। भारत की भूमि चाहे कई प्रकार से उपजाऊ है परंतु इसमें नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की कमी है जो कि कार्बनिक खाद के साथ फसल के उत्पादन को बढ़ावा देता है। जनसंख्या के तीव्र गति से बढ़ने के साथ खाद्यान्न–उत्पादन को बढ़ाने के लिए अधिकाधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग एक अनिवार्य उपाय हो जाता है।

उर्वरक कृषि उत्पादन तथा उत्पादक को प्रभावित करने वाला एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण आगत है। उर्वरकों को मोटे तौर पर दो वर्गो में रखा जा सकता है–

(1) इन आर्गेनिक उर्वरक।

(2) आर्गेनिक उर्वरक।

इन आर्गेनिक उर्वरक मनुष्य द्वारा निर्मित होते है, इन्हें रासायनिक उर्वरक भी कहते है। इन्हे हम तीन वर्गो में रख सकते है।

(1) नाइट्रोजन फर्टिलाईजर्स (N)

(2) फासफेटिक फर्टिलाईजर्स (P)

(3) पोटेशियम फर्टिलाइजर्स (K)।

इनमें से दो या तीन के मिश्रण से बने हुए उर्वरकों को हम काम्प्लेक्स उर्वरक कहते है। आर्गेनिक उर्वरक प्राकृतिक उर्वरक होता है जैसे– कम्पोस्ट उर्वरक, हरित उर्वरक आदि। बायोफर्टिलाइजर आर्गेनिक उर्वरक होता है। जिसे विशेषज्ञों द्वारा विकसित किया जाता है। इस समय यूरिया अकेला उर्वरक है जो वैधानिक मूल्य नियंत्रण के अंतर्गत है। किसानों को यूरिया की उपलब्धता की एक विवेकपूर्ण मूल्य पर व्यवस्था करने की जिम्मेदारी सरकार की है। वर्ष 2011–12 में कुल उर्वरक सब्सिडी 99456 करोड़ रूपये थी। च्ग्ज्ञण उर्वरक पर कोई नियंत्रण नहीं। उर्वरकों के मूल्य 12 मार्च 2013 से स्थिर है।

N.P.K. उर्वरक का औसत राष्ट्रीय उपभोग वर्ष 2011–12 से 141.30 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर है जिसके उपभोग में बहुत अधिक अन्तर्राज्यीय विषमता है। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कृषि उत्पादकता की वृद्धि के लिए विशेष रूप से अल्पकाल में आवश्यक माना जाता है पर इसके प्रयोग के हानिकारक प्रभाव पर्यावरण तथा मानव स्वास्थ्य पर पड़ते है।

अध्ययन के उद्देश्य :–

अध्ययन के निम्न उद्देश्य है –

(1) रासायनिक उर्वरकों के उपयोग का अध्ययन करना।

(2) रासायनिक उर्वरकों के उत्पादन तथा उपभोग का अध्ययन करना।

(3) उर्वरकों के प्रयोग अनुपातों का अध्ययन करना।

(4) यूरिया आपूर्ति का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

रासायनिक उर्वरकों का उपयोग :–

कृषि विशेषज्ञों के अनुसार कृषि में विभिन्न किस्मों के रासायनिक उर्वरकों (नाइट्रोजनी, फॉस्फेटी तथा पोटाशी–छच्ज्ञ) का उपयोग एक संतुलित अनुपात में ही किया जाना चाहिए। भारत के लिए यह अन्न फसलों हेतु मानक/आदर्श अनुपात 4% 2% 1 माना जाता है किंतु वर्ष 2012–13 में यह 8.2 % 3.2%1 रहा है।

देश में कृषि उत्पादन को बढ़ाने में रासायनिक उर्वरकों के बढ़ते उपयोग ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यूरिया जो नाइट्रोजन का मूख्य स्त्रोत है, कुल उर्वरक उपभोग का लगभग 50 प्रतिशत है। भारत की यूरिया की लगभग 80 प्रतिशत आवश्यकता देशी उत्पादन से पुरी होती है।

रासायनिक उर्वरकों का उत्पादन, आयात एवं उपभोग :–

कुछ महत्वपूर्ण वर्षो के लिए उर्वरक खपत की स्थिती को तालिका क्र. 1.1 में स्पष्ट किया गया है –

तालिका क्र. 1.1

उर्वरक का उत्पादन, आयात तथा उपभोग

(हजार टन पोषाहार)

उर्वरक	2011–12	2012–13
(ा) नाइट्रोजन युक्त उर्वरक		
उपलब्धता	17,499	16,995
उपभोग	17,300	16,820
(ठ) फॉस्फेटयुक्त उर्वरक		
उपलब्धता	8,531	6,338
उपभोग	7,914	6,653
(ड) पोटाशयुक्त उर्वरक		
उपलब्धता	3,335	1,559
उपभोग	2,576	2,061
(क) समस्त उर्वरक (ना.का.पो.)		
उपलब्धता	29,365	28,892
उपभोग	27,790	25,536

स्त्रोत :– आर्थिक समीक्षा – 2012–13।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक की उपलब्धता वर्ष 2011–12 में 17,499 (हजार टन पोषाहार) था एवं उपभोग 17,300 (हजार टन पोषाहार) था जो वर्ष 2012–13 में घटकर क्रमशः 16,995 एवं 16,820 (हजार टन पोषाहार) हो गया। इस से स्पष्ट है होता है कि वर्ष 2011–12 की अपेक्षा वर्ष 2012–13 में इसका उत्पादन व उपभोग दोनों घटा है।

फॉस्फेटयुक्त उर्वरक की उपलब्धता वर्ष 2011–12 में 8,531 (हजार टन पोषाहार) व उपभोग 7,914 (हजार टन पोषाहार) था। वर्ष 2012–13 में उपलब्धता तथा उपभोग घटकर क्रमशः 6,338 व 6,653 (हजार टन पोषाहार) हो गया। यह भी गत वर्ष की अपेक्षा उत्पादन व उपभोग दोनो घटे हैं पोटाशयुक्त

उर्वरक की उपलब्धता 3,335 (हजार टन पोषाहार) व उपभोग 2,576 (हजार टन पोषाहार) था जो वर्ष 2012–13 में उपलब्धता व उपभोग क्रमशः घटकर 1,559 व 2061 (हजार टन पोषाहार) हो गया। स्पष्ट है कि पोटाशयुक्त उर्वरकों की समस्त माँग आयात से पुरी की जाती है। अतः वर्ष 2011–12 में समस्त उर्वरकों की उपलब्धता 29,365 (हजार टन पोषाहार) था व उपभोग 27,790 (हजार टन पोषाहार) था जो वर्ष 2012–13 में घटकर उपलब्धता तथा उपभोग क्रमशः 28,892 तथा 25,536 (हजार टन पोषाहार) रह गया।

इस प्रकार उर्वरकों का उत्पादन व उपभोग दोनों गतवर्ष की तुलना में कम हो गया।

उर्वरकों के उपभोग के बारे में महत्वपूर्ण बिन्दु निम्न है–

(1) वर्ष 2005–06 में भारत में उर्वरकों का प्रति हैक्टेयर उपभोग 97 किलोग्राम था इसके विरूद्ध कुछ विकसित देशों से संम्बधी आकड़े इस प्रकार है– दक्षिण कोरिया (400 कि.ग्रा.), नीदरलैण्ड (275 कि.ग्रा.), बैल्जियम (225 कि.ग्रा.) और जापान (340 कि.ग्रा.)।

(2) उर्वरकों के गहन प्रयोग के लिए पानी का निश्चित सम्भरण एक महत्वपूर्ण शर्त है।

देश के अधिकतर भागों में यह परिस्थिति विद्यमान न होने के कारण यह भारत के उर्वरक उपभोग को बढ़ाने में एक मुख्य कठिनाई सिद्ध हुई है।

(3) चूँकि वर्षा पर आश्रित 70 प्रतिशत काश्त आधीन क्षेत्रफल द्वारा कुल उर्वरकों के केवल 20 प्रतिशत का उपभोग किया जाता है। सरकार इन क्षेत्रों में उर्वरकों के उपभोग बढ़ाने के लिए किसानों के प्रशिक्षण एवं मिट्टी के परीक्षण सम्बंधी उपाय किये जा रहे है।

(4) देश के विभिन्न राज्यों में उर्वरकों के उपभोग में काफी अंतर पाये जाते है प्रति हैक्टेयर उर्वरक उपभोग में पंजाब का प्रथम स्थान है– 184 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर इसके बाद तमिलनाडु में 163 कि.ग्रा. और आन्ध्रप्रदेश में 158 कि.ग्रा. व उड़ीसा में सबसे कम उर्वरक उपभोग होता है अर्थात् 44 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर।

(5) उर्वरकों पर प्राप्त होने वाली अर्थसाहाय्यों (Subsidies) में तेजी से वृद्धि हुई है। यह हमारे सरकारी संसाधनों पर अत्यधित भार है और दुख की बात यह है कि ये सब्सिड़ी अधिकतर सम्पन्न किसानों को प्राप्त होते है।

रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग अनुपात :–

उर्वरकों के प्रयोग अनुपात को निम्न तालिका क्र. 1.2 से स्पष्ट किया गया है:

तालिका क्र. 1.2

रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग अनुपात

वर्ष	N	P	K
1990 - 91	6.0	2.4	1.0
2000 - 01	7.0	2.7	1.0
2010 - 11	4.7	2.3	1.0
2011- 12	6.9	3.1	1.0
2012 - 13	8.2	3.2	1.0

स्त्रोत :– भारत सरकार आर्थिक समीक्षा 2012–13

उपर्युक्त तालिका क्र. 1.2 से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1990–91 में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग अनुपात जहाँ N-6.0, P-2.4 तथा K- 1-0 जो वर्ष 2012–13 में उर्वरकों का बढ़कर N व P का अनुपात क्रमशः 8.2 व 8.3 हो गया, जबकि K का अनुपात स्थिर रहा।

अतः स्पष्ट होता है कि वर्ष 1990–91 से वर्ष 2012–13 तक इन के प्रयोग अनुपात में बृद्धि देखने को मिली। उल्लेखनीय है कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में उर्वरकों की कीमतों में तीव्र वृद्धि के कारण उर्वरक आयात के लिए बहुमुल्य विदेशी मुद्रा का बहिर्गमन देश से हो रहा है। उर्वरक उत्पादन एवं उपभोग में भारत का विश्व में चीन और अमेरिका के बाद भारत का तीसरा स्थान है। देश में मार्च 2010 के अंत में 56 बड़ी उर्वरक इकाइयाँ तथा 72 लघु एवं मझौली उर्वरक इकाइयाँ कार्यरत थी। इसके बावजूद भी भारत अभी भी नाइट्रोजनी उर्वरकों की अपनी खपत का 94 प्रतिशत व फॉस्फेटी उर्वरकों की खपत का 82 प्रतिशत ही उत्पादन कर पा रहा है तथा पोटाशी उर्वरकों के लिए तो भारत पुरी तरह से आयात पर निर्भर करता है।

भारत में यूरिया की आपूर्ति :–

वर्ष 2011–12 के दौरान भारत का यूरिया आयात 78.34 लाख टन था। यूरिया की आपूर्ति करने वाले देशों में मुख्यतः ओमान, ईरान, चीन व सीआईएस देश शामिल थे। मीडिया में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार 2011–12 में यूरिया का सर्वाधिक 24.6 लाख टन का आयात ओमान से किया गया। 19.97 लाख टन आपूर्ति के साथ ईरान का दुसरा स्थान तथा 12.80 लाख टन यूरिया आपूर्ति के साथ चीन का तीसरा स्थान रहा है। तथा 11.80 लाख टन यूरिया का आयात सीआईएस राष्ट्रों से किया गया।

निष्कर्ष :–

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि रासायनिक उर्वरकों का उपयोग एक संतुलित अनुपात में किया जाना चाहिए भारत के लिए यह खाद्यान्न फसलों हेतु मानक/आदर्श अनुपात 4%2%1 माना जाता है लेकिन वर्ष 2012–13 में बढकर 8%2%3%2%1 हो गया।

अतः जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाने के लिए अधिकाधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग एक अनिवार्य उपाय हो जाता है। भारत में रासायनिक उर्वरकों की उपलब्धता व उपभोग में वर्ष 2011–12 की अपेक्षा 2012–13 में कमी देखी गई साथ ही यूरिया की आपूर्ति आयात के माध्यम से की जाती है।

अतः स्पष्ट होता है कि कृषि–विकास के लिए उर्वरकों के उत्पादन में वृद्धि आवश्यक है ताकि उपभोग में वृद्धि व आयात में कमी की जा सकें।

:: संदर्भ–सूची ::

(1) दत्त रूद्र एवं के.पी.एम.(2008) "भारतीय अर्थव्यवस्था" एस.चन्द्र एण्ड लिमिटेड, नई दिल्ली पृ.क्र. 4941।

(2) तदैव पृ.क्र. 4951।

(3) एस.एन.लाल एवं एस. के. लाल 2012 "भारतीय अर्थ व्यवस्था" शिवम् पब्लिशर्स जी.टी.रोड़, इलाहबाद, पृ.क्र. 4:7।

(4) तदैव पृ.क्र. 4:8।

(5) प्रतियोगिता दर्पण (2012) "भारतीय अर्थव्यवस्था" (अतिरिक्तांक) उपकार प्रकाशन, आगरा पृ.क्र. 116।

(6) तदैव पृ.क्र. 171।

(7) मिश्र जय प्रकाश (2007) "कृषि अर्थशास्त्र" साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा पृ.क्र. 175।

(8) दत्त रूद्र के.वी.एम् (2008) "भारतीय अर्थव्यवस्था" एस.चन्द्र एण्ड लिमिटेड, नई दिल्ली, पृ.क्र. 496।

(9) मिश्र एस.के. एवं पुरी वी.के. (2008) "भारतीय अर्थव्यवस्था" हिमालया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली पृ.क्र. 498।

(10) एस. एन. लाल एवं एस. के. लाल.(2012) "भारतीय अर्थव्यवस्था" शिवम पब्लिशर्स जी.टी.रोड, इलाहबाद पृ.क्र. 4:9।

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

म.प्र. राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम का बीज उत्पादन कार्यक्रम - एक विश्लेषण

श्रीमती मीना कीर
सहा.प्रा.(वाणिज्य)
शा.नर्मदा महाविद्यालय
होशंगाबाद (म.प्र.)

योगेश खंडेलवाल
अतिथि विद्वान (वाणिज्य)
शा.नर्मदा महाविद्यालय
होशंगाबाद (म.प्र.)

प्रारंभ से ही .षि के लिए बीज प्रमुख आदान रहा है। हजारों वर्षों से कृषक सूपो के द्वारा फसलों के लिए बीज साफ करते रहे हैं और अभी भी यह एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, लेकिन यह कृषक की बीज की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं है। कृषक को ऐसा बीज मिलना चाहिए जो सभी अवांछित सामग्री से मुक्त हो क्योंकि कृषक की पूरी फसल ऐसे गुणवत्तापूर्ण बीज पर ही निर्भर करती है। म.प्र. राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम ने अपने विभिन्न प्रक्षेत्रो एवं प्रकिया केन्द्रों तथा प्रगतिशील कृषकों के माध्यम से सम्पूर्ण म.प्र. में आधार एवं प्रमाणित बीज उत्पादन एवं वितरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया है। प्रस्तुत शोधपत्र म.प्र. राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम के बीज उत्पादन कार्यकम के विश्लेषण पर आधारित है।

निगम की स्थापना एवं परिचय –

मध्यप्रदेश में कृषि उत्पादन को बढ़ाने तथा उच्च गुणवत्ता के बीज की व्यवस्था करने के लिये छठी पंचवर्षीय योजना के प्रारंभिक वर्ष 1980 में मध्यप्रदेश राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम की स्थापना म.प्र. राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम अधिनियम 1980 (क्रमांक–18) के अन्तर्गत दिनांक 17 नवम्बर 1980 को म.प्र. सरकार के एक संवैधानिक निकाय है के रूप में की गई थी। वर्तमान में म.प्र. राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम मध्यप्रदेश राज्य में अनाज, दलहन, तिलहन, बागबानी एवं अन्य प्रमुख फसलों के गुणवत्तापूर्ण एवं प्रमाणित बीज के उत्पादन, विपणन एवं वितरण हेतु एक अग्रणी निकाय के रूप में कार्यरत है।

म.प्र. राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम को ISO 9001-2008 का दर्जा प्राप्त है। निगम विगत् तीन दशकों से प्रदेश के कृषकों को खाद्यान्न, दलहन एवं तिलहन फसलों के उच्च गुणवत्तापूर्ण

प्रमाणित एवं आधार बीज की आपूर्ति प्रदेश भर में फैले हुए 48 बीज प्रकिया केन्द्रों और 42 कृषि प्रक्षेत्रों के माध्यम से कर रहा है। निगम द्वारा कृषकों को वितरित किये जाने वाले बीज एक विशेष प्रक्रिया से ग्रेडिंग करके तथा म.प्र. राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा प्रयोगशाला में परीक्षण किये जाने के पश्चात् टैग–पैक कर कृषकों को उपलब्ध कराये जाते हैं।

निगम की स्थापना के उद्देश्य –

1. प्रदेश के कृषकों को कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए उन्नत किस्म का उच्च गुणवत्तायुक्त प्रमाणित बीज सुगमता से उचित मूल्य पर उपलब्ध कराना।
2. प्रदेश के कृषकों को उनके द्वार तक सहकारी समितियों के माध्यम से बीज पहुंचाना।
3. प्रदेश की फसल उत्पादकता बढ़ाने के लिये बीज प्रतिस्थापन दर में वृद्धि करना।
4. प्राप्त किये गये प्रजनक बीज से आधार बीज का अधिक से अधिक उत्पादन प्रदेश में कराने की व्यवस्था तथा प्रगुणन अनुपात में उत्तरोत्तर सुधार लाना।
5. प्रदेश के अधिक से अधिक कृषकों को आधार बीज उपलब्ध कराकर अधिक से अधिक प्रमाणित बीज का उत्पादन कराना।

निगम के कृषि प्रक्षेत्र एवं बीज संसाधन केन्द्र –

वर्तमान में निगम के अधिकार में कुल 42 कृषि प्रक्षेत्र एवं 48 बीज संसाधन केन्द्र हैं जिनका निगम द्वारा सफलतापूर्वक संचालन किया जा रहा है। इन कृषि प्रक्षेत्रों पर बीज प्रक्रिया एवं प्रक्षेत्र कार्य के लिये आवश्यकतानुसार श्रमिकों को रखा जाता है, जिन्हें उनकी उपस्थिति अनुसार साप्ताहिक भुगतान किया जाता है। प्रक्षेत्र कार्य के संचालन एवं नियंत्रण कार्य के लिये निगम द्वारा प्रबंधक प्रक्षेत्र एवं अन्य कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है। निगम के 42 कृषि प्रक्षेत्रों का कुल क्षेत्रफल 3364.83 हैक्टेयर है। इसमें से कास्तयोग्य क्षेत्रफल 2515.48 हैक्टेयर, सिंचित क्षेत्रफल 126.94 हैक्टेयर और असिंचित क्षेत्रफल 1078.27 हैक्टेयर हैं। बीज निगम द्वारा प्रदेश के कृषकों के द्वार तक बीज पहुँचाने के लिये विभिन्न वितरण प्रणालियों का उपयोग किया जाता हैं। कृषक प्रमाणित बीज निम्न स्थानों से आसानी से प्राप्त कर सकते हैं –

1. प्राथमिक बहुउद्देशीय सहकारी समितियों के माध्यम से।
2. डबल लॉक केन्द्रों के माध्यम से।
3. बीज निगम के प्रदेश के विभिन्न जिलों में स्थित 42 प्रक्षेत्रों एवं 48 बीज प्रकिया केन्द्रों के माध्यम से।
4. बीज निगम के बीज विक्रय केन्द्रों के माध्यम से।

5. बीज निगम के अधिकृत विक्रेताओं के माध्यम से।

बीज उत्पादन कार्यक्रम की प्रक्रिया –

बीज उत्पादन कार्यक्रम के लिये प्रथमतः कृषि विश्वविद्यालयों से प्रजनक बीज प्राप्त कर उनका प्रगुणन बीज निगम के कृषि प्रक्षेत्रों एवं चुने हुये प्रगतिशील कृषक उत्पादको के प्रक्षेत्रों पर किया जाता है, ताकि आधार बीज की अनुवांशिक शुद्धता कायम रहे। प्रजनक बीज से तैयार किया गया आधार बीज का संसाधन अद्यतन बीज संसाधन संयंत्रों पर कर इन्हें बीज उत्पादन कार्यक्रम के तहत प्रदेश के बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़े 4500 कृषकों को उचित मूल्य पर प्रदाय किया जाता है तथा इस बीज से प्रगुणित बीज को कृषकों से शासन द्वारा निर्धारित मूल्य पर वापस लिया जाता है।

उपरोक्तानुसार तैयार किये गये बीज का मध्यप्रदेश राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्था से विस्तृत परीक्षण कराया जाता है। बीज मानकों के अनुरूप पाये जाने के पश्चात् ही प्रमाणित बीज कृषकों को वितरण हेतु उपलब्ध कराये जाते हैं। बीज उत्पादक कृषक को कटाई के पश्चात् अपना उत्पादन प्रत्येक फसल हेतु निर्धारित तिथि से पूर्व सम्बंधित बीज प्रकिया केन्द्र में अवश्य पहुँचा देना चाहिए और सम्बंधित उत्पादक संस्था से बीज प्राप्ति की रसीद प्राप्त कर लेनी चाहिए। निगम द्वारा प्रत्येक बीज फसल की प्रक्रिया हेतु तिथियां निर्धारित की गई हैं अतः कृषकों को बीज की प्रकिया की निर्धारित तिथियों हेतु सम्बंधित बीज प्रकिया केन्द्र अथवा बीज प्रमाणीकरण संस्था के प्रतिनिधि से संपर्क करना चाहिए।

बीज उत्पादन कार्यक्रम के लाभ –

1. बीज की अनुवांशिक शुद्धता की सुनिश्चितता।
2. उच्च गुणवत्ता वाले प्रमाणित बीज के सतत् उपयोग से फसल उत्पादकता में वृद्धि।
3. शासन द्वारा निर्धारित बीज उपार्जन दर मंडी दर से अधिक होने के कारण कृषकों को बीज उत्पादन से अतिरिक्त वित्तीय लाभ।
4. बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़े कृषकों को फसल की तकनीकी जानकारी की सहज उपलब्धता।

बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़ने के लिये कृषकों की आवश्यक पात्रता –

1. कृषक को मध्यप्रदेश का मूल निवासी होना आवश्यक है।
2. कृषक के पास कम से कम 2 हैक्टयेर भूमि निजी स्वामित्व में होना आवश्यक है।
3. कृषक की भूमि बीज निगम प्रकिया केन्द्र के 30 किलोमीटर दायरे में होना चाहिये।

शासकीय प्रोत्साहन –

बीज उत्पादन कार्यक्रम के अंतर्गत कृषकों को खरीफ एवं रबी की फसलों के उत्पादन एवं

वितरण पर राज्य शासन के कृषि विभाग की ओर से अनुदान दिये जाने का प्रावधान किया गया है। यह राशि राज्य शासन द्वारा घोषित उपार्जन दर एवं विक्रय दर में सम्मिलित रहती है। निगम द्वारा बीज उत्पादक कृषकों को बीज उपार्जन हेतु बारदाने प्रदाय किये जाते हैं, साथ ही निगम द्वारा बीज प्रक्रिया केन्द्रों तक बीज लाने हेतु कृषकों को परिवहन खर्च में छूट भी दी जाती है। केन्द्रीय सरकार द्वारा देय उत्पादन एवं वितरण अनुदान का लाभ भी कृषकों तक पहुँचाया जाता है।

प्राथमिक समंकों का विश्लेषण एवं विवेचन –

प्रस्तुत शोधपत्र में नर्मदापुरम् संभाग के ऐसे कृषक जो कि बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुडे हुये हैं, उनके पारिवारिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को समझने, प्रमाणित बीजं अपनाने पर परिवर्तनशील स्थिति को जानने तथा इस आधार पर मध्यप्रदेश राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम की कार्यप्रणाली एवं बीज उत्पादन कार्यक्रम के विश्लेषण को विभिन्न दृष्टिकोण से देखने का प्रयास किया गया है। नर्मदापुरम् संभाग के दैव निदर्शन रीति से चयनित किये गये सर्वेक्षित 150 कृषकों की शोध विषय संबंधी जानकारी के प्रस्तुतीकरण के लिए प्रश्नावली द्वारा प्राप्त बहुआयामी समंकों का विश्लेषण एवं विवेचन विभिन्न तालिकाओं के माध्यम से किया गया है, जो निम्नानुसार प्रस्तुत है –

1. निगम द्वारा संचालित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़े कृषकों के संबंध में सर्वेक्षित कृषकों से प्राप्त अभिमतों के आधार पर वर्गीकरण प्रतिशत –

निगम द्वारा संचालित प्रमाणित बीज उत्पादन कार्यक्रम से कृषकों को अनेक लाभ हैं। इसमें चुनिंदा कृषकों को प्रमाणित एवं उच्च गुणवत्ता का बीज प्रदान करके उनकी कृषि भूमि पर उसकी पैदावार ली जाती है तथा अच्छे दामों पर निगम द्वारा उसे क्रय कर लिया जाता है इस कार्यक्रम के द्वारा कृषकों को अपनी परंपरागत कृषि से अलग चुनौतीपूर्ण कार्य सौंपा जाता है तथा उसका अच्छा मूल्य भी प्राप्त हो जाता है। इस कार्यक्रम के संबंध में सर्वेक्षित कृषकों से प्राप्त अभिमतों के आधार पर वर्गीकरण प्रतिशत को तालिका क्र. 1 में दर्शाया गया हैं–

तालिका क्र. 1

निगम द्वारा संचालित प्रमाणित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़े कृषकों के संबंध में सर्वेक्षित कृषकों से प्राप्त अभिमतों के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़े होने के संबंध में	संख्या	प्रतिशत
1	बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़े हैं	58	38.67
2	बीज उत्पादन कार्यक्रम से नहीं जुड़े हैं	92	61.33
	योग	150	100

स्त्रोत– साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर संकलित समंक।

उपर्युक्त तालिका क्र. 1 से स्पष्ट है कि निगम द्वारा संचालित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़े हुए कृषकों की संख्या 58 (38.62 प्रतिशत) तथा ऐसे कृषक जो बीज उत्पादन कार्यक्रम से नहीं जुड़े हैं उनकी संख्या 92 (61.33 प्रतिशत) है।

2. उत्पादित प्रमाणित बीज का बिक्री मूल्य अनाज के बिक्री मूल्य से अधिक प्राप्त होने के संबंध में सर्वेक्षित कृषकों से प्राप्त अभिमतों का वर्गीकरण प्रतिशत –

वर्तमान समय में कृषि का उद्देश्य जीविकोपार्जन ही नहीं वरन् अधिकतम लाभ प्राप्त करना होता है, इसके लिए कृषक प्रमाणित बीज का भी उत्पादन करते हैं तथा अधिकतम लाभ प्राप्त करते हैं। इन्हीं उद्देश्यों को लेकर सर्वेक्षण कृषकों से प्राप्त अभिमतों का वर्गीकरण प्रतिशत तालिका क्र. 2 में दर्शाया गया है–

तालिका क्र. 2

उत्पादित प्रमाणित बीज का बिक्री मूल्य अनाज के बिक्री मूल्य से अधिक प्राप्त होने के संबंध में सर्वेक्षित कृषकों से प्राप्त अभिमतों का वर्गीकरण

क्र.	प्रमाणित बीज का बिक्री मूल्य अनाज के विक्रय मूल्य से अधिक प्राप्त होने के संबंध में	संख्या	प्रतिशत
1	प्रमाणित बीज का विक्रय मूल्य अनाज के विक्रय मूल्य से अधिक प्राप्त होता है	42	72.41
2	प्रमाणित बीज का विक्रय मूल्य अनाज के विक्रय मूल्य से अधिक प्राप्त नहीं होता है	16	27.59
	योग	58	100

स्त्रोत– साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर संकलित समंक।

उपर्युक्त तालिका क्र. 2 से स्पष्ट है कि प्रमाणित बीज का विक्रय मूल्य अनाज के विक्रय मूल्य से अधिक प्राप्त होता है ऐसे कृषकों की संख्या 42 (72.41 प्रतिशत) है तथा ऐसे कृषक जिन्हें प्रमाणित बीज का विक्रय मूल्य अनाज के विक्रय मूल्य से अधिक प्राप्त नहीं होता है ऐसे कृषकों की संख्या 16 (27.59 प्रतिशत) है।

3. प्रमाणित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़ने के कारण आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है के संबंध में संर्वेक्षित कृषकों से प्राप्त अभिमतों का वर्गीकरण प्रतिशत –

वर्तमान समय में आर्थिक स्थिति में सुधार प्रत्येक मनुष्य का स्वप्न होता है तथा इसके लिए वह प्रयास भी करता रहता है। कृषि के क्षेत्र में भी यही नियम लागू होता है। कृषक अपनी आर्थिक स्थिति

में सुधार हेतु प्रयास करता है, इसी संबंध में सर्वेक्षित कृषकों से प्रमाणित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़ने के कारण आर्थिक स्थिति में सुधार के संबंध में प्राप्त अभिमतों का वर्गीकरण प्रतिशत तालिका क्र.3 में प्रस्तुत किया गया है –

तालिका क्र. 3

प्रमाणित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़ने के कारण आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है के संबंध में सर्वेक्षित कृषकों से प्राप्त अभिमतों का वर्गीकरण

क्र.	प्रमाणित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़ने के कारण आर्थिक स्थिति में सुधार के संबंध में अभिमत	संख्या	प्रतिशत
1	उत्पादन कार्यक्रम के कारण आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है	48	82.75
2	उत्पादन कार्यक्रम के कारण आर्थिक स्थिति में सुधार नही हुआ है	10	17.25
	योग	58	100

स्त्रोत– साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर संकलित समंक।

उपर्युक्त तालिका क्र. 3 से स्पष्ट है कि ऐसे सर्वेक्षित कृषक जिनकी आर्थिक स्थिति में सुधार प्रमाणित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़ने के कारण हुई है उनकी संख्या 48 (82.75 प्रतिशत) तथा ऐसे कृषक जिनकी आर्थिक स्थिति में सुधार प्रमाणित बीज उत्पादन कार्यक्रम से जुड़ने के बाद भी नहीं हुआ है 10 (17.25 प्रतिशत) हैं।

निष्कर्ष एवं उपसंहार –

म.प्र. राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम ने अपने विभिन्न प्रक्षेत्रों एवं प्रकिया केन्द्रों तथा प्रगतिशील कृषकों के माध्यम से नर्मदापुरम् संभाग के साथ ही सम्पूर्ण म.प्र. में आधार एवं प्रमाणित बीज उत्पादन एवं वितरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया है। उपर्युक्त तालिकाओं के विश्लेषण से भी प्रदर्शित होता है कि निगम ने अपने बीज उत्पादन कार्यक्रम के माध्यम से नर्मदापुरम् संभाग की कृषि व्यवस्था में भरपूर योगदान दिया है। यह स्थिति निगम की सफलता को प्रदर्शित करती हैं।

सन्दर्भ :–

चोपड़ा कुलदीप, नई शताब्दि का बीज, शिव सदन प्रकाशक, भोपाल 2014

देव एस.एम., भारतीय कृषि की वर्तमान स्थिती, सरस्वती प्रकाशन, आगरा 2014

वार्षिक प्रतिवेदन, कार्यालय, आयुक्त नर्मदापुरम् संभाग, 2014–15

वार्षिक प्रतिवेदन, कृषि मंत्रालय, म.प्र.शासन, 2014–15

वार्षिक प्रतिवेदन, म.प्र.राज्य बीज एवं फार्म विकास निगम, 2014–15

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

पंचायती राज व्यवस्था एक अध्ययन

डी एन यादव
सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र विभाग
शासकीय महाविद्यालय नसरूल्लागंज

पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम, तालुका और जिला आते हैं। भारत में प्रचीन काल से ही पंचायती राज व्यवस्था आस्तित्व में रही हैं। आधुनिक भारत में प्रथम बार तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा राजस्थान के नागौर जिले में 2 अक्टूबर 1959 को पंचायती राज व्यवस्थ लागू की गई।

संवैधानिक प्रवधान

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 में राज्यों को पंचायतों के गठन का निर्देश दिया गया हैं। 1993 मैं संविधान में 73वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 करके पंचायत राज संस्था को संवैधानिक मान्यता दे दी गयी हैं। 23 अप्रैल 1993 भारत में पंचायती राज के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण मार्गचिन्ह था क्योंकि इसी दिन संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को संबैधानिक दर्जा हासिल कराया गया और इस तरह महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज के स्वप्न को वास्तविकता में बदलने की दिशा में कदम बढ़ाया गया था। 73वें संशोधन अधिनियम, 1993 में निम्नलिखित प्रावधान किये गये हैं

एक त्रि-स्तरीय ढांचे की स्थापना (ग्राम पंचायत, पंचायत समिति या मध्यवर्ती पंचायत तथा जिला पंचायत)

ग्राम स्तर पर ग्राम सभा की स्थापना

हर पांच साल में पंचायतों के नियमित चुनाव

अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में सीटों का आरक्षण

महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटों का आरक्षण

पंचायतों की निधियों में सुधार के लिए उपाय सुझाने हेतु राज्य वित्त आयोगों का गठन

राज्य चुनाव आयोग का गठन

73वां संशोधन अधिनियम पंचायतों को स्वशासन की संस्थाओं के रूप में काम करने हेतु आवश्यक शक्तियां और अधिकार प्रदान करने के लिए राज्य सरकार को अधिकार प्रदान करता है। ये शक्तियां और अधिकार इस प्रकार हो सकते हैं

संविधान की गयारहवीं अनुसूची में सूचीबध्द 29 विषयों के संबंध में आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार करना और उनका निष्पादन करना

कर, डयूटीज, टॉल, शुल्क आदि लगाने और उसे वसूल करने का पंचायतों को अधिकार

राज्यों द्वारा एकत्र करों, डयूटियों, टॉल और शुल्कों का पंचायतों को हस्तांतरण

ग्राम सभा किसी एक गांव या पंचायत का चुनाव करने वाले गांवों के समूह की मतदाता सूची में शामिल व्यक्तियों से मिलकर बनी संस्था है।

गतिशील और प्रबुध्द ग्राम सभा पंचायती राज की सफलता के केंद्र में होती है। राज्य सरकारों से आग्रह किया गया है कि वे पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम, 1996 में उल्लिखित प्रावधानों के अनुसार ग्राम सभा को शक्तियां प्रदान करें।

गणतंत्र दिवस, श्रम दिवस, स्वतंत्रता दिवस और गांधी जयंती के अवसर पर देश भर में ग्राम सभा की बैठकों के आयोजन के लिए पंचायती राज कानून में अनिवार्य प्रावधान शामिल करना।

पंचायती राज अधिनियम में ऐसा अनिवार्य प्रावधान जोड़ना जो विशेषकर ग्राम सभा की बैठकों के कोरम, सामान्य बैठकों और विशेष बैठकों तथा कोरम पूरा न हो पाने के कारण फिर से बैठक के आयोजन के संबंध में हो।

ग्राम सभा के सदस्यों को उनके अधिकारों और शक्तियों से अवगत कराना ताकि जन भागीदारी सुनिश्चित हो और विशेषकर महिलाओं तथा अनुसूचित जाति/जनजाति के लोगों जैसे सीमांतीकृत समूह भाग ले सकें।

ग्राम सभा के लिए ऐसी कार्य-प्रक्रियाएं बनाना जिनके द्वारा वह ग्राम विकास मंत्रालय के लाभार्थी-उन्मुख विकास कार्यक्रमों का असरकारी ढंग से सामाजिक ऑडिट सुनिश्चित कर सके तथा वित्तीय कुप्रबंधन के लिए वसूली या सजा देने के कानूनी अधिकार उसे प्राप्त हो सकें।

ग्राम सभा बैठकों के संबंध में व्यापक प्रसार के लिए कार्य-योजना बनाना।

ग्राम सभा की बैठकों के आयोजन के लिए मार्ग-निर्देश/कार्य-प्रक्रियाएं तैयार करना।

प्राकृतिक संसाधनों, भूमि रिकार्डों पर नियंत्रण और समस्या-समाधान के संबंध में ग्राम सभा के अधिकारों को लेकर जागरूकता पैदा करना।

73वां संविधान संशोधन अधिनियम ग्राम स्तर पर स्व-शासन की संस्थाओं के रूप में ऐसी सशक्त पंचायतों की

परिकल्पना करता है जो निम्न कार्य करने में सक्षम हो:

ग्राम स्तर पर जन विकास कार्यों और उनके रख-रखाव की योजना बनाना और उन्हें पूरा करना।

ग्राम स्तर पर लोगों का कल्याण सुनिश्चित करना, इसमें स्वास्थ्य, शिक्षा, समुदाय भाईचारा, विशेषकर जेंडर और जाति-आधारित भेदभाव के संबंध में सामाजिक न्याय, झगड़ों का निबटारा, बच्चों का विशेषकर बालिकाओं का कल्याण जैसे मुद्दे होंगे।

73वें संविधान संशोधन में जमीनी स्तर पर जन संसद के रूप में ऐसी सशक्त ग्राम सभा की परिकल्पना की गई है जिसके प्रति ग्राम पंचायत जवाबदेह हो। 74वें संविधान संशोधन

वैदिक काल में भी पंचायतों का अस्तित्व था। ग्राम के प्रमुख को ग्रामणी कहते थे। उत्तर वैदिक काल में भी यह होता था जिसके माध्यम से राजा ग्राम पर शासन करता था। बौद्धकालीन ग्रामपरिषद् में ग्राम वृद्ध सम्मिलित होते थे। इनके प्रमुख को ग्रामभोजक कहते थे। परिषद् अथवा पंचायत ग्राम की भूमि की व्यवस्था करती थी तथा ग्राम में शांति और सुरक्षा बनाए रखने में ग्रामभोजक की सहायता करती थी। जनहित के अन्य कार्यों का संपादन भी वही करती थी। स्मृति ग्रंथों में भी पंचायत का उल्लेख है। कौटिल्य ने ग्राम को राजनीतिक इकाई माना है। अर्थशास्त्र का ग्रामिक ग्राम का प्रमुख होता था जिसे कितने ही अधिकार प्राप्त थे। अपने सार्वजनिक कर्तव्यों को पूरा करने में वह ग्रामवासियों की सहायता लेता था। सार्वजनिक हित के अन्य कार्यों में भी ग्रामवासियों का सहयोग वांछनीय था। ग्राम की एक सार्वजनिक निधि भी होती थी जिसमें जुर्माने, दंड आदि से धन आता था। इस प्रकार ग्रामिक और ग्रामपंचायत के अधिकार और कर्तव्य सम्मिलित थे जिनकी अवहेलना दंडनीय थी। गुप्तकाल में ग्राम शासन की सबसे छोटी इकाई था जिसके प्रमुख को ग्रामिक कहते थे। वह पंचमंडल अथवा पंचायत की सहायता से ग्राम का शासन चलाता था। ग्रामवृद्ध इस पंचायत के सदस्य होते थे। हर्ष ने भी इसी व्यवस्था को अपनाया। उसके समय में राज्य भुक्ति (प्रांत), विषय (जिला) और नवीं और दसवीं शताब्दी के चोल और उत्तर मल्लूर शिलालेखों से पता चलता है कि दक्षिण में भी पंचायत व्यवस्था थी। ग्राम्य स्वशासन का विकास चोल शासन की मुख्य विशेषता थी। इन साम्य शासन इकाइयों को कुर्रम कहते थे, जिनमें कई ग्राम सम्मिलित होते थे। कुर्रम एक स्वायत्तशासी इकाई थी। शासनसत्ता एक महासभा में निहित होती थी जिले ग्राम के लोग चुनते थे सभा अपनी समितियों के माध्यम से शासन का काम चलाती थी। इस प्रकार की आठ समितियाँ थीं जो जनहित के विभिन्न कार्यों को करने के अतिरिक्त शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए उत्तरदायी थीं। ये न्याय संबंधी कार्य भी करती थीं। ग्राम पूरी तरह स्वायत्तशासी था और इस प्रकार केंद्रीय शासन अनेक दायित्वों से मुक्त रहता था। मुस्लिम और मराठा कालों में भी किसी न किसी प्रकार की पंचायत व्यवस्था चलती रही और प्रत्येक ग्राम अपने में स्वावलंबी बना रहा।

अंग्रेजी शासनकाल में पंचायत-व्यवस्था को सबसे अधिक धक्का पहुँचा और वह यह व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई।

फिर भी ग्रामों के सामाजिक जीवन में पंचायतें बनी रहीं। प्रत्येक जाति अथवा वर्ग की अपनी अलग-अलग पंचायतें थीं जो उसके सामाजिक जीवन को नियंत्रित करती थीं और पंचायत की व्यवस्था एवं नियमों का उल्लंघन करनेवाले को कठोर दंड दिया जाता था। शासन की ओर से इन पंचायतों के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं किया जाता था। आरंभ से ही अंग्रेजों की नीति यह रही कि शासन का काम, यथासंभव, अधिकाधिक राज्य कर्मचारियों के हाथों में ही रहे। इसके परिणामस्वरूप फौजदारी और दीवानी अदालतों की स्थापना, नवीन राजस्व नीति, पुलिस व्यवस्था, गमनागमन के साधनों का विकास आदि कारणों से ग्रामों का स्वावलंबी जीवन और स्थानीय स्वायत्तता धीरे-धीरे समाप्त हो चली।

परंतु आगे चलकर अंग्रेजों ने भी यह अनुभव किया कि उनकी केंद्रीकरण की नीति से शासनभार दिन प्रति दिन बढ़ता ही जा रहा है। दूसरी ओर राष्ट्रीय जाग्रति के कारण स्वायत्तशासन की माँग भी बढ़ रही थी। अतएव उन्हें विकेंद्रीकरण की दिशा में कदम उठाने को बाध्य होना पड़ा। प्रारंभ में जिला बोर्डों और म्युनिसिपल बोर्डों की स्थापना की गई। सन् 1907 के विकेंद्रीकरण संबंधी शाही कमीशन ने पंचायतों के महत्व को स्वीकर किया और अपनी रिपोर्ट में लिखा कि किसी भी स्थायी संगठन की नींव, जिससे जनता का सक्रिय सहयोग प्रशासन के साथ हो, ग्रामों में ही होनी चाहिए। कमीशन ने सिफारिश की कि कुछ चुने हुए ग्रामों में, जो पारस्परिक दलबंदी और झगड़ों से मुक्त हों, पंचायतें स्थापित की जाएँ और प्रारंभ में उन्हें सीमित अधिकार दिए जाएँ। तत्कालीन भारत सरकार ने 1915 ई. में कमीशन की सिफारिशों को सिद्धांततः तो स्वीकर कर लिया परंतु व्यवहार में उनकी पूर्णतया उपेक्षा की गई। बहुत ही कम ग्रामों में पंचायतें बनी; जो बनीं, वे भी सरकार द्वारा पूरी तरह नियंत्रित थी। भारत सरकार के 1919 मे अधिनियम के अनुसार प्रांतीय सरकारों को स्वशासन के कुछ अधिकार दिए गए और 1920 के आसपास सभी प्रांतों में ग्राम पंचायत अधिनियम बनाए गए। संयुक्त प्रदेश (उत्तर प्रदेश) में 1920 के पंचायत ऐक्ट के अधीन लगभग 4700 ग्राम पंचायतें स्थापित की गईं। सभी प्रांतों में पंचायतों को सीमित अधिकार दिए गए। वे जनस्वास्थ्य, स्वच्छता, चिकित्सा, जलविकास, सड़कों, तालाबों कुओं आदि की देखभाल करती थीं। उन्हें न्याय संबंधी कुछ अधिकार भी प्राप्त थे। वे अधिकतम 200 रु. की चल संपत्ति से संबद्ध मुकदमे ले सकती थीं और फौजदारी के मुकदमों में 50 रु. तक जुर्माना कर सकती थीं। इनकी आय का मुख्य साधन जुर्माना या दान था। परंतु वास्तविकता यह रही कि प्राचीन पंचायतों की तुलना में ये पंचायतें पूर्णतया प्रभावहीन थीं, इनके पंच जनता द्वारा न चुने जाकर सरकार द्वारा मनोनीत किए जाते थे तथा आय के साधन न होने के करण इनकी आर्थिक स्थिति शोचनीय थी। दूसरी ओर राष्ट्रीय आंदोलन के कर्णधार यह अनुभव करते थे कि गाँवों का आर्थिक और नैतिक पतन केवल पंचायतों की पुनः स्थापना द्वारा ही रोका जा सकता है। गाधी जी के ग्रामों के लिए दससूत्री कार्यक्रम में पंचायतों को सुदृढ़ बनाने की बात मुख्य थी। वे पंचायतों को स्वतंत्र भारत की शासनव्यवस्था की आधारशिला बनाना चाहते थे। 1937 में सात प्रांतों में स्थापित कांग्रेसी सरकारों के सामने भी

यही आदर्श था। उत्तर प्रदेश में अनेक ग्रामों में जीवनसुधार समितियाँ बनाई गई जिन्हें ग्रामविकास के कार्य सौंपे गए।

इस प्रकार 1947 ई. तक ग्रामों में सही पंचायत व्यवस्था का अभाव ही रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इस व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के सक्रिय प्रयास आरंभ हुए। उत्तर प्रदेश में सन् 1947 में पंचायत राज अधिनियम बनाया गया। संविधान के अंतर्गत राजनीति के निदेशक तत्वों में राज्य का यह प्रमुख कर्तव्य बतलाया गया कि वह ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर हो तथा उनको ऐसी शक्तियाँ और अधिकार प्रदान करे जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों। इस निदेश के अनुसार प्रत्यक राज्य में पंचायत व्यवस्था लागू करने की दिशा में कदम उठाए गए और प्रत्येक ग्राम अथवा ग्रामसमूह में पंचायत की स्थापना की गई। पंचायत के सदस्यों का चुनाव गाँव के मताधिकारप्राप्त व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। ग्राम पंचायतें ग्राम की स्वच्छता, प्रकाश, सड़कों, औषधालयों, कुओं की सफाई और मरम्मत, सार्वजनिक भूमि, पैठ, बाजार तथा मेलों और चरागाहों की व्यवस्था करती हैं,

पंचायत का इतिहास

पंचायत शब्द की व्युत्पति संस्कृत भाषा के शब्द 'पंचायत=' से हुई है, जिसका अर्थ है पांच व्यक्तियों का समूह। महात्मा गांधी ने भी पंचायत का शाब्दिक अर्थ गांव के लोगों द्वारा चुने हुए पांच व्यक्तियों की सभा से लिया है। मनुस्मृति के अनुसार गांव के अधिकारी को 'ग्रामिक' कहते थे। उसका कार्य कर आदि की वसूली करना था। दस गांव के ऊपर दशिक होता था। 20 गांव के ऊपर विशाधिप होता था। सौ गांवों के ऊपर के कर्मचारी को शतपाल कहा जाता था तथा एक हजार गांवों के ऊपर के कर्मचारी का नाम सहस्रपति था।

प्रो. आलतेकर ने विभिन्न शिलालेखों का अध्ययन करने के उपरांत बताया कि उत्तर भारत के अलावा गुजरात, महाराष्ट्र व कर्नाटक में ग्रामों की समस्याएं सुलझाने के लिए ग्राम सभाएं होती थीं। मेटकैफ ने इन्हें 'लिटिल रिपब्लिक' यानी लघु गणतंत्र की संज्ञा दी।

1952 में ग्रामीण विकास के सघन विकास के लिए सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरूआत हुई। इसके बाद 1953 में सारे देश में 'राष्ट्रीय विस्तार सेवा' स्थापित की गई। इसके लिए सारे देश को विकास खंडों में बाटा गया। लगभग 60,000 की जनसंख्या पर एक विकास खंड बनाया गया।

सामुदायिक विकास व राष्ट्रीय विस्तार सेवा की विफलता के बाद बलवंतराय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई। जिसने अपनी रिपोर्ट 24 नवंबर 1987 को सरकार के सम्मुख प्रस्तुत की। रिपोर्ट में कहा गया है, 'बिना जिम्मेदारी और अधिकारों के विकास कार्यों में प्रगति नहीं हो सकती। समुदाय विकास सही अर्थों में तभी हो सकता है जब समुदाय अपनी समस्याओं को समझे, आवश्यक अधिकारों का प्रयोग कर सके और स्थानीय प्रशासन पर लगातार और समझदारी के साथ निगाह रख सके। इस उद्देश्य से हम शीघ्र ही चुने हुए संवैधानिक एवं

निर्वाचित स्थानीय निकायों की स्थापना करने की सिफारिश करते हैं और आवश्यक संसाधन, अधिकार तथा प्राधिकार सौंपे जाने की भी सिफारिश करते हैं।

योजना आयोग द्वारा जी. के. वी. राव समिति का गठन 25 मार्च 1985 को ग्रामीण क्षेत्र में विकास व गरीबी उन्मूलन से संबंधित प्रशासनिक व्यवस्था की समीक्षा करने के लिए किया गया था। समिति ने अपनी रिपोर्ट दिसंबर, 1985 में प्रस्तुत की। इसके अनुसार राज्य सरकारें लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया के प्रति उदासीन रही है। अधिकांश राज्यों में पंचायतें शक्ति व अधिकार तथा संसाधनों के अभाव में निष्प्रभावी होती जा रही हैं।

इसी प्रकार बलवंत राय मेहता (1957) अशोक मेहता (1978) समितियों ने भी पंचायतों को अधिकार संपन्न किए जाने की सिफारिश की थी परंतु स्थिति में कोई उल्लेखनीय बदलाव नहीं आया। एल. एम. सिंघवी के नेतृत्व में 1986 में गठित समिति की रिपोर्ट के आधार पर संसद ने 1992 में 73वे संविधान संशोधन विधेयक के माध्यम से पंचायतों को संविधान की नौवीं सूची में शामिल कर संवैधानिक दर्जा दिया।

This entry was posted on Thursday, March vvth, w®v® and is filed under विविधा.

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. श्रीनाथ शर्मा (2010) राजनीतिक समाजशास्त्र, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल
2. डॉ. डी.एस. बघेल (2004) समाजशास्त्र, कैलाश पुस्तक सदन भोपाल म.प्र.
3. डॉ. डी.एस. बघेल (2005) राजनैतिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, दिल्ली–7

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

SUBHAS CHANDRA BOSE

SURESH KUMAR VIMAL
Principal Govt. Digree College
Bhesdehi, Betul

Subhas Chandra Bose (Bengali: [Subhas Chandra Bose] (listen); 23 January 1897 – 18 August 1945, was an Indian nationalist whose defiant patriotism made him a hero in India, but whose attempt during World War II to rid India of British rule with the help of Nazi Germany and Imperial Japan left a troubled legacy. The honorific Netaji (Hindustani: "Respected Leader"), first applied in early 1942 to Bose in Germany by the Indian soldiers of the Indische Legion and by the German and Indian officials in the Special Bureau for India in Berlin, was later used throughout India.

Earlier, Bose had been a leader of the younger, radical, wing of the Indian National Congress in the late 1920s and 1930s, rising to become Congress President in 1938 and 1939. However, he was ousted from Congress leadership positions in 1939 following differences with Mahatma Gandhi and the Congress high command. He was subsequently placed under house arrest by the British before escaping from India in 1940.

Bose arrived in Germany in April 1941, where the leadership offered unexpected, if sometimes ambivalent, sympathy for the cause of India's independence, contrasting starkly with its attitudes towards other colonised peoples and ethnic communities. In November 1941, with German funds, a Free India Centre was set up in Berlin, and soon a Free India Radio, on which Bose broadcast nightly. A 3,000-strong Free India Legion, comprising Indians

captured by Erwin Rommel's Afrika Korps, was also formed to aid in a possible future German land invasion of India. By spring 1942, in light of Japanese victories in southeast Asia and changing German priorities, a German invasion of India became untenable, and Bose became keen to move to southeast Asia.[14] Adolf Hitler, during his only meeting with Bose in late May 1942, suggested the same, and offered to arrange for a submarine. During this time Bose also became a father; his wife, or companion, Emilie Schenkl, whom he had met in 1934, gave birth to a baby girl in November 1942. Identifying strongly with the Axis powers, and no longer apologetically, Bose boarded a German submarine in February 1943. In Madagascar, he was transferred to a Japanese submarine from which he disembarked in Japanese-held Sumatra in May 1943.

With Japanese support, Bose revamped the Indian National Army (INA), then composed of Indian soldiers of the British Indian army who had been captured in the Battle of Singapore. To these, after Bose's arrival, were added enlisting Indian civilians in Malaya and Singapore. The Japanese had come to support a number of puppet and provisional governments in the captured regions, such as those in Burma, the Philippines and Manchukuo. Before long the Provisional Government of Free India, presided by Bose, was formed in the Japanese-occupied Andaman and Nicobar Islands. Bose had great drive and charisma—creating popular Indian slogans, such as "Jai Hind,"—and the INA under Bose was a model of diversity by region, ethnicity, religion, and even gender. However, Bose was regarded by the Japanese as being militarily unskilled,and his military effort was short lived. In late 1944 and early 1945 the British Indian Army first halted and then devastatingly reversed the Japanese attack on India. Almost half the Japanese forces and fully half the participating INA contingent were killed. The INA was driven down the Malay Peninsula, and surrendered with the recapture of Singapore. Bose had earlier chosen not to surrender with his forces or with the Japanese, but rather to escape to Manchuria with a view to seeking a future in the Soviet Union which he believed to be turning anti-British. He died from third degree burns received when his plane crashed in Taiwan. Some Indians, however, did not believe that the crash had occurred, with many among them, especially in Bengal, believing that Bose would return to gain India's independence.

Indian National Congress, the main instrument of Indian nationalism, praised Bose's patriotism but distanced itself from his tactics and ideology, especially his collaboration with Fascism.[26] The British Raj, though never seriously threatened by the INA, charged 300 INA officers with treason in the INA trials, but eventually backtracked in the face both of popular sentiment and of its own end.

Subhas Bose, standing, extreme right, with his family of 14 siblings in Cuttack, ca. 1905. Jankinath Bose, Subhas Bose's father, was a prominent and wealthy lawyer in Cuttack.

Subhas Bose (standing, right) with friends in England, 1920

Bose as a student in England preparing for his Indian Civil Service entrance examination, ca. 1920. Bose ranked fourth among the six successful entrants.

Subhas Chandra Bose was born on 23 January 1897 (at 12.10 pm) in Cuttack, Orissa Division, Bengal Province, to Prabhavati Devi and Janakinath Bose, an advocate.[30] He was the ninth in a family of 14 children.

He was admitted to the Protestant European School, like his brothers and sisters, in January 1902. He continued his studies at this school which was run by the Baptist Mission up to 1909 and then shifted to the Ravenshaw Collegiate School. The day Subhas was admitted to this school, Beni Madhab Das, the headmaster, understood how brilliant and scintillating his genius was. After securing the second position in the matriculation examination in 1913, he got admitted to the Presidency College where he studied briefly.

Historical

Revolutionary conspiracy of WWI Rash Behari Har Dayal Ghadr Chatto Berlin Committee Bagha Jatin Barkatullah Kabul mission Provisional Government of India Imperial Japan Pan Asianism Greater East Asia more

Pritam Singh Swami Satyananda Puri Indian National Council I Fujiwara F Kikan K.P.K. Menon A.M. Sahay S.A. Ayer Rash Behari Bose Bidadary Resolutions Tokyo Conference H Iwakuro I Kikan Bangkok Conference Azad Hind Hikari Kikan Azad Hind Dal more

Subhas Chandra Bose

Indian National Congress C.R. Das Sarat Bose Purna Swaraj Bengal Volunteers Emilie Schenkl Forward Bloc Indian Legion U-180 Azad Hind Habib-ur-Rahman Death contro-

versy more

Battle of Malaya Mohan Singh Fall of Singapore Farrer Park First INA First Arakan offensive Hindustan Field Force Jiffs Azad Brigade Gandhi Brigade Nehru Brigade Subhas Brigade Bahadur Group Tokyo Boys Rani of Jhansi Regiment Andaman and Nicobar Islands M.Z. Kiani Lakshmi Sahgal A.D. Loganathan J.R. Bhonsle Janaki Davar Rasammah Bhupalan Shaukat Malik John Thivy Battles Burma theatre Ha-Go U-Go Battle of Imphal Battle of Kohima Battle of Irrawaddy Battle of Meiktila Surrender of Japan Controversies more

CSDIC Dhillon Sahgal Shah Nawaz Burhan-ud-Din INA Defence Committee Kailash Nath Katju Asaf Ali Tej Bahadur Sapru Bhulabhai Desai Jawaharlal Nehru Bombay mutiny more

Azad Hind Radio Battaglione Azad Hindoustan Special Bureau for India Azad Hind Decorations Selarang Barracks Incident Japanese occupation of Burma Burma Area Army Masakasu Kawabe India in World War II 14th Army William Slim Malaysian Indian Congress INA treasure Peter Fay Joyce Lebra Hugh Toye more

His nationalistic temperament came to light when he was expelled for assaulting Professor Oaten for the latter's anti-India comments. He later joined the Scottish Church College at the University of Calcutta and passed his B.A. in 1918 in philosophy.[32] Bose left India in 1919 for England with a promise to his father that he would appear in the Indian Civil Services (ICS) examination. He went to study in Fitzwilliam College, Cambridge and matriculated on 19 November 1919. He came fourth in the ICS examination and was selected, but he did not want to work under an alien government which would mean serving the British. As he stood on the verge of taking the plunge by resigning from the Indian Civil Service in 1921, he wrote to his elder brother Sarat Chandra Bose: "Only on the soil of sacrifice and suffering can we raise our national edifice."

He resigned from his civil service job on 23 April 1921 and returned to India.[34]

With Indian National Congress: 1921–1932

Bose at the inauguration of the India Society in Prague in 1926.

Bose at his residence in Calcutta in the late 1920s.

Subhas Bose at the INC Annual meeting, December 29, 1928.

Subhas Chandra Bose with Congress Volunteers, 1929

He started the newspaper Swaraj and took charge of publicity for the Bengal Provincial Congress Committee. His mentor was Chittaranjan Das who was a spokesman for aggressive nationalism in Bengal. In the year 1923, Bose was elected the President of All India Youth Congress and also the Secretary of Bengal State Congress. He was also editor of the newspaper "Forward", founded by Chittaranjan Das.[36] Bose worked as the CEO of the Calcutta Municipal Corporation for Das when the latter was elected mayor of Calcutta in 1924. In a roundup of nationalists in 1925, Bose was arrested and sent to prison in Mandalay, where he contracted tuberculosis.

In 1927, after being released from prison, Bose became general secretary of the Congress party and worked with Jawaharlal Nehru for independence. In late December 1928, Bose organised the Annual Meeting of the Indian National Congress in Calcutta.[39] His most memorable role was as General Officer Commanding (GOC) Congress Volunteer Corps.[39] Author Nirad Chaudhuri wrote about the meeting:

Bose organized a volunteer corps in uniform, its officers being even provided with steel-cut epaulettes ... his uniform was made by a firm of British tailors in Calcutta, Harman's. A telegram addressed to him as GOC was delivered to the British General in Fort William and was the subject of a good deal of malicious gossip in the (British Indian) press. Mahatma Gandhi being a sincere pacifist vowed to non-violence, did not like the strutting, clicking of boots, and saluting, and he afterwards described the Calcutta session of the Congress as a Bertram Mills circus, which caused a great deal of indignation among the Bengalis.[39]

A little later, Bose was again arrested and jailed for civil disobedience; this time he emerged to become Mayor of Calcutta in 1930. During the mid-1930s Bose travelled in Europe, visiting Indian students and European politicians, including Benito Mussolini. He observed party organisation and saw communism and fascism in action. In this period, he also researched and wrote the first part of his book The Indian Struggle, which covered the country's independence movement in the years 1920–1934. Although it was published in London in 1935, the British government banned the book in the colony out of fears that it would

encourage unrest. By 1938 Bose had become a leader of national stature and agreed to accept nomination as Congress President.

Illness, Austria, Emilie Schenkl 1933–1937

[icon]This section requires expansion. (April 2015)

Bose convalescing in Bad Gastein, Austria, after surgery in early 1933.

Bose with Emilie Schenkl, in Bad Gastein, Austria, 1936.

Bose in the Himalayan resort town of Dalhousie, India (June 1937).

Bose with (left to right) A. C. N. Nambiar (who was later to be Bose's second-in-command in Berlin, 1941–1945), Heidi Fulop-Miller, Emilie Schenkl, and Amiya Bose.

With Indian National Congress 1937–1940

Bose, the president-elect of the Indian National Congress, arrives in Calcutta on 24 January 1938 after a two-month vacation in Europe.

He stood for unqualified Swaraj (self-governance), including the use of force against the British. This meant a confrontation with Mohandas Gandhi, who in fact opposed Bose's presidency, splitting the Indian National Congress party. Bose attempted to maintain unity, but Gandhi advised Bose to form his own cabinet. The rift also divided Bose and Nehru. Bose appeared at the 1939 Congress meeting on a stretcher. He was elected president again over Gandhi's preferred candidate Pattabhi Sitaramayya. Muthuramalingam Thevar strongly supported Bose in the intra-Congress dispute. Thevar mobilised all south India votes for Bose. However, due to the manoeuvrings of the Gandhi-led clique in the Congress Working Committee, Bose found himself forced to resign from the Congress presidency.

Bose arriving at the 1939 annual session of the Congress, where he was re-elected, but later had to resign after disagreements with Gandhi and his supporters

On 22 June 1939 Bose organised the All India Forward Bloc a faction within the Indian National Congress, aimed at consolidating the political left, but its main strength was in his home state, Bengal. U Muthuramalingam Thevar, who was a staunch supporter of Bose from the beginning, joined the Forward Bloc. When Bose visited Madurai on 6 September, Thevar organised a massive rally as his reception When Subash Chandra Bose was heading to Madurai, on an invitation of Muthuramalinga Thevar to amass support for the Forward

Bloc, he passed through Madras and spent three days at Gandhi Peak.

Congress president Bose with Mohandas K. Gandhi at the Congress annual general meeting 1938.

His correspondence reveals that despite his clear dislike for British subjugation, he was deeply impressed by their methodical and systematic approach and their steadfastly disciplinarian outlook towards life. In England, he exchanged ideas on the future of India with British Labour Party leaders and political thinkers like Lord Halifax, George Lansbury, Clement Attlee, Arthur Greenwood, Harold Laski, J.B.S. Haldane, Ivor Jennings, G.D.H. Cole, Gilbert Murray and Sir Stafford Cripps. He came to believe that an independent India needed socialist authoritarianism, on the lines of Turkey's Kemal Atatürk, for at least two decades. Bose was refused permission by the British authorities to meet Atatürk at Ankara for political reasons. During his sojourn in England, only the Labour Party and Liberal politicians agreed to meet with Bose when he tried to schedule appointments. Conservative Party officials refused to meet Bose or show him courtesy because he was a politician coming from a colony. In the 1930s leading figures in the Conservative Party had opposed even Dominion status for India. It was during the Labour Party government of 1945–1951, with Attlee as the Prime Minister, that India gained independence.

Bose at the Lahore City Railway Station on 24 November 1938.

On the outbreak of war, Bose advocated a campaign of mass civil disobedience to protest against Viceroy Lord Linlithgow's decision to declare war on India's behalf without consulting the Congress leadership. Having failed to persuade Gandhi of the necessity of this, Bose organised mass protests in Calcutta calling for the 'Holwell Monument' commemorating the Black Hole of Calcutta, which then stood at the corner of Dalhousie Square, to be removed.[45] He was thrown in jail by the British, but was released following a seven-day hunger strike. Bose's house in Calcutta was kept under surveillance by the CID.

Bose's arrest and subsequent release set the scene for his escape to Germany, via Afghanistan and the Soviet Union. A few days before his escape, he sought solitude and, on this pretext, avoided meeting British guards and grew a beard. On the night of his escape. he dressed as a Pathan to avoid being identified. Bose escaped from under British surveillance

at his house in Calcutta on 19 January 1941, accompanied by his nephew Sisir K. Bose in a car that is now on display at his Calcutta home.

He journeyed to Peshawar with the help of the Abwehr, where he was met by Akbar Shah, Mohammed Shah and Bhagat Ram Talwar. Bose was taken to the home of Abad Khan, a trusted friend of Akbar Shah's. On 26 January 1941, Bose began his journey to reach Russia through British India's North West frontier with Afghanistan. For this reason, he enlisted the help of Mian Akbar Shah, then a Forward Bloc leader in the North-West Frontier Province. Shah had been out of India en route to the Soviet Union, and suggested a novel disguise for Bose to assume. Since Bose could not speak one word of Pashto, it would make him an easy target of Pashto speakers working for the British. For this reason, Shah suggested that Bose act deaf and dumb, and let his beard grow to mimic those of the tribesmen. Bose's guide Bhagat Ram Talwar, unknown to him, was a Sovict agent.

Supporters of the Aga Khan III helped him across the border into Afghanistan where he was met by an Abwehr unit posing as a party of road construction engineers from the Organization Todt who then aided his passage across Afghanistan via Kabul to the border with Soviet Russia. After assuming the guise of a Pashtun insurance agent ("Ziaudddin") to reach Afghanistan, Bose changed his guise and travelled to Moscow on the Italian passport of an Italian nobleman "Count Orlando Mazzotta". From Moscow, he reached Rome, and from there he travelled to Germany. Once in Russia the NKVD transported Bose to Moscow where he hoped that Russia's traditional enmity to British rule in India would result in support for his plans for a popular rising in India. However, Bose found the Soviets' response disappointing and was rapidly passed over to the German Ambassador in Moscow, Count von der Schulenburg. He had Bose flown on to Berlin in a special courier aircraft at the beginning of April where he was to receive a more favourable hearing from Joachim von Ribbentrop and the Foreign Ministry officials at the Wilhelmstrasse.

In Germany, he was attached to the Special Bureau for India under Adam von Trott zu Solz which was responsible for broadcasting on the German-sponsored Azad Hind Radio. He founded the Free India Center in Berlin, and created the Indian Legion (consisting of some 4500 soldiers) out of Indian prisoners of war who had previously fought for the British in

North Africa prior to their capture by Axis forces. The Indian Legion was attached to the Wehrmacht, and later transferred to the Waffen SS. Its members swore the following allegiance to Hitler and Bose: "I swear by God this holy oath that I will obey the leader of the German race and state, Adolf Hitler, as the commander of the German armed forces in the fight for India, whose leader is Subhas Chandra Bose". This oath clearly abrogates control of the Indian legion to the German armed forces whilst stating Bose's overall leadership of India. He was also, however, prepared to envisage an invasion of India via the USSR by Nazi troops, spearheaded by the Azad Hind Legion; many have questioned his judgment here, as it seems unlikely that the Germans could have been easily persuaded to leave after such an invasion, which might also have resulted in an Axis victory in the War.

In all, 3,000 Indian prisoners of war signed up for the Free India Legion. But instead of being delighted, Bose was worried. A left-wing admirer of Russia, he was devastated when Hitler's tanks rolled across the Soviet border. Matters were worsened by the fact that the now-retreating German army would be in no position to offer him help in driving the British from India. When he met Hitler in May 1942, his suspicions were confirmed, and he came to believe that the Nazi leader was more interested in using his men to win propaganda victories than military ones. So, in February 1943, Bose turned his back on his legionnaires and slipped secretly away aboard a submarine bound for Japan. This left the men he had recruited leaderless and demoralised in Germany.

Bose lived in Berlin from 1941 until 1943. During his earlier visit to Germany in 1934, he had met Emilie Schenkl, the daughter of an Austrian veterinarian whom he married in 1937. Their daughter is Anita Bose Pfaff. Bose's party, the Forward Bloc, has contested this fact. In 1943, after being disillusioned that Germany could be of any help in gaining India's independence, he left for Japan. He travelled with the German submarine U-180 around the Cape of Good Hope to the southeast of Madagascar, where he was transferred to the I-29 for the rest of the journey to Imperial Japan. This was the only civilian transfer between two submarines of two different navies in World War II.

In Japanese-occupied Asia 1943–1945

Main articles: Azad Hind Fauj and Arzi Hukumat-e-Azad Hind

The crew of Japanese submarine I-29 after the rendezvous with German submarine U-180 300 sm southeast of Madagascar; Bose is sitting in the front row (28 April 1943).

The Indian National Army (INA) was the brainchild of Japanese Major (and post-war Lieutenant-General) Iwaichi Fujiwara, head the Japanese intelligence unit Fujiwara Kikan and had its origins, first in the meetings between Fujiwara and the president of the Bangkok chapter of the Indian Independence League, Pritam Singh Dhillon, and then, through Pritam Singh's network, in the recruitment by Fujiwara of a captured British Indian army captain, Mohan Singh on the western Malayan peninsula in December 1941; Fujiwara's mission was "to raise an army which would fight alongside the Japanese army." After the initial proposal by Fujiwara the Indian National Army was formed as a result of discussion between Fujiwara and Mohan Singh in the second half of December 1941, and the name chosen jointly by them in the first week of January 1942. .

This was along the concept of—and with support of—what was then known as the Indian Independence League, headed by expatriate nationalist leader Rash Behari Bose. The first INA was however disbanded in December 1942 after disagreements between the Hikari Kikan and Mohan Singh, who came to believe that the Japanese High Command was using the INA as a mere pawn and propaganda tool. Mohan Singh was taken into custody and the troops returned to the prisoner-of-war camp. However, the idea of an independence army was revived with the arrival of Subhas Chandra Bose in the Far East in 1943. In July, at a meeting in Singapore, Rash Behari Bose handed over control of the organisation to Subhas Chandra Bose. Bose was able to reorganise the fledgling army and organise massive support among the expatriate Indian population in south-east Asia, who lent their support by both enlisting in the Indian National Army, as well as financially in response to Bose's calls for sacrifice for the independence cause. INA had a separate women's unit, the Rani of Jhansi Regiment (named after Rani Lakshmi Bai) headed by Capt. Lakshmi Swaminathan, which is seen as a first of its kind in Asia.

Even when faced with military reverses, Bose was able to maintain support for the Azad Hind movement. Spoken as a part of a motivational speech for the Indian National Army at a rally of Indians in Burma on 4 July 1944, Bose's most famous quote was "Give me blood,

and I shall give you freedom!" In this, he urged the people of India to join him in his fight against the British Raj. Spoken in Hindi, Bose's words are highly evocative. The troops of the INA were under the aegis of a provisional government, the Azad Hind Government, which came to produce its own currency, postage stamps, court and civil code, and was recognised by nine Axis states—Germany, Japan, Italy, the Independent State of Croatia, Wang Jingwei regime in Nanjing, China, a provisional government of Burma, Manchukuo and Japanese-controlled Philippines. Recent researches have shown that the USSR too had diplomatic contact with the "Provisional Government of Free India". Of those countries, five were authorities established under Axis occupation. This government participated in the so-called Greater East Asia Conference as an observer in November 1943.[citation needed] The INA's first commitment was in the Japanese thrust towards Eastern Indian frontiers of Manipur. INA's special forces, the Bahadur Group, were extensively involved in operations behind enemy lines both during the diversionary attacks in Arakan, as well as the Japanese thrust towards Imphal and Kohima, along with the Burmese National Army led by Ba Maw and Aung San.[citation needed]

Japanese also took possession of Andaman and Nicobar Islands in 1942 and a year later, the Provisional Government and the INA were established in the Andaman and Nicobar Islands with Lt Col. A.D. Loganathan appointed its Governor General. The islands were renamed Shaheed (Martyr) and Swaraj (Independence). However, the Japanese Navy remained in essential control of the island's administration. During Bose's only visit to the islands in early 1944, when he was carefully screened, by the Japanese authorities, from the local population who[clarification needed] at that time were torturing the leader of the Indian Independence League on the Islands, Dr. Diwan Singh, who later died of his injuries, in the Cellular Jail. The islanders made several attempts to alert Bose to their plight, but apparently without success. Enraged with the lack of administrative control, Lt. Col Loganathan later relinquished his authority and returned to the Government's headquarters in Rangoon.

On the Indian mainland, an Indian Tricolour, modelled after that of the Indian National Congress, was raised for the first time in the town in Moirang, in Manipur, in north-eastern

India. The towns of Kohima and Imphal were placed under siege by divisions of the Japanese, Burmese National Army and the Gandhi and Nehru Brigades of INA during the attempted invasion of India, also known as Operation U-GO. However, Commonwealth forces held both positions and then counter-attacked, in the process inflicting serious losses on the besieging forces, which were then forced to retreat back into Burma.

When Japanese funding for the army diminished, Bose was forced to raise taxes on the Indian populations of Malaysia and Singapore. When the Japanese were defeated at the battles of Kohima and Imphal, the Provisional Government's aim of establishing a base in mainland India was lost forever.[citation needed] The INA was forced to pull back, along with the retreating Japanese army, and fought in key battles against the British Indian Army in its Burma campaign, notable in Meiktilla, Mandalay, Pegu, Nyangyu and Mount Popa. However, with the fall of Rangoon, Bose's government ceased to be an effective political entity.[citation needed] A large proportion of the INA troops surrendered under Lt Col Loganathan. The remaining troops retreated with Bose towards Malaya or made for Thailand. Japan's surrender at the end of the war also led to the surrender of the remaining elements of the Indian National Army. The INA prisoners were then repatriated to India and some tried for treason.

A memorial to Subhas Chandra Bose in the compound of the Renkoji Temple, Tokyo.

In the consensus of scholarly opinion, Subhas Chandra Bose's death occurred from third-degree burns on 18 August 1945 after his overloaded Japanese plane crashed in Japanese-ruled Formosa (now Taiwan). However, many among his supporters, especially in Bengal, refused at the time, and have refused since, to believe either the fact or the circumstances of his death. Conspiracy theories appeared within hours of his death and have thereafter had a long shelf life, keeping alive various martial myths about Bose.

In Taihoku, at around 2:30 PM as the bomber with Bose on board was leaving the standard path taken by aircraft during take-off, the passengers inside heard a loud sound, similar to an engine backfiring. The mechanics on the tarmac saw something fall out of the plane. It was the portside engine, or a part of it, and the propeller. The plane swung wildly to the right and plummeted, crashing, breaking into two, and exploding into flames. Inside, the chief pilot,

copilot and Lieutenant-General Tsunamasa Shidei, the Vice Chief of Staff of the Japanese Kwantung Army, who was to have made the negotiations for Bose with the Soviet army in Manchuria, were instantly killed. Bose's assistant Habibur Rahman was stunned, passing out briefly, and Bose, although conscious and not fatally hurt, was soaked in gasoline. When Rahman came to, he and Bose attempted to leave by the rear door, but found it blocked by the luggage. They then decided to run through the flames and exit from the front. The ground staff, now approaching the plane, saw two people staggering towards them, one of whom had become a human torch. The human torch turned out to be Bose, whose gasoline-soaked clothes had instantly ignited. Rahman and a few others managed to smother the flames, but also noticed that Bose's face and head appeared badly burned. According to Joyce Chapman Lebra, "A truck which served as ambulance rushed Bose and the other passengers to the Nanmon Military Hospital south of Taihoku."The airport personnel called Dr. Taneyoshi Yoshimi, the surgeon-in-charge at the hospital at around 3 PM. Bose was conscious and mostly coherent when they reached the hospital, and for some time thereafter. Bose was naked, except for a blanket wrapped around him, and Dr. Yoshimi immediately saw evidence of third-degree burns on many parts of the body, especially on his chest, doubting very much that he would live. Dr. Yoshimi promptly began to treat Bose and was assisted by Dr. Tsuruta. According to historian Leonard A. Gordon, who interviewed all the hospital personnel later,

A disinfectant, Rivamol, was put over most of his body and then a white ointment was applied and he was bandaged over most of his body. Dr. Yoshimi gave Bose four injections of Vita Camphor and two of Digitamine for his weakened heart. These were given about every 30 minutes. Since his body had lost fluids quickly upon being burnt, he was also given Ringer solution intravenously. A third doctor, Dr. Ishii gave him a blood transfusion. An orderly, Kazuo Mitsui, an army private, was in the room and several nurses were also assisting. Bose still had a clear head which Dr. Yoshimi found remarkable for someone with such severe injuries.

Among the INA personnel, there was widespread disbelief, shock, and trauma. Most affected were the young Tamil Indians from Malaya and Singapore, both men and women,

who comprised the bulk of the civilians who had enlisted in the INA. The professional soldiers in the INA, most of whom were Punjabis, faced an uncertain future, with many fatalistically expecting reprisals from the British. In India the Indian National Congress's official line was succinctly expressed in a letter Mohandas Karamchand Gandhi wrote to Rajkumari Amrit Kaur. Said Gandhi, "Subhas Bose has died well. He was undoubtedly a patriot, though misguided."Many congressmen had not forgiven Bose for quarrelling with Gandhi and for collaborating with what they considered was Japanese fascism. The Indian soldiers in the British Indian army, some two and a half million of whom had fought during the Second World War, were conflicted about the INA. Some saw the INA as traitors and wanted them punished; others felt more sympathetic. The British Raj, though never seriously threatened by the INA, tried 300 INA officers for treason in the INA trials, but eventually backtracked.

Conspiracy theories began immediately after his death, believing that Bose had not actually died but lived on instead. These theorists also demanded also the declassification of various top secret files in the Indian government about his death called the "Netaji files". Subsequent Indian government have declined declassification, arguing that it would cause "law and order problems" in India, along with a potential "spoiling" Indian relations with other nations. In December 2014, the government of Narendra Modi continued to decline declassification, dropping the law and order rationale, but due to concerns over Indian international relations.

In April 2015, various declassified files from the Indian government revealed that Bose's family members were "intensive[ly] surveill[ed]" by the authorities from 1948 until 1968. Bose's family members was incensed at the revelations, arguing that his family was tried more akin to that of a terrorist than the freedom fighter that Bose was and demanded the complete declassification of the Netaji files.As of April 2015, five files remain so secret that even their names have not been disclosed under the Right to Information Act.

Bose advocated complete unconditional independence for India, whereas the All-India Congress Committee wanted it in phases, through Dominion status. Finally at the historic Lahore Congress convention, the Congress adopted Purna Swaraj (complete independence)

as its motto. Gandhi was given rousing receptions wherever he went after Gandhi-Irwin pact. Subhas Chandra Bose, travelling with Gandhi in these endeavours, later wrote that the great enthusiasm he saw among the people enthused him tremendously and that he doubted if any other leader anywhere in the world received such a reception as Gandhi did during these travels across the country. He was imprisoned and expelled from India. Defying the ban, he came back to India and was imprisoned again.

Bose was elected president of the Indian National Congress for two consecutive terms, but had to resign from the post following ideological conflicts with Mohandas K. Gandhi and after openly attacking the Congress' foreign and internal policies. Bose believed that Gandhi's tactics of non-violence would never be sufficient to secure India's independence, and advocated violent resistance. He established a separate political party, the All India Forward Bloc and continued to call for the full and immediate independence of India from British rule. He was imprisoned by the British authorities eleven times.

His stance did not change with the outbreak of the Second World War, which he saw as an opportunity to take advantage of British weakness. At the outset of the war, he left India, travelling to the Soviet Union, Nazi Germany and Imperial Japan, seeking an alliance with each of them to attack the British government in India. With Imperial Japanese assistance, he re-organised and later led the Azad Hind Fauj or Indian National Army (INA), formed with Indian prisoners-of-war and plantation workers from British Malaya, Singapore, and other parts of Southeast Asia, against British forces. With Japanese monetary, political, diplomatic and military assistance, he formed the Azad Hind Government in exile, and regrouped and led the Indian National Army in failed military campaigns against the allies at Imphal and in Burma.

His political views and the alliances he made with Nazi and other militarist regimes at war with Britain have been the cause of arguments among historians and politicians, with some accusing him of fascist sympathies, while others in India have been more sympathetic towards the realpolitik that guided his social and political choices.

Subhas Chandra Bose believed that the Bhagavad Gita was a great source of inspiration for the struggle against the British. Swami Vivekananda's teachings on universalism, his na-

tionalist thoughts and his emphasis on social service and reform had all inspired Subhas Chandra Bose from his very young days. The fresh interpretation of the India's ancient scriptures had appealed immensely to him. Many scholars believe that Hindu spirituality formed the essential part of his political and social thought throughout his adult life, although there was no sense of bigotry or orthodoxy in it. Subhas who called himself a socialist, believed that socialism in India owed its origins to Swami Vivekananda. As historian Leonard Gordon explains "Inner religious explorations continued to be a part of his adult life. This set him apart from the slowly growing number of atheistic socialists and communists who dotted the Indian landscape.".

Bose's correspondence (prior to 1939) reflects his deep disapproval of the racist practices of, and annulment of democratic institutions in Nazi Germany: "Today I regret that I have to return to India with the conviction that the new nationalism of Germany is not only narrow and selfish but arrogant". However, he expressed admiration for the authoritarian methods (though not the racial ideologies) which he saw in Italy and Germany during the 1930s, and thought they could be used in building an independent India.

Bose had clearly expressed his belief that democracy was the best option for India. The pro-Bose thinkers believe that his authoritarian control of the Azad Hind was based on political pragmatism and a post-colonial doctrine rather than any anti-democratic belief. However, during the war (and possibly as early as the 1930s), Bose seems to have decided that no democratic system could be adequate to overcome India's poverty and social inequalities, and he wrote that a socialist state similar to that of Soviet Russia (which he had also seen and admired) would be needed for the process of national re-building. Accordingly, some suggest that Bose's alliance with the Axis during the war was based on more than just pragmatism, and that Bose was a militant nationalist, though not a Nazi nor a Fascist, for he supported empowerment of women, secularism and other liberal ideas; alternatively, others consider he might have been using populist methods of mobilisation common to many post-colonial leaders.

His most famous quote/slogan was "Give me blood and I will give you freedom". Another famous quote was Dilli Chalo ("On to Delhi)!" This was the call he used to give the INA

armies to motivate them. Jai Hind, or, "Glory to India!" was another slogan used by him and later adopted by the Government of India and the Indian Armed Forces. Another slogan coined by him was "Ittefaq, Etemad, Qurbani" (Urdu for "Unity, Agreement, Sacrifice"). INA also used the slogan Inquilab Zindabad, which was coined by Maulana Hasrat Mohani.

Refrence :

Chakraborty, Phani Bhusan; Bha??acarya, Brajendrakumara (1989), News behind newspapers: a study of the Indian press, Minerva Associates (Publications), ISBN 978-81-85195-16-2, retrieved 16 July 2012

Chattopadhyay, Subhas Chandra (1989), Subhas Chandra Bose: man, mission, and means, Minerva Associates, retrieved 17 July 2012

Chaudhuri, Nirad C. (1987), Thy Hand, Great Anarch!: India, 1921–1952, Chatto & Windus

Chauhan, Abnish Singh (2006), Speeches of Swami Vivekananda and Subhash Chandra Bose: A Comparative Study, Prakash Book Depot, ISBN 9788179771495

Copland, Ian (2001), India, 1885–1947: the unmaking of an empire, Longman, ISBN 978-0-582-38173-5, retrieved 22 September 2013

Durga Das Pvt. Ltd (1985), Eminent Indians who was who, 1900–1980, also annual diary of events, Durga Das Pvt. Ltd., retrieved 13 June 2012

The Editors of the Encyclopaedia Britannica (2016), "Suhas Chandra Bose", Encyclopaedia Britannica Online, retrieved 13 February 2016

Fay, Peter Ward (1995), The Forgotten Army: India's Armed Struggle for Independence 1942–1945, University of Michigan Press, ISBN 978-0-472-08342-8, retrieved 10 November 2013

Getz, Marshall J. (2002), Subhas Chandra Bose: A Biography, McFarland, ISBN 978-0-7864-1265-5, retrieved 13 June 2012

Gordon, Leonard A. (2006), "Legend and Legacy: Subhas Chandra Bose", India International Centre Quarterly, 33 (1): 103–12

Gordon, Leonard A. (1990), Brothers against the Raj: a biography of Indian nationalists Sarat and Subhas Chandra Bose, Columbia University Press, ISBN 978-0-231-07442-1,

retrieved 16 November 2013

The Guardian (9 May 2005), "Biopic of Indian revolutionary sparks protest", The Guardian, retrieved 2 May 2016

Hauner, M (1981), India in Axis Strategy: Germany, Japan, and Indian Nationalists in the Second World War, Stuttgart: Klett-Cotta

Hayes, Romain (2011), Subhas Chandra Bose in Nazi Germany: Politics, Intelligence and Propaganda 1941–1943, Oxford University Press, ISBN 978-0-19-932739-3, retrieved 22 September 2013

The Hindu (24 August 2007), "Shinzo Abe visits Netaji Bhavan, sees notion of a 'Broader Asia'", The Hindu, retrieved 16 October 2009

James, L (1997), Raj, the Making and Unmaking of British India, London: Abacus

Jesudasen, Yasmine (2006), Voices of Freedom Movement, Sura Books, ISBN 978-81-7478-555-8, retrieved 6 February 2016

Josh, Bhagwan (1992), Struggle for hegemony in India, 1920–47: the colonial state, the left, and the national movement. 1934–41, Sage, ISBN 978-81-7036-295-1, retrieved 17 July 2012

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

ORGANIC COMPOUNDS AN ITS STRUCTURAL COMBINATIONS

Ashok Soni
Guest Faculty Dep. of Chemistry,
Govt. Digree College Timerni

Organic compound

An organic compound is any member of a large class of gaseous, liquid, or solid chemical compounds whose molecules contain carbon. For historical reasons discussed below, a few types of carbon-containing compounds, such as carbides, carbonates, simple oxides of carbon (such as CO and CO2), and cyanides are considered inorganic. The distinction between organic and inorganic carbon compounds, while "useful in organizing the vast subject of chemistry... is somewhat arbitrary".

Organic chemistry is the science concerned with all aspects of organic compounds. Organic synthesis is the methodology of their preparation.

Natural compounds

Natural compounds refer to those that are produced by plants or animals. Many of these are still extracted from natural sources because they would be more expensive to produce artificially. Examples include most sugars, some alkaloids and terpenoids, certain nutrients such as vitamin B12, and, in general, those natural products with large or stereoisometrically complicated molecules present in reasonable concentrations in living organisms.

Further compounds of prime importance in biochemistry are antigens, carbohydrates, enzymes, hormones, lipids and fatty acids, neurotransmitters, nucleic acids, proteins, peptides

and amino acids, lectins, vitamins, and fats and oils.

Synthetic compounds

Compounds that are prepared by reaction of other compounds are known as "synthetic". They may be either compounds that already are found in plants or animals or those that do not occur naturally.

Most polymers (a category that includes all plastics and rubbers), are organic synthetic or semi-synthetic compounds.

Biotechnology

Several compounds are industrially manufactured utilizing the biochemistry of organisms such as bacteria and yeast. Two examples are ethanol and insulin. Regularly, the DNA of the organism is altered to express desired compounds that are often not ordinarily produced by that organism. Sometimes the biotechnologically engineered compounds were never present in nature in the first place.

Types and Groups

Carbon is a very special element because it can form four bonds. This enables carbon to form complex, flexible molecules. Because of these properties, carbon is the most important element for life as we know it. The four main groups of molecules of life include proteins carbohydrates, lipids, and nucleic acids. These are the most complex types of organic compounds.

Simpler types of carbon compounds, such as methane, are usually the chemical byproducts of life. Many of this group of organic compounds react strongly with oxygen, burning rapidly and at high temperature. When you put gas in your car, you're filling the tank with highly refined goop left over from living organisms that died hundreds of millions of years ago. Gasoline is a mixture of various organic molecules. The kinds of molecules found in gasoline contain only hydrogen and carbon. These types of organic compounds are called hydrocarbons.

What do you do when the power goes out? You might hunt in the dark for a candle. When you light a candle, you're burning another type of hydrocarbon: candle wax. Like gasoline, candle wax is a mixture of hydrocarbons. Chemists recognize many different groups of

hydrocarbons. The three main groups are based on whether the carbon bonds are single, double or triple bonds.

Alkanes, Alkenes, and Alkynes

Alkanes have single covalent bonds between the carbon atoms. (In a covalent bond, electrons are shared between bonding atoms.) Hydrogen atoms also bond with the carbon atoms, so the general molecular formula of alkanes is CnH2n+2. In this formula, n represents the number of carbon atoms. The simplest alkane and, in fact, the simplest organic compound is methane. Methane has one carbon atom so, according to the formula, the number of hydrogen atoms must be (2 x 1 + 2 = 4). So methane's chemical formula is CH4. If you have natural gas for your heating or gas cooker, you're using methane.

Like alkanes, alkenes are also hydrocarbons, but their carbon atoms are joined by at least one carbon double bond. The general formula is CnH2n. Ethylene is the simplest alkene. Its molecular formula is C2H4. Ripe fruit gives off ethylene, that fruity odor you can smell and which hastens the ripening of fruit nearby. Food companies use ethylene to artificially ripen fruits.

Compounds

Pinch yourself. You're pinching a multitude of complex organic compounds. Your skin is made of proteins. Your cells are powered by carbohydrates, which also help cells recognize each other. Fats, properly called lipids, make up your cell membranes and also store energy in storage tissues (a bit too much for some of us!). And none of this would be possible without nucleic acids, which encode the molecules and processes needed for cells to operate and reproduce.

Most organic compounds involved in living systems are usually bonded to both hydrogen and oxygen. For example, simple carbohydrates are molecules made only of carbon, hydrogen and oxygen. These compounds include table sugar, which chemists call sucrose. Sucrose has the molecular formula C12H22O11. Like all complex organic molecules, sucrose is a polymer. (Polymers are comprised of repeated structural units.) The basis of most organic polymers is a carbon chain, sometimes connected as a circle. For example, sucrose is a polymer of glucose, which has a ring of carbon atoms with OH groups attached.

Lipids are also polymers. Remember when you last went for a health checkup? Most likely, you had your cholesterol checked. Cholesterol is a lipid that, despite what you might think from your checkup results, is essential to life. It's one of the main components of animal cell membranes, enabling the cell wall to be flexible and change shape - unlike plant and bacteria cells. Cholesterol has a complex structure of four linked hydrocarbon rings and a hydrocarbon 'tail'. Its molecular formula is C27H46O.

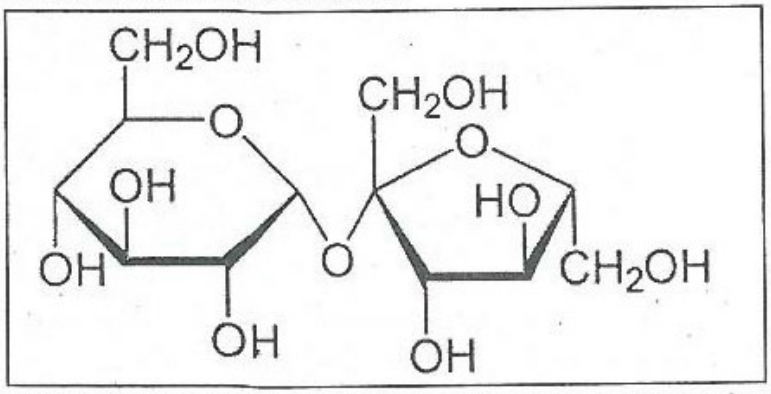

Structural formula of sucrose. Note the two glucose rings that are the basis for the sucrose molecule.

Lipids are also polymers. Remember when you last went for a health checkup? Most likely, you had your cholesterol checked. Cholesterol is a lipid that, despite what you might think from your checkup results, is essential to life. It's one of the main components of animal cell membranes, enabling the cell wall to be flexible and change shape - unlike plant and bacteria cells. Cholesterol has a complex structure of four linked hydrocarbon rings and a hydrocarbon 'tail'. Its molecular formula is C27H46O.

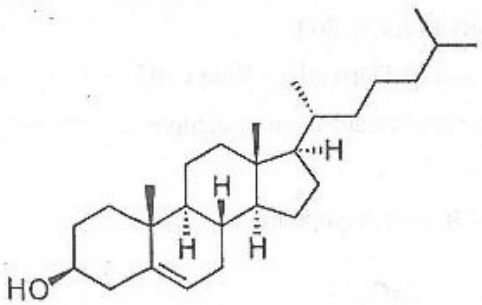

Structural formula of cholesterol. Note the four hydrocarbon rings.

You probably already recognize the two main types of lipids: saturated and unsaturated. Your doctor might suggest you have a diet high in unsaturated fats, because these are healthier. Most animal fats are saturated, meaning their carbon chains have no double bonds. These fats, and some plant fats, tend to increase blood cholesterol, leading to health problems. Some types of saturated fats, like butter and lard, are solid at room temperature. On the other hand, unsaturated fats, which come from plants, are liquid at room temperature; think of corn oil or peanut oil. There are exceptions, though. Some tropical plant fats, such as coconut oil or palm oil, are saturated.

See how these organic molecules are increasingly complex and large? Proteins are even more complex! Proteins are polymers of amino acids. Even these building blocks are quite complicated. Amino acids contain nitrogen as well as carbon, oxygen and hydrogen. The presence of nitrogen gives the 20 amino acids a wide range of chemical properties. Some are acidic; some are neutral. Some are basic. Some are polar, so they have a charge; others are non-polar.

REFERENCES :

" From the definition of "organic compounds" are also excluded automatically the allotropes of carbon such as diamond and graphite, because they are formed by atoms of the same element, so they are simple substances, not compounds.

" Spencer L. Seager, Michael R. Slabaugh. Chemistry for Today: general, organic, and biochemistry. Thomson Brooks/Cole, 2004, p. 342. ISBN 0-534-39969-X

" Henry Marshall Leicester; Herbert S. Klickstein (1951). A Source Book in Chemistry, 1400-1900. Harvard University Press. p. 309.

" "IUPAC Blue Book, Urea and Its Derivatives Rule C-971". Retrieved 2009-11-22.

http://study.com/academy/lesson/what-are-organic-compounds-in-chemistry-types-groups-examples.html

https://en.wikipedia.org/wiki/Organic_compound

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

DISCOVERY OF AN ATOM AND CONCEPTS OF ATOPIC STRUCTURES AND BONDING

Ashok Soni
Guest Faculty Dep. of Chemistry,
Govt. Digree College Timerni

Chemistry is a branch of physical science that studies the composition, structure, properties and change of matter. Chemistry includes topics such as the properties of individual atoms, how atoms form chemical bonds to create chemical compounds, the interactions of substances through intermolecular forces that give matter its general properties, and the interactions between substances through chemical reactions to form different substances.

Chemistry is sometimes called the central science because it bridges other natural sciences, including physics, geology and biology. For the differences between chemistry and physics see comparison of chemistry and physics.

Scholars disagree about the etymology of the word chemistry. The history of chemistry can be traced to alchemy, which had been practiced for several millennia in various parts of the world.

Atom

The atom is the basic unit of chemistry. It consists of a dense core called the atomic nucleus surrounded by a space called the electron cloud. The nucleus is made up of positively charged protons and uncharged neutrons (together called nucleons), while the electron cloud consists of negatively charged electrons which orbit the nucleus. In a neutral atom, the nega-

tively charged electrons balance out the positive charge of the protons. The nucleus is dense; the mass of a nucleon is 1,836 times that of an electron, yet the radius of an atom is about 10,000 times that of its nucleus.

The atom is also the smallest entity that can be envisaged to retain the chemical properties of the element, such as electronegativity, ionization potential, preferred oxidation state(s), co-ordination number, and preferred types of bonds to form (e.g., metallic, ionic, covalent).

Brownian motion

In 1827, botanist Robert Brown used a microscope to look at dust grains floating in water and discovered that they moved about erratically, a phenomenon that became known as "Brownian motion". This was thought to be caused by water molecules knocking the grains about. In 1905 Albert Einstein proved the reality of these molecules and their motions by producing the first Statistical physics analysis of Brownian motion. French physicist Jean Perrin used Einstein's work to experimentally determine the mass and dimensions of atoms, thereby conclusively verifying Dalton's atomic theory.

Discovery of the electron

The Geiger-Marsden experiment

The physicist J. J. Thomson measured the mass of cathode rays, showing they were made of particles, but were around 1800 times lighter than the lightest atom, hydrogen. Therefore, they were not atoms, but a new particle, the first subatomic particle to be discovered, which he originally called "corpuscle" but was later named electron, after particles postulated by George Johnstone Stoney in 1874. He also showed they were identical to particles given off by photoelectric and radioactive materials.[10] It was quickly recognized that they are the particles that carry electric currents in metal wires, and carry the negative electric charge within atoms. Thomson was given the 1906 Nobel Prize in Physics for this work. Thus he overturned the belief that atoms are the indivisible, ultimate particles of matter.[11] Thomson also incorrectly postulated that the low mass, negatively charged electrons were distributed throughout the atom in a uniform sea of positive charge. This became known as the plum pudding model.

Discovery of the nucleus

In 1909, Hans Geiger and Ernest Marsden, under the direction of Ernest Rutherford, bombarded a metal foil with alpha particles to observe how they scattered. They expected all the alpha particles to pass straight through with little deflection, because Thomson's model said that the charges in the atom are so diffuse that their electric fields could not affect the alpha particles much. However, Geiger and Marsden spotted alpha particles being deflected by angles greater than 90°, which was supposed to be impossible according to Thomson's model. To explain this, Rutherford proposed that the positive charge of the atom is concentrated in a tiny nucleus at the center of the atom.

Discovery of isotopes

While experimenting with the products of radioactive decay, in 1913 radiochemist Frederick Soddy discovered that there appeared to be more than one type of atom at each position on the periodic table. The term isotope was coined by Margaret Todd as a suitable name for different atoms that belong to the same element. J.J. Thomson created a technique for separating atom types through his work on ionized gases, which subsequently led to the discovery of stable isotopes.

Bohr model

The Bohr model of the atom, with an electron making instantaneous "quantum leaps" from one orbit to another. This model is obsolete.

In 1913 the physicist Niels Bohr proposed a model in which the electrons of an atom were assumed to orbit the nucleus but could only do so in a finite set of orbits, and could jump between these orbits only in discrete changes of energy corresponding to absorption or radiation of a photon. This quantization was used to explain why the electrons orbits are stable (given that normally, charges in acceleration, including circular motion, lose kinetic energy which is emitted as electromagnetic radiation, see synchrotron radiation) and why elements absorb and emit electromagnetic radiation in discrete spectra.

Later in the same year Henry Moseley provided additional experimental evidence in favor of Niels Bohr's theory. These results refined Ernest Rutherford's and Antonius Van den Broek's model, which proposed that the atom contains in its nucleus a number of positive nuclear charges that is equal to its (atomic) number in the periodic table. Until these experi-

ments, atomic number was not known to be a physical and experimental quantity. That it is equal to the atomic nuclear charge remains the accepted atomic model today.

Chemical bonding explained

Chemical bonds between atoms were now explained, by Gilbert Newton Lewis in 1916, as the interactions between their constituent electrons. As the chemical properties of the elements were known to largely repeat themselves according to the periodic law, in 1919 the American chemist Irving Langmuir suggested that this could be explained if the electrons in an atom were connected or clustered in some manner. Groups of electrons were thought to occupy a set of electron shells about the nucleus.

Further developments in quantum physics

The Stern-Gerlach experiment of 1922 provided further evidence of the quantum nature of the atom. When a beam of silver atoms was passed through a specially shaped magnetic field, the beam was split based on the direction of an atom's angular momentum, or spin. As this direction is random, the beam could be expected to spread into a line. Instead, the beam was split into two parts, depending on whether the atomic spin was oriented up or down.

In 1924, Louis de Broglie proposed that all particles behave to an extent like waves. In 1926, Erwin Schrödinger used this idea to develop a mathematical model of the atom that described the electrons as three-dimensional waveforms rather than point particles. A consequence of using waveforms to describe particles is that it is mathematically impossible to obtain precise values for both the position and momentum of a particle at a given point in time; this became known as the uncertainty principle, formulated by Werner Heisenberg in 1926. In this concept, for a given accuracy in measuring a position one could only obtain a range of probable values for momentum, and vice versa. This model was able to explain observations of atomic behavior that previous models could not, such as certain structural and spectral patterns of atoms larger than hydrogen. Thus, the planetary model of the atom was discarded in favor of one that described atomic orbital zones around the nucleus where a given electron is most likely to be observed.

Discovery of the neutron

The development of the mass spectrometer allowed the mass of atoms to be measured with

increased accuracy. The device uses a magnet to bend the trajectory of a beam of ions, and the amount of deflection is determined by the ratio of an atom's mass to its charge. The chemist Francis William Aston used this instrument to show that isotopes had different masses. The atomic mass of these isotopes varied by integer amounts, called the whole number rule. The explanation for these different isotopes awaited the discovery of the neutron, an uncharged particle with a mass similar to the proton, by the physicist James Chadwick in 1932. Isotopes were then explained as elements with the same number of protons, but different numbers of neutrons within the nucleus.

Atomic Structure

1. The text provides a historical perspective of how the internal structure of the atom was discovered. It is certainly one of the most important scientific discoveries of this century, and I recommend that you read through it. However, we will begin our discussion of the atom from the modern day perspective.

2. All atoms are made from three subatomic particles

The important points to keep in mind are as follows:

" Protons and neutrons have almost the same mass, while the electron is approximately 2000 times lighter.

" Protons and electrons carry charges of equal magnitude, but opposite charge. Neutrons carry no charge (they are neutral).

It was once thought that protons, neutrons and electrons were spread out in a rather uniform fashion to form the atom (see J.J. Thompson's plum pudding model of the atom on page 42), but now we know the actual structure of the atom to be quite different.

The negatively charged electron is attracted to the positively charged nucleus by a Coulombic attraction.

The protons and neutrons are held together in the nucleus by the strong nuclear force.

REFERENCES

" "Atom". Compendium of Chemical Terminology (IUPAC Gold Book) (2nd ed.). IUPAC. Retrieved 2015-04-25.

" Ghosh, D. C.; Biswas, R. (2002). "Theoretical calculation of Absolute Radii of Atoms

and Ions. Part 1. The Atomic Radii". Int. J. Mol. Sci. 3: 87-113. doi:10.3390/i3020087.

" Leigh, G. J., ed. (1990). International Union of Pure and Applied Chemistry, Commission on the Nomenclature of Inorganic Chemistry, Nomenclature of Organic Chemistry - Recommendations 1990. Oxford: Blackwell Scientific Publications. p. 35. ISBN 0-08-022369-9. An atom is the smallest unit quantity of an element that is capable of existence whether alone or in chemical combination with other atoms of the same or other elements.

" Andrew G. van Melsen (1952). From Atomos to Atom. Mineola, N.Y.: Dover Publications. ISBN 0-486-49584-1.

" Dalton, John. "On the Absorption of Gases by Water and Other Liquids", in Memoirs of the Literary and Philosophical Society of Manchester. 1803. Retrieved on August 29, 2007.

https://chemistry.osu.edu/~woodward/ch121/ch2_atoms.htm

http://www.chemguide.co.uk/atoms/properties/gcse.html

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

ISLAMIC STUDIES SCAN AT JAMIA MILLIA ISLAMIA (PAST AND PRESENT)

Javed Akhatar
Guest Faculty Dep. of Islamic Study
Jamia Millia Islamia University New Delhi

INTRODUCTION

THE RESEARCH PAPER scans a short history of Islamic Studies in Jamia Millia Islamia i.e. it's past and present. Muslim education in India, right from the first Muslim ruler to the last Mughal king, has undergone many changes and modifications. Further, many crises were faced by Muslims during the British rule. The partition of the country again caused a serious backlash to the Muslim education in India. Many educational institutions came up to fill these gaps; one of them was Jamia Millia Islamia. It was an outcome of Indian freedom struggle. The Jamia was in the words of Pundit Jawaharlal Nehru : "A lusty child of the non-cooperation movement". Since inception, Islamiyat (Theology) has been the integral unit of Jamia Millia Islamia. In Najeeb Jung's words if Jamia is a body then Islamic studies has been the heart of it.

THE DEPARTMENT OF ISLAMIC STUDIES

In India, there are a very few universities which have Department of Islamic Studies. This problem is aggravated further by the fact that those universities that do have such departments are called by different names though, that teach broadly the same subject. So, University of Lucknow has a department of Arab Culture, in Calcutta University it is called the Department of Islamic Culture, while in Aligarh Muslim University, Jamia Millia Islamia,

Jamia Hamdard, University of Kerala, University of Kashmir, and Osmania University it is called the Department of Islamic Studies. Then, in Aligarh they also have the two Departments of Shia and Sunni Theology. Therefore there should be some more clarity in this issue of nomenclature in India. The research paper brings your notice here that, Jamia's founders desired to build an institution which will be national in its outlook while being Islamic in its tradition. Therefore, they made Islamiyat the compulsory and integral part of Jamia Millia Islamia's curriculum since the inception i.e. 29th October, 1920. The past of Jamia tells us that the founders of Jamia strongly believed that education was to be free from the British control and the curriculum was to be based on religious, moral, and cultural traditions. Here in this sense we see the part of Maulana Mahmud Hasan's famous speech: '...Whereas the contemporary education is imparted with zeal in Muslim educational institutions, students of these educational institutions are left to remain ignorant about the principles of their own religion. If they forget the Islamic duties and ignore the peoples' feeling; if the feeling of love, affection and dignity for their own people and nation edges to the lowest ebb, we should understand that these educational institutions of Muslims have become the tools to weaken the Muslim community. And this is why it has been felt that such a Muslim University should be established that would remain totally free from the government's assistance as well as from all sorts of its influence. And the functioning style of this type of Muslim institutions should be based on Islamic characteristics and it should also represent the community feelings'

Muhammad Ali Jauhar, in his articles published in Hamdard on 3 October, 1925 and 8, 9, 16, and 18 January, 1926, explained:

'Jamia Millia Islamia is first a Jamia, i.e., a university. And then it is a Millia, a group of followers of a faith. In other words, it is a teaching institution where both religious and other, i.e., worldly, education is imparted. It does not restrict itself to teaching only religious matters, as is the case with Deoband and Madarsa Nizamia. It also does not limit its education to that of the current English language schools. And then this Jamia is Jamia-i Islamia, so that it teaches Islam. It must be noted, however, that its doors are open to followers of all religion. The curriculum of the Jamia includes the learning of the Arabic language, so that

the students can understand both the Qur'an and Hadith...'

A further elaboration of Jamia's distinct role came from Dr. Zakir Husain:

'The biggest objective of Jamia Millia is to prepare a roadmap for the future lives of Indian Muslims With the religion of Islam at its core, and to fill the map with the colour of the civilization of Indian in such a way that it merges with the colours of the life of the common man. The basis of this objective is the belief that a true education of their religion will imbibe in Indian Muslims a love for their country and a passion for national integration, and prepare them to take active part in seeking independence and progress for India. An independent India will join hands with other countries in seeking peace and international cooperation...'

Jamia's objective in Halide Edib's words:

'The institution has two purposes; first to train the Muslim youth with definite ideas of their rights and duties as Indian citizens, and second to co-ordinate Islamic thought and behaviour with Hindus.'

Nevertheless, it clinched the point that in those days the concept of a government free education institution along with religious education that is the launching of Islamiyat as a subject was extremely popular. Hakim Ajmal Khan also reiterated in 1st convocational Address 'The object of Jamia is nurturing Islamiyat along with patriotism.' Islamiyat in Jamia Millia Islamia has been one of the subjects which were introduced at the undergraduate level at the earliest stage. However, its teaching at Post-graduate level started in 1976 as one of the three disciplines of the erstwhile Department of Islamic & Arab Iranian Studies. The Department of Islamic Studies as an independent and integral unit was established only in 1988. Initially, Islamiyat was taught in Jamia but the syllabus was not detailed and comprehensive. Different themes had been continued including gradually into the syllabus and progressively it took the shape of Islamic Studies. It is very interesting to know that how Islamiyat slowly evolved as the full fledged unit in Jamia i.e. the department of Islamic Studies today. For the Islamiyat teachers, the early years were marked by struggle and the audacity to do things for the first time. Primarily, the teachers conducted informal lectures until formal classroom teaching began. Some teachers just not taught more than one subject but took additional responsibilities. They taught Islamiyat, religious sciences, Islamic his-

tory, etc interspersed with the large dollops of Mir Taqi Mir, Mirza Sauda and Allama Iqbal, till a syllabus committee produced a formal curriculum. In the absence of regular staff, senior boys taught junior students. This pattern of imparting education sparked like magic and strong bonds were forged between teachers and students alike. Those were the days when religion and nationalism was combined to produce a strong tie. Maulana Mohammad Ali Jauhar was the very first teacher of Islamiyat, and he stressed the teaching of Qur'an, Islamic history and the training to serve the nation. He explained that Jamia's basic objective was to groom students into God-fearing Muslims and country-loving Indians. Maulana Hamiduddin Faraahi too played a very important role to increase interest and curiosity among students for Qur'an. He gave 7 incredible lectures on Surah-Fatiha. The students took great interest and made notes of his lectures, and the students kept those notes as they had found precious pearls. A session on Islamic history or a long interpretation of the Surah-Fatiha created the necessary intellectual climate. Every teacher was receptive to new ideas and new situations, knowing full well that their success depended on evolving a system of education that would be progressive and more effective in developing the personality of their students. For this reason the same year i.e. 1920, a separate committee had been formed to prepare the syllabus for Islamiat. The members of that council were: Maulana Muhammad Ali, Maulana Azad Subhani, Maulana Salamtullah, Maulana Abul Kalam Azad, Maulana Sadruddin, Maulana Abdul Qayum, Maulana Dawud Gaznawi, Maulana Abdul Majid, and Maulana Abdul Qadir. The decisions that had been taken by the members of council in the meeting were:

i. The institution must be completely free from government's interference.
ii. The curriculum must strike the balance between religion and the world.
iii. The education must be the combination of old and new pattern.
iv. Jamia must take part in freedom struggle.
v. The students who are participating in Non Cooperation could take private exams.
vi. There should be an arrangement to open a new school under Jamia Millia Islamia.
vii. Schools, colleges and Islamic seminaries are permitted to be affiliated with Jamia.

The committee members started drawing up the syllabus with much care. They took per-

sonal interest in making the course to create both a good Muslim and a good citizen of India. In 1921 the first comprehensive syllabus was created. The major points of the syllabus were:

i. Students of all levels must read and understand Qur'an so that they would become aware of its true teachings.

ii. Books and materials were prepared in Urdu language in such a manner that must be served for learning Urdu and providing knowledge at the same time.

iii. Islamiyat was made compulsory for Muslim-students while Moral science was made obligatory for Hindu-students.

iv. Learning Arabic was made compulsory along with Islamiyat, so that students could begin to read Islamic texts in its original form.

v. The students who were not interested in Urdu they could adopt Hindi as their first language.

vi. Learning Urdu was mandatory for those students, who adopted Hindi as their first language.

vii. Arabic and English both were made essential right from the 4th class.

viii. Sanskrit was made obtainable as a replacement of Arabic for Hindu-students.

By 1922, Jamia's Islamiyat programme began taking its shape. During those days, "Marfatul Arabia", "Al-Qarrat-al Rashidah", Kamil Gilani's "Halyat-al Affal" and "Qasas Fakahiyah-al Affal" were the Arabic grammar books taught in the course. Aslam Jairajpuri's "Tarikh-ul Ummat" was also included in the syllabus, and 100 ahadith (traditions of the Prophet) were also selected from "Sihah Sitta". Mohammad Ali Jauhar stressed the teaching of Islamic history and Qur'an and ensured that the teaching day began with a full hour devoted to the rapid exegesis of the Qur'an. Teachers introduced their own skills and teaching methodologies, they were sometimes right, sometimes wrong. In the absence of finances and teaching material for the 300 or so adult learners, volunteers and teachers prepared rough and ready but extremely eye-catching teaching tools for teaching Islamiyat. They used photographs from newspapers, posters, leaflets, and pamphlets. By 1928, a good number of teaching materials had been prepared in order to teach Islamiyat. For instance old and new

maps were drawn on Islamic history and Geography, Muslim empires, Chandra Gupta Empire, Rajput Empire, and Ashok Empire. Several articles were written on places and monuments which were either destroyed or remained saved after 1857 revolt. Many famous ahadith were collected. The last sermon of the Prophet Muhammad was written beautifully on calendars which were hanged on the walls. Tahir Ali Masood Akhtar and Zamiruddin drew pictures of famous Muslim personalities of India and other Muslim countries. Under the guidance of Saeed Ansari some more maps on India and Arab routes were drawn in which sea routes and land routes were shown. On 7th Jan, 1931 under the patronage of Khwaja Gulam Sayedain, the Urdu Academy organized a seminar on Islamiat in which three lectures were read. In which, the first lecture was given by Prof. Wahajuddin. He spoke on "Nafsiat-e Mazhab". Second lecture was delivered by Qazi Abdul Gaffar. His speech was on Jamaluddin Afghani. The third lecture was given by Maulana Aslam Jairajpur who spoke on "Misr Ki Qadim Tehzib Par Islam Ka Asar".

In 1933 convocation Dr. Zakir Hussain spoke in his speech:

'In my view Jamia is an Islamic Institution whose aim is to educate Indian Muslims and the basic of this education is Islam and its culture, and one of the aims of Jamia is to serve Urdu.'

In 1934 Urdu Academy again organized a series lectures on Islamiyat. Dr. Mukhtar Ahmad Ansari called Halde Edib from Turkey to give lectures. She gave her 8 famous lectures on different issues of Turkey:

Lectures	President	Topic
1st	Dr. M. A. Ansari	Conflict between East and West, History of Turkey
2nd	Mahatma Gandhi	How the Kingship was brought to an end
3rd	Maulana Shaukat Ali	The supremacy and control of Yong Turks
4th	Syed Suleiman Nadvi	Abolishment of Khilafat, New power and Religion
5th	Dr. Allama Iqbal	Turkish Literature and Poetry
6th	Bhola Bhai Desai	The Contemporary Situation of Turkey
7th	Sarojini Naidu	The Turkish Women
8th	Dr. Bhagwan Dass	The Turkish Women and the Future

A number of Muslims, Britishers, and the people of other faiths participated with great zeal

in these lectures.

In 1936 teachers of Islamiyat organized a series lectures on Islamiyat under the presidency of Maulana Khwaja Abdul Hai Faruqui. On his invitation many religious scholars came to Jamia and delivered great speeches on the different themes of Islamiyat. Those speeches are as follows:

i. Maqsad-e Qur'an: Maulana Ahmad Ali: Amir Anjuman Khadimuddin - Lahore
ii. Imsaal Qur'an: Maulana Najmuddin: Former Prof. of Oriental College - Lahore
iii. Islam Me Daulat Ki Taksim: Prof. Gulam Murshid: Islamiya College - Lahore
iv. Islam Aur Majuda Masail: Maulana Abul Barkat Hakim Abdur Raouf - Danpur
v. Hadith: Maulana Mohammad Ibrahim - Sialkot
vi. Qadim Ulama Ka Talimi Nisab-ul Aain: Maulana Habibur Rahman Khan

In the year 1937, Urdu Academy again organized a program in which Gulam Nidani read his article on "Hindustan Ke Asar-e Qadima" Maulvi Abdur Rahman read an article on "Jizya" and America returned Dr. Saeed Hasan read an article on "Islami Duniya" Then, the year came 1939, when Maulana Ubaidullah Sindhi returned to India from Kabul after years of internment. Maulana Ubaidullah Sindhi, wanted to establish a theological institute, the Baitul Hikmat in Jamia. In which he wanted to promote the teachings and propagation of the philosophy of Shahwaliullah Mohaddis Dehlvi. He delivered lectures in Jamia from 1939 until his death in August 1944. He used to teach the Philosophy of Shahwaliullah and Tafsir of Qur'an. On 30th Nov, 1970, a wall painting exhibition was organised. The name of the exhibition was "Deenyat Padane Ke Jadeed Tarike". The exhibition was organised to innovate various new methods to teach Islamiyat. In the year 1976, V.C. Prof. Masood Hussain Khan merged Arabic, Persian and Islamiyat and founded a joint new multi disciplinary Department. It was named "Department of Islamic and Arab-Iranian Studies" and Dr. Mushirul Haq was appointed as its Founding Professor. In 1981 the faculty of Humanities and Languages established. However, in 1988 the Department of Islamic and Arab-Iranian Studies, was trifurcated into three Departments; Department of Arabic, Department of Persian, and Department of Islamic Studies. Prof. I.H. Azad Farooqui was made its first founder HOD. Today, The Department serves Undergrads, Graduates, Postgraduates, and

Research Scholars. It has a remarkable group of 8 senior faculty members 4 guest teachers and a number of research scholars who represent the new generation of research in the field of Islamic Studies.

CONCLUSION

Since, the handful of tents in Aligarh in 1920 it's covering 215.85-acres campus now in South Delhi, Jamia Nagar-Okhla. Jamia's role has been creating peaceful environment and to inculcate Muslim youth to their rights and duties as citizens of India. The department of Islamic Studies which has been the soul of Jamia has also been working in the same fashion; it has been doing what was expected of it. To be honest, the Department has tended to become ritualistic in its approach and paying sufficient attention to promoting inquisitiveness and the culture of questioning among its students through various academic tools i.e. seminars, extension lectures, and extracurricular activities etc. Relatively, the Department of Islamic Studies is old but vibrant centre that has a worldwide focus. Its mission is to enhance the understanding of Muslims throughout the world. Since, the beginning the Department has undergone lots of adversity and changes but the teachers and students alike made constant efforts to develop the department making it one of the most reputed Islamic Studies departments in India and steadily becoming famous across the world. The Department of Islamic Studies has negotiated with its past and present well.

Reference :

Guest Faculty, Department of Islamic Studies, Jamia Millia Islamia, Jamia Nagar, New Delhi-110025; Mob: +91 9891059708; E-mail: javed.akhatar1985@gmail.com

Hasan, M. & Jalil, R. Partners in Freedom: Jamia Millia Islamia, Niyogi Books, N. Delhi, 2006, p. 190.

The former Vice Chancellor of Jamia Millia Islamia and currently the Lieutenant Governor of Delhi.

Mentioned in Department of Islamic Studies syllabus on page no. 3

The original speech was in Urdu, it is the translation.

Mian, S. M. The Prisoners of Malta (Asira'n-e-Malta): The Heart-Rending Tale of Muslim Freedom Fighters in British Period. Trans. Mohammad A. Hussain and Hasan Imam: Jamiat

Ulama-i-Hind, in association with Manak Publications Pvt. Ltd., N. Delhi, 2005, P. 63.

Hasan, M. & Jalil, R. Partners in Freedom: Jamia Millia Islamia, Niyogi Books, N. Delhi, 2006, pp. 66-67.

Ibid., p. 92.

In Hamdard-I Jamia in August 1937

She was a Turkish nationalist, novelist, and political leader for women's rights.

In Hamdard-I Jamia in August 1937, p. 105.

Mentioned in the Syllabus of Department of Islamic Studies, Jamia Millia Islamia, p. 3.

Hanafi, Shamim, Shahabuddin Ansari, and Shamshul H. Usmani. Jamia Millia Islamia: Tahrik, Tarikh, Riwayat, Maktaba Jamia Ltd., N. Delhi, 2004. p. 262.

Hasan, M. & Jalil, R. Partners in Freedom: Jamia Millia Islamia, Niyogi Books, N. Delhi, 2006, p. 65.

Ibid., pp. 66-67.

Ibid., p. 29.

Mudholi, A. G. Jamia ki Kahani, Maktaba Jamia, New Delhi, 1965, pp. 29-30.

Ibid., p. 34.

Ibid.

Part of the collection of Mohammad Ali's articles, in Muhammad Sarwar, ed., Mazameen-e-Mohamed Ali, Vol. I, Maktaba Jamia, N. Delhi, 1938, pp. 383-430. (Jamia Millia Islamia: Musalmanon ki Iqtesadi Halat ki Islah, Jamia Millia ka Maqsad kya Hai, and Jamia Millia Islamia ki Chand aur Khusoosiyat: Madri Zaban Me Talim)

Mudholi, A. G. Jamia ki Kahani, Maktaba Jamia, N. Delhi, 1965, p. 33.

Ibid., pp. 62-63.

In those days Arabic and Islamiyat were generally seen as inseparable.

Hanafi, Shamim, Shahabuddin Ansari, and Shamshul H. Usmani. Jamia Millia Islamia: Tahrik, Tarikh, Riwayat. New Delhi: Maktaba Jamia Ltd., 2004. p. 262.

Ibid., p. 263.

Ibid., p. 107.

Mudholi, A. G. Jamia Ki Kahani, Maktaba Jamia, N. Delhi, 2004. pp. 114-115.

Ibid., p. 157.

Ibid., pp. 159-160.

Ibid., pp. 182-183.

Ibid., pp. 197-198.

Ibid., pp. 225-226.

He was the director of Mahkma-e Asar-e Qadima, Hyderabad. He was famous in India and abroad.

Mudholi, A. G. Jamia Ki Kahani; Maktaba Jamia, N. Delhi, 2004. pp. 237-238.

A Sikh converts who studied in Deoband from 1889 to 1905, and was famous disciple of Maulana Mahmud Hasan, and was also the part of Reshmi Rumal Ki Tehrik.

Mudholi, A. G. Jamia Ki Kahani, Maktaba Jamia Ltd., New Delhi, 2004. pp. 269- 270, 372. For the propagation of Shahwaliullah Mohaddis Dehlvi.

Hanafi, Shamim, Shahabuddin Ansari, and Shamshul H. Usmani. Jamia Millia Islamia: Auraq-e Musawir Mutalliqin wa Muasirin. Vol. 2. New Delhi: Maktaba Jamia Ltd., 2004. p. 187.

Mudholi, A. G. Jamia Ki Kahani, Maktaba Jamia, N. Delhi, 2004. pp. 269-270.

See in this reference: The Jamia's Annual Report of 1976.

Prof. Masood Hussain Khan had a long association with Jamia Millia as it was one of his Alma Mater from where he completed his primary education. His uncle was Dr. Zakir Hussain. Prof. Masood took the charge of Jamia Millia Islamia on 3rd November 1973 and served till 15th August 1978.

Mentioned in the Syllabus of the Department of Islamic Studies on page no. 3, Involving different subjects of study in one activity

Hanafi, Shamim, Shahabuddin Ansari, and Shamshul H. Usmani. Jamia Millia Islamia: Auraq-e Musawir Mutalliqin wa Muasirin. Vol. 2. New Delhi: Maktaba Jamia Ltd., 2004. p. 548.

Prof. Mushirul Haq was assassinated by militants of Kashmir.

Ibid., p. 3. Also See: Old and new syllabus of Department of Islamic Studies -Jamia.

Statistical Data Fact Sheet 2012 - 2013 of Jamia Millia Islamia.

International Research Journal | अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका | ISSN-0975-4431

गांधीजी के विचार दर्शन का आधार

डॉ क्रांति जैन
अतिथि विद्वान
शासकीय कला महाविद्यालय कटंगी
जिला– बालाघाट

संसार में जितने भी महापुरूष और दार्शनिक हुए हैं, उनके विचार दर्शन के अपने–अपने आधार रहे हैं। महात्मा गांधी मूल रूप से एक धार्मिक प्रवृति के व्यक्ति थे। गांधीजी के विचारदर्शन का आधार सत्य, अहिंसा और प्रेम है। उन्होंने सत्य, अहिंसा और प्रेम को ईश्वर से अलग नहीं माना। उनके विचार चाहे सामाजिक हों, अर्थिक हो, राजनीतिक हो या धार्मिक, सत्य, अहिंसा और प्रेम पर ही आधारित थे। उन्होंने विचार और व्यवहार दोनों को सत्य, अहिंसा और प्रेम पर ही आधारित किया। वास्तव में उनके लिये सत्य, अहिंसा और प्रेम में कोई भेद नहीं था। ये तीनों एक दूसरे के पर्याय थे। सत्य ही ईश्वर था, सत्य ही धर्म था। धर्म के सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण अत्यंत व्यापक था। समस्त धर्म सत्य, अहिंसा और प्रेम का संदेश देते हैं। सत्य के बिना अहिंसा नहीं और अहिंसा के बिना प्रेम नहीं। यही तत्व गांधीजी के विचारों का प्रमुख आधार है। उनके लिये ये एक दूसरे के पर्याय है। परस्पर एक दूसरे के पूरक हैं। एक के अभाव में दूसरा व्यर्थ और प्रभावहीन है।

आधुनिक सभ्यता और संस्कृति पतन की उस सीमा पर पहुँच गई है जहाँ व्यक्ति, संस्था या समाज का मूल लक्ष्य धन, सत्ता और भोग रह गया है। इसका परिणाम है द्वेष, हिंसा, अत्याचार, अनाचार अर्थात् मानवता का नाश। सामाजिक, आर्थिक, राजनीति और धार्मिक सभी क्षेत्रों में असत्य, स्वार्थ, हिंसा, द्वेष और भोग विलास का वातावरण है। सम्पूर्ण समाज नैतिक पतन की चरम सीमा पर पहुँच गया है। संसार विनाश के कगार पर खड़ा है। अतः मानवता को पतन और विनाश से बचाने के लिये आज ऐसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक दर्शन की आवश्यकता है जो सत्य, अहिंसा,

त्याग, प्रेम, सद्भाव जैसे नैतिक नियमों पर आधारित हो। अन्यथा मानवता के पतन और विनाश को रोकना असम्भव है। अतः आज गांधी विचार दर्शन के नैतिक आधारों को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है। उनके विचारों के आधार आज सर्वाधिक प्रासंगिक है क्योंकि वे सत्य और अहिंसा जैसे नैतिक मूल्यों पर आधारित है।

मुख्य बिन्दु – सत्य, अहिंसा, प्रेम, धर्म, विचार दर्शन, ईश्वर।

संसार में जितने भी महापुरूष और दार्शनिक हुए हैं, उनके विचार दर्शन के अपने–अपने आधार रहे हैं। महापुरूषों, साधु–सन्तों आदि ने तो ईश्वर भक्ति, सेवा, त्याग, करूणा, और सत्य का मार्ग बताया ही है किन्तु जो दार्शनिक आध्यात्म के समर्थक रहे हैं, उन्होंने भी सत्य, अहिंसा और सदगुणों का ही संदेश दिया है। महात्मा गांधी मूल रूप से एक धार्मिक प्रवृति के व्यक्ति थे। किन्तु धर्म के सम्बन्ध में, उनका दृष्टिकोण अत्यंत व्यापक था। उनके लिये सत्य ही ईश्वर था, ईश्वर ही सत्य था, सत्य ही ध र्म था। जहाँ सत्य है वहाँ ईश्वर है जहाँ ईश्वर है वहाँ धर्म है जहाँ धर्म है वहाँ अहिंसा है और जहाँ अहिंसा है वहाँ प्रेम है। उन्होंने सत्य, अहिंसा और प्रेम को ईश्वर से अलग नहीं माना। ग ा ं ध ीजी के विचारदर्शन का आधार सत्य, अहिंसा और प्रेम है। उनके विचार चाहे सामाजिक हों, अर्थिक हो, राजनीतिक हो या धार्मिक, सत्य, अहिंसा और प्रेम पर ही आधारित थे। उन्होंने विचार और व्यवहार दोनों को सत्य, अहिंसा और प्रेम पर ही आधारित किया। वास्तव में उनके लिये सत्य, अहिंसा और प्रेम में कोई भेद नहीं था। ये तीनों एक दूसरे के पर्याय थे।

सत्यः–

हमारी सारी प्रवृत्तियों का केन्द्र बिन्दु सत्य है। सत्य हमारे जीवन का प्राण है। परन्तु सत्य के बिना जीवन में किसी भी सिद्धांत या नियम का पालन असम्भव है। गांधीजी कहते हैं "ईश्वर ही सत्य है।" उनका कहना है कि "मेरे समरूप अनुभव ने मुझमे यह अटल विश्वास पैदा कर दिया है, कि सत्य के अतिरिक्त और कोई ईश्वर नही है।" किन्तु सत्य के बारे में यह दृष्टिकोण वस्तुगत यथार्थ पर आध ारित नहीं था। महात्मा गांधी के अनुसार "किसी क्षण एक शुद्ध हृदय जो अनुभव करता है, वह ही सत्य है, उस पर अडिग बने रहकर, विशुद्ध सत्य को प्राप्त किया जा सकता है। सत्य की खोज में तप तथा स्वयं कष्ट सहने की जरूरत होती है इसमें स्वार्थ के लिए किंचित भी गुजांइश नहीं हो सकती। सत्य जैसी निस्वार्स्थ खोज में कोई बहुत समय तक पथभ्रष्ट नहीं हो सकता। ज्यों ही वह गलत रास्ते जाता है त्यों ही ठोकर खाकर गिरता है और फिर सही मार्ग पर लग जाता है।सत्य और प्रेम में भेद नहीं है। सत्य को प्रेम में रूपांतरित करना और फिर प्रेम को अहिंसा में रूपातंरित कर देना कठिन काम नहीं है। सत्य को प्राप्त करने का एक मात्र साधन मानव प्रेम है। जब भी आप सत्य को

ईश्वर के रूप में पाना चाहें, सो इसका अचूक साधन प्रेम हैअर्थात् अहिंसा है। चूँकि मैं यह मानता हूँ कि साधन और साध्य संपरिवर्तनीय शब्द है इसलिए मुझे यह कहने में कोई सकोंच नहीं कि ईश्वर प्रेम ही है।प्रेम ही सत्य है, सत्य ही अहिंसा है।

निरपेक्ष सत्य को गांधीजी ईश्वर के साथ समीकृत करते हैं। उनके निकट सत्य ईश्वर है और ईश्वर सत्य है। सत्य का अर्थ जिसका वास्तव में अस्तित्व है, ईश्वर का सही और पूरी तरह से अर्थयुक्त नाम है। पूर्ण सत्य में सत्य समस्त ज्ञान भी सम्मिलित है और ज्ञान शाश्वत आनंद का स्त्रोत है। इसीलिए हम ईश्वर को सच्चिदानंद के नाम से जानते हैं। गांधीजी ईश्वर के सत्य रूप के ही पुजारी हैं, सत्य के अतिरिक्त अन्य किसी के नहीं। उनके लिये सत्य, अहिंसा और प्रेम ही ईश्वर है। गांधीजी जैसे आध्यात्मिक महापुरूष भी विशुद्ध सत्य की झलक ही देख पाते हैं, क्योंकि सत्य का दर्शन भौतिक आधार पर नहीं हो सकता। सत्य के दर्शन के लिये आध्यात्मिक शक्ति की आवश्यकता होती है। वे स्वयं कहते हैं "सत्य का सम्पूर्ण दर्शन देह द्वारा नहीं हो सकता, असम्भव है, क्षण भंगुर देह द्वारा शाश्वत धर्म का साक्षात्कार होना सम्भव नहीं।"

किसी विशेष समय पर एक शुद्ध हृदय जो अनुभव करता है वह सत्य है। प्रकृति से सत्य का स्वयं साक्ष्य है। परन्तु अपूर्ण होने के कारण मनुष्य अज्ञान के जान से उसे घेरे हुए हैं। अज्ञान समस्त बुराईयों की जड़ है। जब शुद्ध आचरण अज्ञान को दूर कर देता है, तो सत्य स्पष्ट प्रकाशित हो जाता है ।गांधीजी के लिए सत्य से ऊँचा कोई धर्म नहीं। वे कहते हैं– "सत्य जो परमेश्वर है, उसे जानने को अपर सत्य साधन है यह कहिये अथवा सत्य आग्रह, सत्य विचार, सत्यवाणी और सत्य कर्म की – अर्थात अपर सत्य के पालन की पूर्ण सिद्धि ही परमेश्वर का साक्षात्कार है यह कहिये साधक के लिए दोनों में कोई भेद नहीं है।"

सत्य के साथ ज्ञान – शुद्ध ज्ञान अवश्यभावी है। जहाँ सत्य नहीं है वहाँ शुद्ध ज्ञान की संभावना नहीं हैं। गांधीजी अपने जीवन के व्यावहारिक अनुभव के आधार पर कहते हैं "जैसे–जैसे मैं सत्य की शोध करता हूँ मुझे प्रतीत होता जाता है कि सब कुछ उसी में आ जाता हूँ। प्रायः यह प्रतीत होता रहता है कि अहिंसा में वह नहीं है, परन्तु उसमें अहिंसा है। निर्मल अन्तःकरण को जिस समय जो प्रतीत हो वह सत्य है। उस पर दृढ़ रहने से शुद्ध सत्य की प्राप्ति हो जाती है।सत्य में प्रेम की प्राप्ति होती है सत्य में मृदुता मिलती है अर्थात सत्य ही प्रेम है; सत्य ही अहिंसा है। गांधीजी ने व्यक्तिगत जीवन के और देश में जीवन के विविध क्षेत्रों में सत्य की खोज के लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया था उनकी अनुसंधान पद्धति निरीक्षण और प्रयोग की सामान्य वैज्ञानिक पद्धति है। गांधीजी के सम्बन्ध में रिचर्ड ग्रेग कहते हैं– "वे सामाजिक सत्य के क्षेत्र में महान वैज्ञानिक हैं। उनके महान वैज्ञानिक होने

के कारण है, समस्याओं का उनका चुनाव, उनको हल करने की उनकी समाधान पद्धति, उनके अन्वेषण की व्यापकता, अध्यवसाय और मनुष्य स्वभाव उनका गम्भीर ज्ञान।"

सत्य की खोज से बढ़कर खोज नहीं है उसमें सफलता पाने का एक ही साधन है और वह है अहिंसा – अपने शुद्धतम रूप में हमने अभी तक इसकी उपेक्षा की है और यही कारण है कि हम जिसे सत्य मानते है उसे दूसरों पर लादने की बलपूर्वक कोशिश करते हैं। जबकि बल का सम्बन्ध हिंसा से है। अहिंसा का हिंसा से कोई सम्बन्ध नहीं है। सत्य और अहिंसा में कोई अंतर नही है। अतः सत्य को बलपूर्वक न तो स्वीकार किया जा सकता है और न ही स्वीकार करने के लिये बाध्य किया जा सकता है। गांधीजी ने सत्य का अर्थ व्यापक रूप में लिखा है। "विचार में, वाणी में आचार में होना ही सत्य है। इस सत्य को सम्पूर्णतः समझने वाले के लिए जगत में और कुछ जानना बाकी नहीं रहता।"

सत्य की आराधना भक्ति हैं, सिर हथेली पर लेकर चलने का सौदा है अर्थात् वह "हरि" का मार्ग है जिसमें कायरता की गुजांइश नहीं है, जिसमें हार नाम की कोई चीज है ही नहीं। वह तो मरकर जीने का मंत्र है। वास्तव में सत्य अजेय है। सत्य अमर है। "सत्य ही जीतता है झूठ नहीं। सत्य का ही वह मार्ग है जिस पर देव अर्थात् विद्वान चलते हैं। इसी मार्ग पर चलकर अपनी सब कामनाओं को पूर्ण कर चुकने वाले ऋषि उस ब्रह्म में लीन होकर मुक्त हो जाते हैं जो सत्य का परम विधान है।" किसी वस्तु का होना सत्य है और न होना असत्य है। सभी सदगुण सत्य के रूप है और सभी अवगुण असत्य के रूप है। अतः सत्य ही धर्म है।

भूल करना मनुष्य का काम है और उसे सुधारना भी उसी का काम है। परन्तु यह जानकर भी कि हम भूल कर रहे हैं उसे न सुधारना मनुष्यता का पतन है। कारण पशु भूल नहीं करते, परन्तु मनुष्यता का पतन शब्द ठीक नहीं। "भूल सुधार करना मानवता है, परन्तु भूल न करना देवतापन है, परन्तु भूल सुधार न करना राक्षसीपन है।"

अहिंसा और प्रेमः–

समस्त धर्म सत्य, अहिंसा और प्रेम का संदेश देते हैं। सत्य के बिना अहिंसा नहीं और अहिंसा के बिना प्रेम नहीं। यही तत्व गांधीजी के विचारों का प्रमुख आधार है। उनके लिये ये एक दूसरे के पर्याय है। परस्पर एक दूसरे के पूरक हैं। एक के अभाव में दूसरा व्यर्थ और प्रभावहीन है। वास्तव में अहिंसा का अर्थ अत्यधिक व्यापक हैं । अहिंसा का अर्थ केवल हिंसा न करना ही नही है। किसी के प्रति भी बुरे विचार, छल–कपट, झूठ बोलना, क्रोध, घृणा करना, जलना, अनुचित जल्दबाजी आदि भी एक तरह से हिंसा ही हैं इतना ही नहीं दूसरों का अधिकार छीनना और समाज के लिये आवश्यक वस्तुओं पर

अपना एक अधिकार जमाना अथवा अनुचित रूप से अनावश्यक संग्रह हिंसा ही है। उनके लिये अहिंसा और प्रेम अत्यन्त व्यापक है।

वे कहते हैं "जब कोई मनुष्य कहता है कि मै अहिंसा परायण हूँ, तब उससे यह आशा की जाती है कि यदि कोई हानि पहुँचाये तो वह उस पर क्रोध न करें, उसका नुकसान न चाहे, बल्कि उसकी भलाई ही चाहे। न वह उसके प्रति प्रलाप करेगा और न उसे किसी तरह की शारीरिक चोट ही पहुँचायेगा। वह तो अन्याय कर्ता के द्वारा किये गये हर तरह के नुकसान को सहन ही करेगा। पूर्ण अहिंसा का अर्थ है, प्राणी मात्र के प्रति दुर्भावपूर्ण अभाव। इसलिये अहिंसा में मनुष्य से नीचे की कोटि के प्राणियों, यहाँ तक कि हानिकारक कीड़े–मकुड़े और पशुओं का भी समावेश है। उनकी सृष्टि हमारी विनाशक प्रवृतियों के लिये नहीं हुई है।

यदि कोई मनुष्य हिंसा करता है तो उसका जवाब अहिंसा द्वारा दिया जाना चाहिये। किसी भी स्थिति में हिंसा का जवाब हिंसा में नही देना चाहिये। क्योंकि हिंसा का अंत हिंसा से नही होता।

हरिजन सेवक में गांधीजी के विचार से अहिंसा सामाजिक पहलु है, केवल व्यक्तिगत वस्तु नहीं है। मनुष्य केवल व्यक्ति नहीं वह पिन्ड भी है, ब्रम्हाण्ड भी है, वह अपने ब्रम्हाण्ड को अपने कन्धे पर लिये फिरता है। जो धर्म व्यक्ति के साथ समाप्त हो जाता है वह मेरे काम का नही है। मेरा यह दावा है कि सारा समाज अहिंसा का आचरण कर सकता है।" अहिंसा संकुचित नही बल्कि अत्यन्त व्यापक है। अहिंसा एक मनुष्य द्वारा नहीं बल्कि सामूहिक समाज द्वारा भी की जाती है, क्योंकि मनुष्य इस संसार में अकेला नही रहता, बल्कि सामूहिक रूप में रहता है। गांधीजी कहते हैं– "हमारी अहिंसा बलवान की अहिंसा भले ही न हो, पर उसे सच्चे लोगों की अहिंसा जरूर होना चाहिये। यदि हम अहिंसा परायण होने का दावा करते हैं तो हमें उस घड़ी तक अंग्रेज अथवा अपने सहयोगी भाईयों को हानि पहुँचाने का इरादा कदापित नही होना चाहिये, जब तक हम अपना अहिंसा परायण का दावा छोड़ नही देते।" "यदि अहिंसा को ही राष्ट्र का व्यवहार धर्म बने रहना है तो मानव समाज और राष्ट्र दोनों की प्रतिष्ठा के विचार से हमें उसका अक्षरशः तथा निष्ठा के साथ पालन करना ही पड़ेगा।"जहाँ भिन्न–भिन्न धर्म वाले, भिन्न–भिन्न भाषा वाले और भिन्न–भिन्न जति वाले बसते हैं, प्रत्येक का कर्तव्य हो जाता है कि वह एक दूसरे के साथ ऐसा व्यवहार करे, जिससे सभी अपनी इच्छा और मर्जी के अनुसार अपने धर्म, भाषा इत्यादि का पालन कर सकें। इसका परिणाम यह होगा कि समाज में सहयोग और बंधुत्व की भावना विकसित होगी और एक अहिंसक समाज का निर्माण होगा।

साम्प्रदायिक सद्भावना एवं एकता के सम्बन्ध में गांधीजी कहते हैं– "मेरी राय में तो हम लोग जब तक अहिंसा को दृढ़ व्यवहार नीति के रूप में नहीं स्वीकारेंगे तब तक हिन्दु–मुस्लिम एकता

स्थापित होना असम्भव है।" अहिंसा के बिना एकता स्थापित नहीं की जा सकती। हिन्दुस्तान की आजादी स्वयं इस बात का प्रमाण है कि अहिंसा में बड़ी ताकत है जो आध्यात्मिक होने की वजह से भौतिक तौर पर कम नहीं बल्कि ज्यादा ही कारगार है। आध्यात्मिक शक्ति की तुलना में भौतिक शक्ति की ओर आकृषित होना व्यर्थ है। आध्यात्मिक शक्ति की प्राप्ति के पश्चात् भौतिक शक्ति स्वत: ही व्यक्ति के आधीन होगी।

"अहिंसा एक पूर्ण स्थिति है सारी मनुष्य जाति इसी लक्ष्य की ओर स्वभावत: परन्तु अनजाने में बढ़ रही है। मनुष्य जब अपने निर्वैयक्ति कला की साक्षात मूर्ति बन जाता है, वह कुछ देवी पुरूष नहीं हो जाता उसी अवस्था में वह सच्चा मनुष्य बनता है आज की अवस्था में हम कुछ अंशों में मनुष्य और कुछ अंशों में पशु हैं।" अहिंसा एक व्यापक शब्द है। गांधीजी कहते हैं कि– पाप लेना हिंसा नहीं है, अनेक अवसरों पर जीवन लेने में अहिंसा होती है। उदाहरण– पागल कुत्ते को मरवाना अहिंसा है, न मरवाना हिंसा है अर्थात् अहिंसा एक सकारात्मक शब्द है। गांधीजी कहते हैं कि– "मेरे बेटे को यदि ऐसी ही असाध्य पीड़ा हुई जिसका कोई उपचार नही है, तो उसके प्राण लेना मैं अपना कर्तव्य मानूंगा गांधीजी कहते हैं कि "मै हिंसा से बचना चाहता था और बचना चाहता हूँ। अहिंसा मेरे जीवन का प्रथम सिद्धांत है और यही मेरा अन्तिम सिद्धांत भी है।"

जब अहिंसा को हम जीवन का सिद्धांत मान लेते हैं तो वह हमारे सारे जीवन में व्याप्त हो जानी चाहिये, केवल विशेष मौकों पर ही उसका उपयोग नही होना चाहिये। यह मानना गहरी भूल है कि अहिंसा केवल व्यक्तियों के लिए ही अच्छी है और जनसमूह के लिए नही। अहिंसा के बिना मानव जीवन का कोई अर्थ नही है। अहिंसा के बिना मनुष्य पशु तुल्य है। वास्तव में अहिंसा ही मनुष्य और पशु के मध्य अंतर स्पष्ट करती है। अहिंसा ही मनुष्य को पशु से ऊँचा उठाती है।

गांधीजी अहिंसा को नीतिशास्त्र का सबसे श्रेष्ठ स्वरूप मानते थे क्योंकि सत्य का पूर्ण दर्शन, अहिंसा को पूर्णत: प्राप्त करने से ही हो सकता है। गांधीजी की मान्यता है कि केवल वे लोग जो साहसी और कर्मनिष्ठ होते हैं वे ही वास्तव में अहिंसा के अनुयायी बन सकते हैं। अहिंसा का पाठ ऐसे व्यक्ति को नहीं पढ़ाया जा सकता जो मृत्यु से डरता है। और जिसमें प्रतिरोध की क्षमता नहीं है। वह अहिंसा को समझे, इससे पहले जरूरी है कि उसे मजबूती से अपने सिद्धांतो की रक्षा करना सिखाया जाय और तब उस आक्रमण से जो उसे पराजित करने को कटिबद्ध हो, वह अपनी रक्षा करता हुआ अपने प्राण देना भी सीख सकेगा। दूसरा कोई रास्ता अपनाना उसकी कायरता को ही मजबूत बनाना और उसे अहिंसा से दूर हटा ले जाना होगा। यह हो सकता है कि मै किसी को जवाबी हमला बोलने में मदद न कर सकूं लेकिन मुझे किसी बुजदिल को तथाकथित अहिंसा के पीछे आश्रय नही देना है।

"अहिंसा बुरा काम करने वाले के सामने घुटने टेक देना नही है। इसका अर्थ है अत्याचारी के विरूद्ध अपनी समूची आत्मा का बल लगा देना। अपने अस्तित्व के इस नियम के अन्तर्गत कार्य करते हुए किसी भी अकेले व्यक्ति के लिए सम्भव है कि वह एक अन्यायपूर्ण साम्राज्य की समूची शक्ति और बल को चुनौती दे सकें।" अहिंसा की शक्ति बड़ी से बड़ी सांसारिक शक्ति से अधिक शक्तिशाली है। यह स्थायी होती है जबकि सांसारिक और भौतिक शक्ति अस्थायी होती है। यह केवल सत्य पर चल कर और कष्ट सहन और सेवा के माध्यम से ही प्राप्त की जा सकती है। बुराई के अहिंसात्मक प्रतिरोध ा में दुःख और यातनाएँ झेलनी ही पड़ती है। महात्मा गांधी ने इन कष्टों को एक धार्मिक और नैतिक महत्व प्रदान किया "जनता के लिए मूलभूत महत्व की चीजें केवल तर्क से नहीं अर्जित की जा सकती, उन्हें कष्ट और यातनाएं झेलकर खरीदना होता है।" सुख के लिए स्वयं प्रसन्नतापूर्वक कष्ट सहेगा। मतलब यह है कि अहिंसा केवल निवृति रूप कर्म या अक्रिया नही है बल्कि बलवान प्रवृति या प्रक्रिया है।"

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि सत्य, अहिंसा और प्रेम जो कि एक दूसरे के पर्याय है गांध ी विचार दर्शन का प्रमुख आधार हैं जहाँ सत्य नही वहाँ अहिंसा नही, जहाँ अहिंसा नही वहाँ प्रेम नही। गांधी एक धार्मिक प्रवृति वाले व्यक्ति थे। किन्तु उनका धर्म संकुचित नही था। उनका धर्म सत्य था। सत्य सभी धर्मों का सार है। जहाँ सत्य नही वहाँ धर्म नही। अहिंसा प्रत्येक धर्म का आदर्श है। जो सत्य है वही अहिंसा है। जहाँ अहिंसा है वहीं प्रेम है। प्रेमभाव के बिना अहिंसक भाव उत्पन्न नहीं हो सकते। अर्थात् सत्य, अहिंसा और प्रेम गांधीदर्शन का प्रमुख आधार है। यही सभी धर्मों का आधार है, संदेश है।

धर्म के संबंध मे गांधीजी के विचारः–

गांधीजी एक धार्मिक प्रवृति के व्यक्ति थे किन्तु धर्म के सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण अत्यंत व्यापक और यर्थात् था। वे धर्म का अर्थ हिन्दु धर्म, इस्लाम धर्म और ईसाई धर्म से न लेकर मानव धर्म से लेते थे। उनका कहना था कि "धर्म से मेरा अभिप्राय औपचारिक या रूढ़ीगत धर्म से नहीं है। बल्कि उस धर्म से है जो सब धर्मो की बुनियाद है।" वास्तव में सभी धर्मों का लक्ष्य अंततः एक ही है। सभी धर्मों का आधार, सत्य, अहिंसा, प्रेम, सद्भाव, त्याग और सेवा जैसे नैतिक आदर्श है। अन्तर सिर्फ पूजा पद्धति का है।

गांधीजी की दृढ़ मान्यता थी कि धर्म ही हमें सत्य, अहिंसा, सहानुभूति, त्याग और सेवा का पाठ पढ़ाता है। धर्म, सत्य और अहिंसा सिखा कर आत्मा की शुद्धि करता है। धर्म ही आत्मा और परमात्मा में अटूट संबंध स्थापित करता है। उनके लिये धर्म ही ईश्वर या और ईश्वर ही धर्म। स्वतंत्रता संग्राम

के सैनिकों की कतारों में राष्ट्रव्यापी पैमाने पर शक्तिशाली अनुशासन भावना पैदा करने में सहायता मिली। वास्तव में साम्राज्यवाद के विरूद्ध संघर्ष में अहिंसा का सिद्धांत गांधीजी का सबसे कारगर अस्त्र बन गया। अहिंसा के सिद्धांत से लेस सेकड़ों–हजारो पुरूष और स्त्री हंसते–हसते गिरतार होते थे और ब्रिटिश शासन के प्रति आम जनता के प्रतिरोध के दौर में प्रसन्नता से लाठियों और गोलियों को सीने पर झेलते थे।

अहिंसा में न केवल शांतिपूर्ण प्रतिरोध की भावना निहित थी वरन् विरोधी तथा मौजूदा सामाजिक सम्बन्धों से समझौता करने की तत्परता की भावना भी निहित थी। गांधीजी पारस्परिक सहमति के आधार पर धीरे–धीरे और क्रमिक सुधार को ही स्वीकार करते थे। पूँजीवादी समाज में परिपक्व हो रहे वर्ग अन्तर्विरोध और वर्ग वर्ग संघर्ष उनकी भावनाओं को आंदोलित नही करते थे। वह सभी क्रांतिकारी और जुझारू कार्यवाहियों के विरोधी थी। वे क्रान्ति तो चाहते थे किन्तु अहिंसक क्रान्ति उनके आंदोलन या क्रान्ति में हिंसा का कोई स्थान नही था। हिंसा के माध्यम से वह राष्ट्र की स्वतंत्रता भी नही चाहते थे। उनके जीवन प्रमुख मापदण्ड अहिंसा था, सत्य था, प्रेम था। ये तीनों ही एक दूसरे के पर्याय है। एक दूसरे से पृथक नहीं किये जा सके।

"अहिंसा का साधक केवल प्राणियों को उद्वेग पहुँचाने वाली वाणी न बोल कर और कर्म न करके अथवा मन में भी उनके प्रति द्वेषभाव न आने देकर संतोष नहीं मानता, बल्कि वह जगत में फैले हुए दुःखों को देखने समझने और उनके उपाय ढूंढने का प्रयत्न करता रहेगा और दूसरो के उनके लिये प्राण वायु था। वे कहा करते थे कि "मै जल और वायु के बिना जीवित रह सकता हूँ, ईश्वर के बिना नहीं।" उनके लिये सभी धर्म एक ही लक्ष्य तक पहुँचने के भिन्न–भिन्न मार्ग है।

गांधीजी सभी धर्मो का सम्मान करते थे। उन्होंने सभी धर्मो की अच्छाईयों को अंगीकार किया। उन्होंने कहा था कि "संसार के सभी धर्मो का मेत्रीभाव से अध्ययन एक पवित्र कर्तव्य है।" वे कहा करते थे कि "सभी धर्म समान नैतिक नियमों पर आधारित है। मेरा धर्म उन नैतिक नियमों से बना है जिनसे संसार के मानव आबद्ध है।" उनके लिये सभी धर्मग्रन्थ महत्वपूर्ण और सम्मानीय थे। उनका कथन है कि "मेरा विश्वास है कि बाईबिल, कुरान एवं जेन्दावेस्ता भी उतने ही ईश्वर प्रेरित ग्रन्थ है जितने कि वेद।" उन्होंने किसी भी धर्म के अयुक्तियुक्त एवं अनैतिक पक्ष को कभी स्वीकार नहीं किया उन्होंने उसी को स्वीकारा जो उनके विवेक को ग्राहय थे।

वास्तव में गांधीजी रूढ़वादी और परम्परागत धर्म को नही मानते थे। वे हर उस धर्म को मानते थे जो सत्य, अहिंसा, प्रेम, सदभाव, त्याग, सहानुभूति और सेवा का आदर्श प्रस्तुत करता था। यदि गहराई से अध्ययन करें तो सभी धर्म यही संदेश देते हैं। सभी धर्म सत्य और अहिंसा पर आधारित

है। सभी धर्मो का लक्ष्य मानव कल्याण है, मानव सेवा है। मानव सेवा ही ईश्वर की सेवा है। उनके लिये धार्मिक पूजा पद्धतियों का कोई भेद नहीं था। धार्मिक भेदभाव के लिये उनके पास कोई स्थान नही था। वे सारी जिन्दगी मानव कल्याण और एकता के लिये संघर्ष करते रहे। वास्तव में राजनीति में धर्म से प्रेरित होकर ही आये थे। धर्म से प्रेरित होकर ही उन्होंने राजनीति का आध्यात्मीकरण किया था।

अन्त में इतना कहा जा सकता है कि गांधीजी का धर्म के सम्बन्ध में दृष्टिकोण अत्यंत सकारात्मक और व्यापक था। उनके लिये ईश्वर ही सत्य था, सत्य ही धर्म था, धर्म ही ईश्वर था। जो सत्य है वही ईश्वर है जो ईश्वर है वही धर्म है। धर्म ही सदाचार और नैतिकता है। आधुनिक संकीर्ण "धर्म–दर्शन" से भिन्न गांधीजी का धर्मदर्शन था।

आधुनिक संदर्भ में गांधीजी के विचारदर्शन के आधार की प्रासंगिकता

यद्यपि आज गांधीजी के विचारों पर अमल करना असंभव लगता है क्योंकि आज के भौतिकवादी और स्वार्थी समाज में जहाँ नैतिक पतन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया है गांधीजी के विचार स्वप्नलोक प्रतीत होते हैं, अव्यावहारिक माने जाते हैं। ऐसा कहा जाता है कि उनके विचारों का आधार कोरे धार्मिक आदर्श हैं जो आज के भौतिकवादी युग में लोगों को स्वीकार्य नहीं। वास्तविकता यह है कि आज के संदर्भ में गांधी के विचारों के जो आधार है वहीं सबसे अधिक प्रासंगिक है, क्यों ? क्योंकि आज संसार में जो भोगवाद, स्वार्थ, हिंसा, द्वेष और विनाश का तांडव हो रहा है, नैतिकता का पतन हो रहा है उसका मूल कारण यह है कि आधुनिक सभ्यता और संस्कृति, रीति, रिवाज, परम्परा और धर्म (जैसा कि आज धर्म का अर्थ लिया जाता है) सत्य, अहिंसा और प्रेम जैसे नैतिक सिद्धान्तों पर आधारित नहीं है। जिस धर्म, समाज, संस्था के आधार स्तम्भ नैतिक नहीं होंगे वहाँ सभी संस्थाएं पतन की ओर अग्रसर होगी।

आधुनिक सभ्यता और संस्कृति पतन की उस सीमा पर पहुँच गई है जहाँ साध्य और साधन की पवित्रता का कोई अर्थ नही रह गया है। व्यक्ति, संस्था या समाज का मूल लक्ष्य धन, सत्ता और भोग यहीं रह गया है। इसका परिणाम है द्वेष, हिंसा, अत्याचार, अनाचार अर्थात् मानवता का नाश। सामाजिक, आर्थिक, राजनीति और धार्मिक सभी क्षेत्रों में असत्य, स्वार्थ, हिंसा, द्वेष और भोग विलास का वातावरण है। सम्पूर्ण समाज नैतिक पतन की चरम सीमा पर पहुँच गया है। संसार विनाश के कगार पर खड़ा है। अतः मानवता को पतन और विनाश से बचाने के लिये आज ऐसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक दर्शन की आवश्यकता है जो सत्य, अहिंसा, त्याग, प्रेम, सद्भाव जैसे नैतिक नियमों पर आधारित हो। अन्यथा मानवता के पतन और विनाश को रोकना असम्भव है। अतः

आज गांधी विचार दर्शन के नैतिक आधारों को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है। उनके विचारों के आधार आज सर्वाधिक प्रासंगिक है। क्योंकि वे सत्य और अहिंसा जैसे नैतिक मूल्यों पर आधारित है।

ग्रन्थानुक्रमणिका :

1. सर्वोदय (रस्किन के अन्टू दिस लास्ट के आधार) गांधीजी– न.प्र.म.अ. 1960
2. सत्य के प्रयोग – गांधीजी – न.जी.प्र. अहमदाबाद– 1957
3. गांधी साहित्य – धर्मनीति – 5 (संग्रह) स.सा.म.नं., दिल्ली–2 1967
4. खादी क्यों और कैसे – गांधीजी – सम्पा. भारतनकुमारप्पा न.प्र.म.अ. 1957
5. मेरे सपनो का भारत – गांधीजी – सम्पा. सिद्धराज ढढ्ढा. स.से.स. वाराणसी–3, 1969
6. ग्राम स्वराज्य – गांधीजी, संग्राहक – हरिप्रसाद व्यास– न.प्र.म.अ. सम्पा. एम.वी.राय– 1963
7. महात्मा गांधी–एक मार्क्सवादी परिचर्चा–सम्पा. एम.वी.राव पीपुल्स प0 हाऊस–दिल्ली 1971
8. नयी तालीम की ओर – गांधीजी सम्पा. भा. कुमारप्पा, न.प्र.म.अ. 1956
9. अहिंसक समाजवाद की ओर – गांधीजी, भा. कुमारप्पा – न.प्र.म.अ. 1955
10. वर्ण व्यवस्था – गांधीजी – अनुवादक – रामनारायण चौधरी, न.प्र.म.अ. 1956
11. ग्राम सेवा – गांधीजी – स.सा.म.प्र. 1969

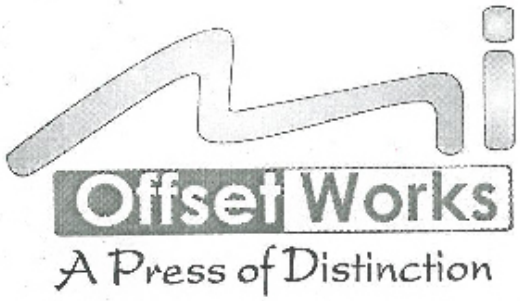

Offset Works

A Press of Distinction

9893086017
9993673675
8085556284

एम. आई. आफसेट वर्क्स

सभी प्रकार के मल्टीकलर पोस्टर, पम्पलेट,
ब्रोशर, बैनर, दैनिक/साप्ताहिक समाचार
पत्रों एवं मासिक पत्रिकाओं
की आफसेट मशीन द्वारा
छपाई उचित दामों पर की जाती है।

एक बार अवश्य पधारें

कार्यालय 105, बजाज काम्पलेक्स, चिकलोद रोड, जहांगीराबाद, भोपाल
प्रधान कार्यालय : 91, रशीदिया स्कूल के पास, बरखेड़ी, भोपाल
mioffset@yahoo.com, mioffset@gmail.com

TAKSHSHILA COLLEGE

SINCE 1996

Gram - Jhirniya, Post-Mugalia Hat, Parwaliya Sadak, NH-12, Bicara Road, Bhopal

Recognised by NCTE New Delhi, Govt. of Madhya Pradesh & Affiliated to Barkatullah University, Bhopal, M.P. Board of Sec. Education (M.P.)

Admission Through Online Counseling

Courses Offered

Under Graduate Programs

- **B.Com.** (Plain, Computers, Tax Procedure & Practice)
- **B.Sc.** (Mathematics, I.T., CS, Electronics, Chemistry, Physics, Zoology, Botany, Microbiology, Bio-tech)
- **B.C.A.** (Computer Application)
- **B.A.** (History, Economics, Political Science, Hindi/English Literature, Sociology)
- **B.B.A.**

Post Graduate Programs

- **M.Sc.** (Computer Science, Chemistry)
- **M.Com.** (Tax, Management)
- **M.C.M.**
- **P.G.D.C.A.**

B.Ed., D.Ed./D.El.Ed.

Facility

- Govt. Scholarship facility available.
- Bilingual Teaching Faculty (Hindi, English).
- Well Experience & Qualified staff.
- College Bus facility.
- Well Equipped Laboratory of all practical subject.
- Internet & Wi-Fi Campus.
- Huge Digital Library.
- Training & Placement Cell.
- Canteen facility.
- Personality development classes.
- Indoor and Outdoor Games facility.

College level Scholarship for Deserving Students

M.P. Online Kiosk Facility Available

Admission Helpline No. : 9893014415, 9893421526, 7771049449

तक्षशिला कॉलेज

SINCE 1996

ग्राम झिरनिया, पोस्ट-मुगालिया हाट, परवलिया सड़क, एनएच-12, ब्यावरा रोड़, भोपाल

(राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली एवं म.प्र. शासन से मान्यता प्राप्त तथा बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल से संबद्ध)

Courses Offered

Under Graduate Programs

- **B.Com.** (Plain, Computers, Tax Procedure & Practice)
- **B.Sc.** (Mathematics, I.T., CS, Electronics, Chemistry, Physics, Zoology, Botany, Microbiology, Bio-tech)
- **B.C.A.** (Computer Application)
- **B.A.** (History, Economics, Political Science, Hindi/English Literature, Sociology)
- **B.B.A.**

Post Graduate Programs

- **M.Sc.** (Computer Science, Chemistry)
- **M.Com.** (Tax, Management)
- **M.C.M.**
- **P.G.D.C.A.**

B.Ed., D.Ed./D.El.Ed.

1995 से लगातार

विगत 19 वर्षों से उच्च शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिष्ठित अग्रणीसंस्थान

रचना नगर भोपाल से ग्राम झिरनिया, पोस्ट-मुगालिया हाट, परवलिया सड़क, एनएच-12, ब्यावरा रोड़, भोपाल नवीन एवं विशाल भवन में स्थानांतरित

प्रवेश Online Counseling

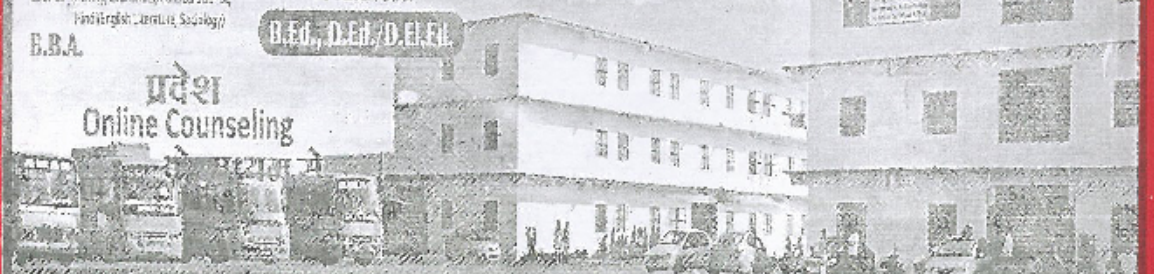

Admission Helpline No. : 9893014415, 9893421526, 7771049449